संस्कृत स्वयं-शिक्षक

द्वितीय वा तृतीय भाग

लेखक

श्रीपाद दामोदर सातव

[वेदों के भाष्यकार वा संस्कृत के अन्य वीसिय

राजपाल एण्ड सन्ज़

कश्मीरी गेट, दिल्ली-६

मूल्य : तीन रुपया

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६
द्वारा प्रकाशित और युगान्तर प्रेस,
डफरिन पुल, दिल्ली द्वारा मुद्रित

मूलाक्षर-व्यवस्था

१—स्वर

अ आ, इ ई, उ ऊ, ऋ ॠ, ऌ ॡ, ए ऐ,
ओ औ, अं अः

१—कण्ठ—स्थान के स्वर—अ आ आ ३
२—तालु— ,, ,, —इ ई ई ३
३—ओष्ठ— ,, ,, —उ ऊ ऊ ३
४—मूर्धा— ,, ,, —ऋ ॠ ॠ ३
५—दन्त्य—,, ,, —ऌ (*ॡ) ऌ ३
६—कण्ठतालु,, ,, —ए ऐ
७—कण्ठोष्ठ ,, ,, —ओ औ
८—अनुस्वार (नासिका-स्थान) अं, इं, उं, एं, इत्यादि
९—विसर्ग (कण्ठ-स्थान) अः, इः, उः, अः इत्यादि
१०—ह्रस्व स्वर अ, इ, उ, ऋ, ऌ
११—दीर्घ स्वर आ, ई, ऊ, ॠ, (*ॡ)
१२—प्लुत स्वर आ ३, ई ३, ऊ ३, ऋ ३, ऌ ३,

---

* ऌ स्वर के लिये दीर्घ नहीं है। परन्तु ध्यान में रखना चाहिये कि विवृत-प्रयत्न ऌ वर्ण के दीर्घत्व नहीं है, इषत् स्पृष्टप्रयत्न ऌ वर्ण के लिये दीर्घत्व है। प्रयत्नों का विचार आगे के विभागों में होगा।

ह्रस्व स्वर के उच्चारण की लम्बाई एक मात्रा, दीर्घ स्वर के उच्चारण की दो मात्रा, प्लुत स्वर के उच्चारण की तीन मात्रा होती है। अर्थात् जितना समय ह्रस्व के लिये लगता है, उससे दुगना दीर्घ के लिए तथा तीन गुना प्लुत के लिये लगता है। दूर से किसीको पुकारने के समय अन्तिम स्वर प्लुत होता है। जैसा 'हे धनंजया३ अत्र आगच्छ' (हे धनजया३ यहाँ आ)।

इस वाक्य में 'धनंजय' के यकार में जो आकार है वह प्लुत है, और उसकी उच्चारण की लम्बाई तीन गुना है। शहरों में मार्ग पर तथा स्टेशन आदि पर चीजें बेचने वाले अपनी चीजों के विषय में प्लुत स्वर से पुकारते हैं, जैसेः—

१. ख···टा···इ···याँ···
२. हि···न्दू···पा···नी···
३. चा···य···ग···र···म···

इसी प्रकार अन्य सैकड़ों स्थानों पर प्लुत स्वर का श्रवण होता है। वेदों के मन्त्रों में जहां ३ (तीन) संख्या दी हुई रहती है, उसके पूर्व का स्वर प्लुत बोला जाता है। मुरगी 'कु१ कू२ कू३' ऐसी आवाज देती है; उसमें पहला 'उ' ह्रस्व, दूसरा दीर्घ तथा तीसरा प्लुत होता है।

इन स्वरों के भेदों के सिवाय 'उदात्त, अनुदात्त, स्वरित' ऐसे प्रकार स्वर के तीन भेद हैं जो केवल वेद में आते हैं। इनका वर्णन आगे के विभागों में होगा। संकेतार्थ अ, अ, अ॑, स्वर उदात्त, अनुदात्त, तथा स्वरित प्रकार वेद में आते हैं।

(१३) गुण स्वर—अ, ए, ओ, अर्, अल्
(१४) वृद्धि स्वर—आ, ऐ, औ, आर्, आल्

उक्त गुण-वृद्धि क्रम से अ, इ, उ, ऋ, लृ, इन स्वरों को समझना चाहिये । इस प्रकार स्वरों का सामान्य विचार समाप्त हुआ ।

२—व्यञ्जन

(१) कण्ठ-स्थान—कवर्ग—क, ख, ग, घ, ङ
(२) तालु-स्थान—चवर्ग—च, छ, ज, झ, ञ
(३) मूर्धा-स्थान—टवर्ग—ट, ठ, ड, ढ, ण
(४) दन्त-स्थान—तवर्ग—त, थ, द, ध, न
(५) ओष्ठ-स्थान—पवर्ग—प, फ, ब, भ, म

इन पच्चीस व्यञ्जनों को 'स्पर्श वर्ण' कहते हैं ।

(६) अन्तःस्थ व्यञ्जन—य (तालु-स्थान); व (दन्त तथा ओष्ठ-स्थान); र (मूर्धा-स्थान); ल (दन्त-स्थान) ।

इन चार वर्णों को 'अन्तःस्थ व्यञ्जन' कहते हैं ।

(७) ऊष्म व्यञ्जन—श (तालव्य); ष (मूर्धन्य); स (दन्त्य); ह (कण्ठ्य) ।

इन चार वर्णों को 'ऊष्म व्यञ्जन' कहते हैं ।

(८) मृदु अथवा घोष व्यञ्जन—ग, घ, ङ, ज, झ, ञ
ड, ढ, ण, द, ध, न
ब, भ, म, य, र, ल, व, ह

इन बीस व्यञ्जनों को मृदु व्यञ्जन कहते हैं, क्योंकि इनका उच्चारण मृदु अर्थात् नरम, कोमल होता है । (इनकी श्रुति स्पष्टतर अनुभव होने से इन्हें 'घोष' भी कहते हैं) ।

(९) कठोर (अथवा अघोष) व्यञ्जन—क, ख, च, छ, ट, ठ,
त, थ, प, फ, श, स ।

इन तेरह व्यञ्जनों को कठोर व्यञ्जन बोलते हैं, क्योंकि इनका उच्चारण कठोर अर्थात् सख्त होता है। (इनकी श्रुति अस्पष्टतर अनुभव होने से इन्हें 'अघोष' भी कहते हैं।)

(१०) अल्प-प्राण व्यञ्जन—क, ग, ङ, च, ज, ञ
ट, ड, ण, त, द, न
प, ब, म, य, र, ल, व

इन उन्नीस व्यञ्जनों को अल्प-प्राण कहते हैं, क्योंकि इनका उच्चारण करने के समय मुख में श्वास (हवा) पर ज़ोर नहीं दिया जाता।

(११) महा-प्राण व्यञ्जन—ख, घ, छ, झ
ठ, ढ, थ, ध
फ, भ, श, ष, स, ह

इन चौदह व्यञ्जनों को महा-प्राण कहते हैं, क्योंकि इनके उच्चारण के समय मुख में हवा पर बहुत दबाव दिया जाता है।

(१२) अनुनासिक व्यञ्जन—ङ, ञ, ण, न, म

ये पांच अनुनासिक कहलाते हैं, क्योंकि इनका उच्चारण नाक के द्वारा होता है। स्थान-व्यवस्थानुसार:—

कण्ठ-नासिका स्थान—ङ
तालु-नासिका ,, —ञ
मूर्धा-नासिका ,, —ण
दन्त-नासिका ,, —न
ओष्ठ-नासिका ,, —म

इस प्रकार व्यञ्जनों की सामान्य व्यवस्था है। इसके अतिरिक्त जो और सूक्ष्म भेद हैं, वे अगले विभागों में बताए जाएँगे।

वर्णों की उत्पत्ति

मुख के अन्दर स्थान-स्थान पर हवा को दबाने से भिन्न-भिन्न वर्णों का उच्चारण होता है। मुख के अन्दर पाँच विभाग हैं, (प्रथम भाग में जो चित्र दिया है वह देखिए) जिनको स्थान कहते हैं। इन पांच विभागों में से प्रत्येक विभाग में एक-एक स्वर उत्पन्न होता है। स्वर उसको कहते हैं, जो एक ही आवाज में बहुत देर तक जा सके, जैसे—

अ······	आ······
इ······	ई······
उ······	ऊ······
ऋ······	ॠ······
ऌ······	ॡ······

'ऋ-ऌ' स्वरों के उच्चारण के विषय में प्रथम भाग में जो सूचना दी हुई है, उसको स्मरण रखना चाहिये। उत्तर भारत के लोग इसका उच्चारण 'री' तथा 'ल्री' ऐसा करते हैं, यह बहुत ही अशुद्ध है! कभी ऐसा उच्चारण नहीं करना चाहिए। 'री' में 'र ई' ऐसे दो वर्ण मूर्धा और तालु स्थान के हैं। 'ऋ' यह केवल मूर्धा-स्थान का शुद्ध स्वर है। केवल मूर्धा-स्थान के शुद्ध स्वर का उच्चारण मूर्धा और तालु स्थान दो वर्ण मिलाकर करना अशुद्ध है और उच्चारण की दृष्टि से बड़ी भारी गलती है।

'ऋ' का उच्चारण :—धर्म शब्द बहुत लम्बा बोला जाय और ध और म के बीच का रकार बहुत बार बोला जाय (समझने के लिए) तो उसमें से एक रकार के आधे के बराबर है। इस प्रकार जो 'ऋ' बोला जा सकता है, वह एक-जैसा लम्बा बोला जा सकता

है। छोटे लड़के आनन्द से अपनी जिह्वा को हिलाकर इस ऋकार को बोलते हैं।

जो लोग इसका उच्चारण 'री' करते हैं उनको ध्यान देना चाहिये कि 'री' लम्बी बोलने पर केवल 'ई' लम्बी रहती है। जो कि तालु स्थान की है। इस कारण 'ऋ' का यह 'री' उच्चारण सर्वथैव अशुद्ध है।

'लृ'कार का 'लरी' उच्चारण भी उक्त कारणों से अशुद्ध है। उत्तरीय लोगों को चाहिए कि वे इन दो स्वरों का शुद्ध उच्चारण करें। अस्तु।

पूर्व स्थान में कहा है कि जिनका लम्बा उच्चारण हो सकता है, वे स्वर कहलाते हैं। गवैय्ये लोग स्वरों को ही अलाप सकते हैं, व्यञ्जनों को नहीं, क्योंकि व्यञ्जनों का लम्बा उच्चारण नहीं होता। इन पांच स्वरों में भी 'अ इ उ' ये तीन स्वर अखंडित, पूर्ण हैं: और 'ऋ, लृ' ये खंडित स्वर हैं। पाठकगण इनके उच्चारण की ओर ध्यान देंगे तो उनको पता लगेगा कि इनको खंडित तथा अखंडित क्यों कहते हैं। जिनका उच्चारण एक-रस नहीं होता, उनको खण्डित बोलते हैं।

इन पांच स्वरों से व्यञ्जनों की उत्पत्ति हुई है, क्रमशः—

मूल स्वर

अ   इ   ऋ   लृ   उ

इनको दबाकर उच्चारण करते-करते एकदम उच्चारण बन्द करने से क्रमशः निम्न व्यञ्जन बनते हैं।

ह्   य   र   ल   व

इनका मुख में उच्चारण होने के समय हवा के लिये कोई

रुकावट नहीं होती। जहां इनका उच्चारण होता है, उसी स्थान पर पहले हवा का आघात करके, फिर उक्त व्यञ्जनों का उच्चारण करने से निम्न व्यञ्जन वनते हैं:—

घ   झ   ढ   ध   भ

इनको जोर से वोला जाता है। इनके ऊपर जो वल—जोर होता है, उस जोर को कम करके यही वर्ण वोले जाएं तो निम्न वर्ण वनते हैं:—

ग   ज   ड   भ   द

इनका जहां उच्चारण होता है, उसी स्थान के थोड़े से ऊपर के भाग में विशेष वल न देने से निम्न वर्ण वनते हैं:—

क   च   ट   त   प

इनका हकार के साथ जोरदार उच्चारण करने से निम्न वर्ण वनते हैं:—

ख   छ   ठ   थ   फ

अनुस्वार-पूर्वक इनका उच्चारण करने से इन्हीं के अनुनासिक वनते हैं:—

अङ्क   पञ्च   घण्टा   इन्द्र   कम्वल

सकार का तालु, मूर्धा तथा दन्त स्थान में उच्चारण किया जाय तो क्रम से, श, ष, स, ऐसा उच्चारण होता है। 'ल' का मूर्धा स्थान में उच्चारण करने से 'ळ' वनता है।

इस प्रकार वर्णों की उत्पत्ति होती है। इस व्यवस्था से वर्णों के शुद्ध उच्चारण का भी पता लग सकता है।

ऊपर जहां-जहां व्यञ्जन लिखे हैं वे सब 'क, ख, ग' जैसे—अकारान्त लिखे हैं। इनके उच्चारण करने में सुगमता होती है।

वास्तव में वे 'क्, ख्, ग्' ऐसे—अकार रहित हैं, इतनी बात पाठकों के ध्यान धरने योग्य है।

वर्णों के ऊपर बहुत विचार संस्कृत में हुआ है। उसमें से एक अंश भी यहां नहीं दिया। हमने जो कुछ थोड़ा-सा दिया है उससे पाठकों की समझ में आ जायगा कि संस्कृत की वर्ण-व्यवस्था बहुत सोचकर बनाई गई है, अन्य भाषाओं की तरह ऊटपटांग नहीं है।

संस्कृत में कोमल पदार्थों के नाम कोमल वर्णों में पाये जाते हैं, जैसे—कमल, जल, अन्न आदि।

कठोर पदार्थों के नामों में कठोर वर्ण पाये जायेंगे, जैसे—खर प्रस्तर, गर्दभ, खड्ग आदि।

कठोर प्रसंग के लिये जो शब्द होंगे, उनमें भी कठोर वर्ण पाये जाएंगे, जैसे—युद्ध, विद्रावित भ्रष्ट, शुष्क, आदि।

आनन्द के प्रसंगों के लिए जो शब्द होंगे, उनमें कोमल अक्षर पायें जावेंगे, जैसे—आनन्द, ममता, सुमन, दया, आदि।

इस प्रकार बहुत लिखा जा सकता है। परन्तु विस्तार-भय से यहां इतना ही पर्याप्त है। यह वर्णन यहां इसलिए लिखा है कि यदि पाठक भी इस प्रकार सोचते रहेंगे, तो उनको आगे जाकर बड़ा लाभ होगा, तथा प्रसंग के अनुसार शब्दों को प्रयोग में लाकर संस्कृत के वाक्यों में वे विशेष गौरव ला सकेंगे।

संस्कृत स्वयं-शिक्षक

द्वितीय भाग

पाठ एक

जिन पाठकों ने 'संस्कृत स्वयं-शिक्षक' का प्रथम भाग अच्छी प्रकार पढ़ा है, और उसमें जो वाक्य तथा नियम दिये हुए हैं, उनको ठीक-ठीक याद किया है, तथा जिन्होंने प्रथम भाग के परीक्षा-प्रश्नों का उत्तर ठीक-ठीक दिया है—अर्थात् वे परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं, उनको ही द्वितीय भाग के अभ्यास से लाभ होगा। जो प्रथम भाग की पढ़ाई ठीक प्रकार न कर द्वितीय भाग को प्रारम्भ करेंगे उनकी पढ़ाई आगे जाकर ठीक-ठीक नहीं होगी, तथा वे लोग अपनी संस्कृत में उन्नति नहीं कर सकेंगे। इसलिए पाठकों से प्रार्थना है कि वे किसी अवस्था में भी शीघ्रता न करें, तथा पहली पढ़ाई कच्ची रखकर आगे बढ़ने का यत्न न करें।

संस्कृत भाषा उन लोगों के लिए सुगम होगी जो 'स्वयं-शिक्षक' की शैली के साथ-साथ अपनी पढ़ाई करेंगे। परन्तु जो शीघ्रता करेंगे और कच्ची भूमि पर मकान बनाएंगे, उनको आगे बहुत

कठिनता होगी। इसलिए पाठकों को उचित है कि वे प्रथम तथा द्वितीय, भागों में दिए हुए किसी विषय को कच्चा न रखें और वार-वार उसको याद करके सव विषयों की जागृति रखने का सदैव यत्न करें।

जिन पाठकों ने 'स्वयं-शिक्षक' का प्रथम भाग पढ़ा होगा, उनके मन में इस शिक्षा-प्रणाली की सुगमता स्पष्ट हो गई होगी। इस दूसरी पुस्तक से पाठकों की योग्यता निस्सन्देह वहुत वढ़ेगी। इस पुस्तक में ऐसी व्यवस्था की हुई है कि इसके पढ़ने से पाठक न केवल संस्कृत में अच्छी प्रकार वात-चीत करने में समर्थ होंगे, अपितु वे रामायण, महाभारत तथा नाटक आदि संस्कृत ग्रन्थों के सुगम अध्यायों को स्वयं पढ़ सकेंगे। इसलिए प्रार्थना है कि पाठक हर एक पाठ के प्रत्येक नियम तथा वाक्य की ओर विशेष ध्यान दें।

प्रथम पुस्तक में शव्दों की सात विभक्तियों का उल्लेख किया हुआ है। परन्तु उस पुस्तक में केवल एक ही वचन के रूप दिये हैं। अव इस पुस्तक में तीनों वचनों के रूप दिए जाते हैं।

१ नियम—संस्कृत में तीन वचन हैं:—[१] एकवचन [२] द्विवचन तथा [३] वहुवचन। हिंदी भाषा में दो वचन हैं:—[१] एकवचन तथा [२] वहु अथवा अनेक वचन।

एक वचन से एक की संख्या का वोध होता है जैसे:—एकः आम्रः [एक आम]।

द्विवचन से दो की संख्या का वोध होता है, जैसे:—द्वौ आम्रौ [दो आम]।

वहुवचन से तीन या तीन से अधिक (अर्थात् दो से अधिक) की संख्या का वोध होता है, जैसे:—त्रयः आम्राः [तीन आम], पंच आम्राः [पाँच आम], दश आम्राः [दस आम]।

हिन्दी भाषा में दो की संख्या बताने वाला कोई वचन नहीं; परन्तु संस्कृत में दो की संख्या बताने वाला 'द्विवचन' है। संस्कृत में, सर्वत्र दो की संख्या के लिए द्विवचन का ही प्रयोग करना आवश्यक है। यह बात पाठकों को अवश्य ध्यान में रखनी चाहिए। अब सातों विभक्तियों, तीनों वचनों में, शब्दों के रूप नीचे देते हैं।

अकारान्त पुल्लिगी 'देव' शब्द के रूप

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा (१) देवः	देवौ (÷)	देवाः (*)
द्वितीया (२) देवम्	देवौ (÷)	देवान्
तृतीया (३) देवेन	देवाभ्याम्	देवैः
चतुर्थी (४) देवाय	देवाभ्याम् (+)	देवेभ्यः (=)
पंचमी (५) देवात्	देवाभ्याम् (+)	देवेभ्यः (=)
षष्ठी (६) देवस्य	देवयोः (×)	देवानाम्
सप्तमी (७) देवे	देवयोः (×)	देवेषु
सम्बोधन (हे) देव	(हे) देवौ (÷)	(हे) देवाः (*)

इसी प्रकार सब अकारान्त पुल्लिगी शब्दों के रूप होते हैं। पाठकों ने ध्यान से देखा होगा कि विभाक्तियों में कई रूप एक-जैसे होते हैं। इस शब्द में जो-जो रूप एक-जैसे हैं, उनके आगे कोष्ठ में एक-सा चिह्न किया है, जैसे—'÷, ×, *' ये चिह्न हैं जो उक्त प्रकार के समान रूपों पर लगाये हैं। अगर पाठक इन समान रूपों को ध्यान में रखेंगे तो कण्ठ करने का उनका परिश्रम बच जायगा। यह समान रूप-शैली ध्यान में आने के लिए 'काल' शब्द के रूप नीचे दिए जाते हैं, और जो समान रूप हैं, वहाँ कोई रूप न देकर (,,) चिह्न मात्र दिया गया है।

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा (१) कालः	कालौ	कालाः

सम्बोधन (हे) काल	(हे) कालौ	(हे) कालाः
द्वितीया (२) कालम्	कालौ	कालान्
तृतीया (३) कालेन	कालाभ्याम्	कालैः
चतुर्थी (४) कालाय	,,	कलेभ्यः
पंचमी (५) कालात्	,,	,,
षष्ठी (६) कालस्य	कालयोः	कालानाम्
सप्तमी (७) काले	,,	कालेषु

उक्त रूप देने के समय सम्बोधन के रूप प्रथमा विभक्ति के सदृश होने के कारण साथ दिये हुए हैं। इन रूपों को देखने से पता लगेगा कि कौन-कौन-सी विभक्तियों के कौन-कौन-से रूप समान होते हैं।

अब पाठकों को उचित है कि वे इनके रूपों को ध्यान में रखे या कण्ठ करें, क्योंकि इसी शब्द के समान सब अकारान्त पुल्लिंग शब्दों के रूप होंगे।

धनञ्जय, देवदत्त, यज्ञदत्त, नारायण, कृष्ण, नाग, भद्रसेन, मृत्युञ्जय इत्यादि अकारान्त पुल्लिगी शब्द ठीक उक्त प्रकार से चलते हैं

(१) जिन अकारान्त पुल्लिगी शब्दों के अन्दर 'र' अथवा 'ष' वर्ण हुआ करता है, उन शब्दों की तृतीया विभक्ति का एकवचन तथा षष्ठी विभक्ति का बहुवचन करने में 'न' को 'ण' बनाना पड़ता है जैसे:—

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
१ रामः	रामौ	रामः
२ रामम्	,,	रामान्
३ रामेण	रामाभ्याम्	रामैः
४ रामाय	,,	रामेभ्यः

५ रामात्	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
६. रामस्य	रामयोः	रामाणाम्
७. रामे	„	„

सम्बोधन के रूप पूर्ववत् पाठक बना सकेंगे। इस शब्द में तृतीया का एकवचन **'रामेण'** तथा षष्ठी का बहुवचन **'रामाणाम्'** इन दो रूपों में नकार के स्थान पर णकार हुआ है। इसी प्रकार निम्नलिखित शब्दों के रूप होते हैं :—

पुरुष, नृप, नर, रामस्वरूप, सर्प, कर, रुद्र, इन्द्र, व्याघ्र, गर्भ इत्यादि अकारान्त पुल्लिंगी शब्दों के रूप उक्त प्रकार से बनते हैं।

परन्तु कई ऐसे शब्द हैं कि जिनमें 'र' अथवा 'ष' आने पर भी नकार का णकार नहीं बनता। जैसे—

कृष्णेन। कृष्णानाम्।
कर्दमेन। कर्दमानाम्।
नर्तनेन। नर्तनानाम्।
इस विषय में नियम ये हैं—

(२) नियम—जिस शब्द में र अथवा ष हो, और उसके परे 'न' आ जाय, तो उस न का ण बनता है, जैसे—

कृष्ण, तृष्णा, विष्णु, इत्यादि शब्दों में षकार के बाद नकार आने से नकार का णकार बन गया है।

(सूचना—पदान्त के नकार का णकार नहीं बनता, जैसे रामान् नरान्, इत्यादि।)

(३) नियम—'र' अथवा 'ष' और 'न' इनके बीच में कोई स्वर, ह, य, व, र, कवर्ग, पवर्ग, अनुस्वार इन वर्णों में से एक अथवा अनेक वर्ण आने पर भी नकार का णकार हो जाता है। जैसे :—

रामेण, पुरुषेण, नरेण इत्यादि शब्दों में इस नियम के अनुसार नकार का णकार बना है। इन दो नियमों को अधिक स्पष्ट करने के लिए निम्न प्रकार लिखते हैं—

'र' के पश्चात् 'न' आने से 'न' का 'ण' बन जाता है।
'ष' " " 'न' " 'न' " 'ण' बन जाता है।

'र' अथवा 'ष' तथा 'न'	के बीच में इतने वर्ण आने पर भी अ आ इ ई उ ऊ ऋ ऌ ए ऐ ओ औ अं ह य व र क ख ग घ ङ प फ ब भ म	'न' का 'ण' बन जाता है।

र्+[आ+म्+ए]न्+अ=रामेन=रामेण। इस शब्द में र् और न् के मध्य में 'आ+म्+ए' ये तीन वर्ण आये हैं। इस प्रकार अन्य शब्दों के विषय में भी जानना चाहिये।

क्+ऋ+ष्+[ण]+ए+न्+अ=कृष्णेन। इस शब्द में षकार और नकार के बीच में 'ण' आने से नकार का णकार नहीं हुआ, क्योंकि जो वर्ण बीच में होने पर भी णकार बनता है, उन वर्णों में 'ण' की गणना नहीं हुई है। इसी कारण 'मर्त्येन' शब्द में नकार का णकार नहीं होता है, देखिये :—

म्+र्+[त्]+य्+ए+न्+अ=मर्त्येन—इसमें अनिष्ट तकार बीच में है, और उसके होने से नकार का णकार नहीं बनता है।

पाठकों को उचित है कि वे इन नियमों को बार-बार पढ़कर अच्छी प्रकार समझ लेवें, ताकि भ्रम न पड़े।

वाक्य

१ मृगः अरण्ये मृतः=हिरण वन में मर गया।

२ वालकेन क्रीड़ा त्यक्ता=वालक ने खेल छोड़ा।

३ मनुष्येण नगरं दृष्टम्=मनुष्य ने शहर देखा।

४ जनैः रामस्य चरित्रं श्रुतम्=लोगों ने राम का चरित्र सुना।

५ वालकैः दुग्धं पीतम्=वालकों ने दूध पिया।

६ सर्पेण मूषकः हतः=सांप ने चूहा मारा।

७ मनुष्यैः द्रव्यम् लब्धम्=मनुष्यों ने धन प्राप्त किया।

८ पुष्पैः शरीरं भूषितम्=फूलों से शरीर सजा।

९ आचार्यैः पुस्तकं पाठितम्=अध्यापकों ने पुस्तक पढ़ाया।

१० वृक्षेभ्यः फलानि पतितानि=वृक्षों से फल गिरे।

११ मया इष्टं फलं प्राप्तम्=मैंने मन चाहा फल प्राप्त किया।

१२ स ब्राह्मणेभ्यः दक्षिणां ददाति=वह ब्राह्मणों के लिये दक्षिणा देता है।

१३ विश्वामित्रः अयोध्यां आगतः=विश्वामित्र अयोध्या आ गया।

१४ सूर्यः अस्तं गतः=सूर्य अस्त हो गया।

१५ दुःखेन हृदयं भिन्नम्=दुःख से हृदय फट गया।

१६ आकाशे चन्द्रः उदितः=आकाश में चन्द्र उदय हुआ।

इन वाक्यों में जो-जो शब्द हैं, उनके अर्थ भाषा के वाक्यों से जाने जा सकते हैं, इसलिये उनके अलग अर्थ नहीं दिये गये।

पाठः दो

शब्द—पुल्लिंगी

मूषकः=चूहा। काकः=कौवा। शावकः=बच्चा, लड़का नीवारकरण:=धान का करण, सूजी का दाना। मार्जारः=बिडाल बिल्ला। कुक्कुरः=कुत्ता। व्याघ्रः=शेर। महर्षिः=बड़ा ऋषि क्रोडः=गोद, छाती।

नपुंसकलिंगी

तपोवनम्=तप करने का स्थान। स्वरूप=अपनी असलियत स्वरूपाख्यानम्=अपने रूप का आख्यान। आख्यानम्=कथा चरित्र। संनिधानम्=समीप।

विशेषरण

भ्रष्ट=गिरा हुआ। अकीर्तिकर=बदनामी करने वाला। दृष्ट=देखा हुआ। वर्धिता=पाला, बढ़ाया। सव्यथम्=दुःख के साथ वर्धितम्=पाला, बढ़ाया।

क्रियापद

धावति=दौड़ता है। विवेश=घुस गया हुआ। संवर्धित=फला हुआ। वर्धिता=पाला, बढ़ाया॥ पलायते=भागता है। वदन्ति=बोलते हैं। पलायिष्यते=भागेगा। भव=हो, बन जा। बिभेषि=डरता है (तू)। प्रविवेश=घुस गया। बिभेति=डरता है। (वह)। आलोकयति=देखता है (वह)। बिभेमि=डरता हूँ (मैं)। आलोकयामि=देखता हूँ (मैं)।

धातु साधित

खादितुम्=खाने के लिये। आलोक्य=देखकर। हत्वा=मारकर। जीवितव्यम्=जीने योग्य (विशेषण) जीना चाहिए। (क्रियापद)

स्त्रीलिंग

कीर्तिः=यश, नाम । व्याघ्रता=शेरपन । अकीर्तिः=बदनामी ।

इतर (अ-लिंगी अथवा अव्यय)

पश्चात्=पीछे से । इदम्=यह । यावत्=जब तक । द्रुतम् =सत्वर वा जल्दी । तावत्=तब तक । विलम्बितम्= देरी से ।

विशेषणों का उपयोग और उनके लिंग

दृष्टं तपोवनम् । वर्धितः वृक्षः । दृष्टा नगरी । वर्धिता लेखमाला । हृष्टः मनुष्यः । वर्धितम् कमलम् । भ्रष्टः पुरुषः । अकीर्तिकरः उद्यमः । भ्रष्टा स्त्री । अकीर्तिकरा कथा । भ्रष्टं पात्रम् । अकीर्तिकरम् आख्यानम् । पालितः पुत्रः । रक्षितः बालकः । पालिता पुत्रिका । रक्षिता पुष्पमाला । पालितं गृहम् । रक्षितं जलम् । शुद्धः विचारः । पवित्रः मन्त्रः । शुद्धा बुद्धिः । पवित्रा स्त्री । शुद्धं चरित्रम् । पवित्रं पात्रम् । गतः सूर्यः । आगतः जनः । गता रात्रिः । आगता अध्यापिका । गतं नक्षत्रम् । आगतं पुस्तकम् । प्राप्तः ग्रीष्मकालः । भक्षितः मोदकः । प्राप्तं यौवनम् । पुष्पिता वाटिका । प्राप्तं वार्धकम् । भक्षितं फलम् ।

पूर्वोक्त शब्दों में 'मूषकः, शावकः, काकः, बिडालः, मार्जारः, कुक्कुरः, व्याघ्रः' इत्यादि अकारान्त पुल्लिंग शब्द हैं और उनके रूप पूर्वोक्त देव, राम शब्दों के समान होते हैं। पाठकों को चाहिए कि वे इन शब्दों के सब रूप लिखें और उनका उक्त रूपों के साथ मिलान करके ठीक करें। 'भ्रष्टः, हृष्टः, संवर्धितः, उद्यमः,' इत्यादि शब्द भी अकारान्त पुंल्लिंगी विशेषण होने से 'देव', 'राम' की ही तरह चलते हैं।

का स्वयं कोई लिंग नहीं होता, परन्तु वे विशेष्य के लिंग के अनुसार चलते हैं— इत्यादि वर्णन 'संस्कृत स्वयं-शिक्षक' के प्रथम भाग के ३६ पाठ में देख लेना।

वाक्य

संस्कृत	भाषा
(१) अस्ति गंगातीरे हरिद्वारं नाम नगरम्।	है गंगा के किनारे पर हरिद्वार नामक शहर।
(२) अस्ति महाराष्ट्रे मुम्बापुरी नाम नगरी।	है महाराष्ट्र में बम्बई नामक शहर।
(३) बिडालः मूषकं खादति।	बिल्ला चूहे को खाता है।
(४) व्याघ्रः वृषभं खादितुं धावति।	शेर बैल को खाने के लिये दौड़ता है।
(५) बिडालः कुक्कुरं दृष्ट्वा पलायते।	बिल्ला कुत्ते को देखकर भागता है।
(६) स पुरुषः व्याघ्रं दृष्ट्वा बिभेति पलायते च।	वह पुरुष शेर को देखकर डरता और भागता है।
(७) ऋषिणा मूषकः व्याघ्रतां नीतः।	ऋषि ने चूहे को व्याघ्र बना दिया।
(८) मुनिना व्याघ्रः मूषकत्वं नीतः।	मुनि ने व्याघ्र को चूहा बना दिया।
(९) स मुनिः अचिन्तयत्।	वह मुनि सोचने लगा।
(१०) स पुरुषः सकष्टः अचिन्तयत्।	वह पुरुष कष्ट के साथ सोचने लगा।

उक्त वाक्यों में पाठकों के लिये कई बातें ध्यान में रखने योग्य हैं—

संस्कृत में कथा के आरंभ में 'अस्ति' आदि क्रिया के शब्द वाक्य के प्रारम्भ में आते हैं, जिनका भाषा में वाक्य के अन्त में अर्थ करना होता है, जैसे:—

संस्कृत में—**अस्ति** गौतमस्य तपोवने कपिलो नाम मुनिः।

भाषा में—गौतम के आश्रम में कपिल नामक मुनि है। संस्कृत में प्रथम प्रकार की वाक्य रचना, ललित (अच्छी) समझी जाती है।

नियम—किसी शब्द के साथ 'त्व' अथवा 'ता' यह शब्द जोड़ने से उसका भाव-वाचक बनता है, जैसे:—वृद्ध=बुड्ढा। वृद्धत्वम्=बुड्ढापन। मूषकः=चूहा, मूषकता=चूहापन। पुरुषः=मनुष्य, पुरुषत्वम्=पुरुषपन। पशु=पशु, हैवान; । पशुत्व=पशुता, हैवानपन।

नियम—विशेषण का कोई अपना लिंग नहीं होता। विशेष्य के लिंग के अनुसार ही विशेषणों के लिंग बनते हैं जैसे:—

पुंल्लिंगी	स्त्रीलिंगी	नपुन्सकलिंगी
भ्रष्टः पुरुषः	भ्रष्टा स्त्री	भ्रष्टम् पुष्पम्
हृष्टः पुत्रः	हृष्टा नगरी	हृष्टं पुस्तकम्
संवर्धितः वृक्षः	संवर्धिता कीर्तिः	संवर्धितं ज्ञानम्
सव्यथः व्याघ्रः	सव्यथा नारी	सव्यथं मित्रम्

इसी प्रकार अन्यान्य विशेषणों के सम्बन्ध में भी जानना चाहिये, [इस नियम के विषय में [illegible] २९वां पाठ देखिये]।

अब हितोपदेश नामक ग्रन्थ से एक कथा नीचे देते हैं। पूर्वोक्त शब्द और वाक्य जिन्होंने कण्ठ किये होंगे, वे पाठक इस कथा को अच्छी प्रकार समझ सकते हैं। इसलिये पाठकों को उचित है कि वे भाषा में दिया हुआ अर्थ न देखते हुए, केवल संस्कृत पढ़कर ही अर्थ लगाने का यत्न करें। जब सम्पूर्ण कथा का अर्थ लग जाय, तो सम्पूर्ण पाठ को कण्ठ करें। और पश्चात् भाषा के वाक्य देखकर उसकी संस्कृत बनाने का यत्न करें।

१ मुनिमूषकयोः कथा

(१) अस्ति गौतमस्य महर्षेः तपोवने महातपा नाम मुनिः। तेन आश्रमसंनिधाने मूषकशावकः काकमुखाद् भ्रष्टः दृष्टः।

(२) ततः स स्वभाव-दया-ऽत्मना तेन मुनिना नीवारकणैः संवर्धितः। ततो विडालः तं मूषकं खादितुं धावति।

(३) तं अवलोक्य मूषकः तस्य मुनेः क्रोडं प्रविवेश। ततो मुनिना उक्तम्—"मूषक, त्वं मार्जारो भव।" ततः स मार्जारो जातः।

(४) पश्चात् स विडालः कुक्कुरं दृष्ट्वा पलायते। ततो मुनिना उक्तम्—"कुक्कुराद् बिभेषि, त्वम् एव कुक्कुरो भव।" ततः स कुक्कुरो जातः।

१ ऋषि और चूहे की कथा

(१) गौतम महर्षि के तपोवन में महातपा नामक एक मुनि है। उसने आश्रम के पास चूहे का बच्चा कौवे के मुख से गिरा हुआ देखा।

(२) पश्चात् उस (बच्चे) को स्वाभाविक दया-भाव से उस मुनि ने धान के कणों से पाला, अब (एक) बिल्ला उस चूहे को खाने के लिये दौड़ता है।

(३) उस (बिल्ले) को देखकर चूहा उस मुनि की गोद में आ घुसा। तो मुनि ने कहा—"चूहे, तू बिल्ला बन।" सो वह बिल्ला बन गया।

(४) अब वह बिल्ला कुत्ते को देखकर भागता है। तब मुनि ने कहा—"कुत्ते से (तू) डरता है, तू कुत्ता ही बन जा।" सो वह कुत्ता बन गया।

(५) व्याघ्रता—व्याघ्रस्य भावः व्याघ्रता, व्याघ्रत्वम् इत्यर्थः।
(६) मूषकत्वम्—मूषकस्य भावः।
(७) सव्यथः—व्यथया सहितः सव्यथः, दुःखेन युक्तः इत्यर्थः।
(८) स्वरूपाख्यानम्—स्वस्य रूपं स्वरूपम्, स्वरूपस्य, आख्यानं स्वरूपाख्यानम्=स्वरूपकथा इत्यर्थः

पाठ तीसरा

प्रथम पाठ में अकारान्त पुलिंगी शब्दों के रूप बनते हैं। संस्कृत में आकारान्त पुलिंगी शब्द बहुत ही थोड़े हैं, तथा उनके रूप भी बहुत प्रसिद्ध नहीं हैं, इसलिए उनका चलाने का प्रकार यहाँ नहीं दिया जाता। प्रायः पाठकों के देखने में आएगा कि आकारान्त शब्द स्त्रीलिंग होते हैं, और अकारान्त शब्द स्त्रीलिंग नहीं हुआ करते। किस शब्द का कौन-सा अन्त है, यह ध्यान में लाने के लिए कई शब्द नीचे दिये हैं, इनकी ओर ठीक ध्यान देने से अन्त-वर्ण का ठीक बोध हो जायेगा।

(१) अकारान्त—देव, रामकृष्ण, धनंजय, ज्ञान, आनन्द
(२) आकारान्त—रमा, विद्या, गंगा, कृष्णा, अम्बा, अवका
(३) इकारान्त—हरि, भूपति, अग्नि, रवि, कवि, पति
(४) ईकारान्त—लक्ष्मी, तरी, तंत्री, नदी, स्त्री, वाणी
(५) उकारान्त—भानु, विष्णु, वायु, शम्भु, सूनु, जिष्णु
(६) ऊकारान्त—चमू, वधू, श्वश्रू, यवागू, चम्पू, जम्बू
(७) ऋकारान्त—दातृ, कर्तृ, भोक्तृ, गन्तृ, पातृ, वक्तृ

(८) ऐकारान्त—रै (धन)
(९) ओकारान्त—द्यो, गो,
(१०) ककारान्त—वाक्, सर्वशक्
(११) तकारान्त—सरित्, भूभृत्, हरित्
(१२) दकारान्त—शरद्, तमोनुद्
(१३) सकारान्त—चन्द्रमस्, तस्थिवस्, मनस्

इत्यादि शब्द देखने से पाठक जान सकेंगे कि किस शब्द के अन्त में कौन-सा वर्ण है।

अब इकारान्त पुलिंगी 'हरि' शब्द के रूप देखिए:—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
(१)	हरिः	हरी	हरयः
सं०	(हे) हरे	(हे) ,,	(हे),,
(२)	हरिम्	,,	हरीन्
(३)	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः
(४)	हरये	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
(५)	हरेः	,,	,,
(६)	,,	हर्योः	हरीणाम्
(७)	हरौ	,,	हरिषु

इसी प्रकार भूपति, अग्नि, रवि, कवि आदि शब्दों के रूप बनते हैं। प्रथम पाठ में दिये हुए नियम ३ के अनुसार हरि, रवि आदि शब्दों के रूपों में नकार का णकार होता है।

प्रथम पाठ के नियम १ में कहा है कि एकवचन [illegible] संख्या का बोधक, द्विवचन दो की संख्या का बोधक, बहुवचन तीन अथवा तीन से अधिक की संख्या [illegible] होता है, जैसे:—

(१) एकवचन—रामस्य चरित्रम्=(एक) राम का (एक) चरित्र। (२) द्विवचन—मुनिमूषकयोः कथा=मुनि और मूषक (इन दोनों) की कथा।

रामस्य बांधवौ=एक राम के (दो) भाई।

(३) बहुवचन—श्रीकृष्णभीमार्जुनाः जरासंधस्य गृहं गताः= श्रीकृष्ण, भीम तथा अर्जुन (ये तीनों) (एक) जरासन्ध के (एक) घर को गये।

कुमारेण आम्राः आनीता-=(एक) लड़का (तीन अथवा तीन से अधिक अर्थात् दो से अधिक) आम लाया।

इस प्रकार वचनों द्वारा संस्कृत में संख्या का बोध होता है। हिन्दी भाषा में दो की संख्या का बोध करने के लिए कोई खास वचन का चिह्न नहीं है। संस्कृत की विशेषता और पूर्णता इसी व्यवस्था द्वारा प्रतीत होती है। अब हर एक विभक्ति के तीनों वचनों का उपयोग किस प्रकार किया जाता है, यह बताने के लिए कुछ वाक्य नीचे देते हैं।

(१) प्रथमा विभक्ति

वाक्य में प्रथमा विभक्ति कर्त्ता का स्थान बताती है (कर्त्ता वह होता है जो क्रिया करता है)।

(१) रामः राज्यं अकरोत्=राम राज्य करता था।

(२) रामलक्ष्मणौ वनं गच्छतः=राम लक्ष्मण (ये दो) वन को जाते हैं।

(३) बालकाः श्रीकृष्णस्य उपदेशं शृण्वन्ति=(तीन अथवा तीन से अधिक) बालक श्रीकृष्ण का उपदेश सुनते हैं।

(२) स नेत्राभ्यां सूर्यं पश्यति=वह (दोनों) आँखों से सूर्य को देखता है।

(३) अर्जुनः बाणैः युद्धं करोति=अर्जुन (दो से अधिक) बाणों के साथ युद्ध करता है।

इन तीन वाक्यों में 'खड्गेन, नेत्राभ्यां, बाणैः' ये तीन शब्द तृतीया विभक्ति के हैं। और क्रियाओं के साधन हैं। अर्थात् हनन करने का साधन खड्ग, देखने का साधन नेत्र और युद्ध करने का साधन बाण है।

(४) चतुर्थी विभक्ति

क्रिया जिसके लिये की जाती है, उसकी चतुर्थी विभक्ति होती है। संस्कृत में इसे 'सम्प्रदान' कहते हैं क्योंकि 'के लिए' का सम्बन्ध विशेषकर दान-क्रिया से होता है।

(१) राजा ब्राह्मणाय धनं ददाति=राजा ब्राह्मण को धन देता है।

(२) पुत्राभ्यां मोदकौ ददाति=(वह) (दो) पुत्रों को दो लड्डू देता है। (३) कृपणः याचकेभ्यः द्रव्यं न ददाति=कृपण मांगने वालों को द्रव्य नहीं देता।

इन तीन वाक्यों में 'ब्राह्मणाय, पुत्राभ्यां, याचकेभ्यः' ये तीन शब्द चतुर्थी विभक्ति में हैं और वे बता रहे हैं कि तीनों वाक्यों में जो दान हुआ है वह किन के लिये हुआ है।

(५) पंचमी विभक्ति

वाक्य में पंचमी विभक्ति अर्थात् अपादान 'से' से घोषित होती है। अपादान का अर्थ है 'छोड़ना', 'अलग होना।'

(१) स नगरात् ग्रामं गच्छति=वह नगर से गांव को जाता है

(२) रामः वसिष्ठवामदेवाभ्यां प्रसादं इच्छति=राम, वसिष्ठः वामदेव (इन दोनों) से प्रसाद चाहता है।

(३) मधुमक्षिका पुष्पेभ्यः मधु गृह्णाति=शहद की मक्खी (दो से अधिक) फूलों से शहद लेती है।

इन तीनों वाक्यों में 'नगरात्, वसिष्ठवामदेवाभ्यां' पुष्पेभ्यः ये पद पंचम्यन्त हैं। और यह पंचम्यन्त रूप किससे किसका अपादान (हुआ) है, यह बात बताते हैं।

(६) षष्ठी विभक्ति

वाक्य में षष्ठी विभक्ति 'सम्बन्ध' अर्थ में आती है।

(१) तद् रामस्य पुस्तकं अस्ति=वह राम की पुस्तक है।

(२) रामरावणयोः सुमहान् संग्रामः जातः=राम रावण (इन दोनों) का बड़ा भारी युद्ध हुआ।

(३) नगराणाम् अधिपतिः राजा भवति=शहरों का स्वामी राजा होता है।

इन तीनों वाक्यों में षष्ठ्यन्त पदों से पता लगता है कि पुस्तक, संग्राम, अधिपति—इनका किनके साथ मुख्य सम्बन्ध (अर्थात् अधिकार अथवा स्वामी-सम्बन्ध) है।

(७) सप्तमी विभक्ति

वाक्य में सप्तमी विभक्ति 'अधिकरण (आश्रय) स्थान' अर्थ में आती है।

(१) नगरे बहवः पुरुषाः सन्ति=शहर में बहुत पुरुष हैं।

(२) तेन कर्णयोः अलंकारौ धृतौ=उसने (दो) कानों में (एक-एक) भूषण (जेवर) धारण किये।

(३) पुस्तकेषु चित्राणि सन्ति=पुस्तकों के अंदर तस्वीरें हैं।

इन वाक्यों में तीनों सप्तम्यन्त पद 'स्थान' (अधिकरण), अर्थ बताते हैं। अर्थात् पुरुषों का नगर आश्रय है, अलंकारों का कान तथा चित्रों का पुस्तक स्थान है।

संबोधन विभक्ति

पुकारने के समय संबोधन का प्रयोग होता है।

(१) हे धनंजय ! अत्र आगच्छ=हे धनंजय ! यहाँ आ।

(२) हे पुत्रौ ! तत्र गच्छताम्=हे (दोनों) लड़को ! वहां जाओ।

(३) हे मनुष्याः ! शृणुत=हे (दो से अधिक) मनुष्यो ! सुनो।

इस प्रकार सब विभक्तियों के अर्थ तथा उपयोग हैं। पाठकों को उचित है कि वे वार-वार इनका विचार करके इन विभक्तियों के अर्थों को ठीक-ठीक ध्यान में रखें और कभी भूल न जावें, क्योंकि इनका वहुत महत्त्व है। उक्त विवरण ठीक ध्यान में लाने के लिये उसका सारांश नीचे देते हैं :—

विभक्ति	अर्थ	भाषा में प्रत्यय
(१) प्रथमा	कर्त्ता	क्रिया का करने वाला—
(२) द्वितीया	कर्म	जो किया जाता है—
(३) तृतीया	करण	क्रिया का साधन—ने, से, द्वारा
(४) चतुर्थी	सम्प्रदान	जिनके लिये क्रिया की जाय—के लिये
(५) पंचमी	अपादान	जिससे वियोग होता है—
(६) षष्ठी	सम्बन्ध	एक का दूसरे के ऊपर अधिकार—का

(७) सप्तमी—अधिकरण—स्थान, आश्रय, में

(८) सम्बोधन—आह्वान, पुकारना, हे

इन विभक्तियों के अर्थ तथा उपयोग पाठकों को ध्यान में रखने चाहिएँ। संस्कृत वाक्य बनाना तथा प्राचीन पुस्तकों का अर्थ—बोध इन्हीं के परिज्ञान द्वारा होता है। जब उक्त बातें ठीक स्मरण हो जायें[1], उसके बाद अगले पद कण्ठ कीजिये।

पाठ चौथा

क्रिया

प्रतिभाषेत्=(वह) उत्तर दे (गा)। पृच्छेयम्=पूछूँ (गा) प्रतिवदेत्=(वह) उत्तर दे (गा)। सेवसे=(तू) सेवन करता है। सेवते=(वह) सेवन करता है। सेवे=सेवन करता हूँ। संभाष्य=बोलकर। आपृच्छ्य=पूछकर। आदिशत्=(उसने) आज्ञा की। प्रक्षिपति=फेंकता है। निष्कास्यतां=निकाल दिया जाय। परित्यज=(तू) फेंक दे। प्रतिवदेत्=(वह) जवाब दे (गा)। प्रत्यवदत्=(उसने) उत्तर दिया। प्रत्यब्रवीत्=उत्तर दिया। अवदत्=बोला।

शब्द—पुंल्लिंगी

भगवान्=ईश्वर। भगवतः=ईश्वर का। व्रजन्=चलने वाला। पथिन्=मार्ग। पथि=मार्ग में। अर्भकः=लड़का। चरणः=पाँव।

१—षष्ठी विभक्ति दो नामों का—एक पद का अन्य पद से—सम्बन्ध बताती है। शेष सब विभक्तियाँ एक नाम—पद का क्रिया से सम्बन्ध बताती हैं—वे कारक हैं। षष्ठी विभक्ति कारक नहीं।

देवः=ईश्वर। नृपः=राजा। प्रसादः=दया। पुरुषः=मनुष्य। इच्छन्=इच्छा करता हुआ (अथवा करने वाला)। ज्वरः=बुखार आवेगः=ज़ोर। ज्वरावेगः=बुखार का जोर। चिकित्सकः=वैद्य। वयस्यः=मित्र। यमः=मृत्यु, यम। क्षार=नमक। चन्द्रः=चाँद। अर्धचन्द्रः=गला पकड़कर (निकालना या धक्का देना) मन्दः= मंद-बुद्धि वाला। परिजनः=नौकर।

स्त्रीलिंगी

गलहस्तिका=गला-पकड़ (क्रिया)। मृत्तिका=मट्टी।

नपुंसकलिंगी

प्रतिवचनम्=उत्तर, जवाब। क्षतम्=व्रण। प्रतिवचः=जवाब, उत्तर। अरण्य=वन।

विशेषण

विदग्ध=ज्ञानी, विद्वान्, पका हुआ। वधिर=वहिरा, न सुनने वाला। अविदग्ध=अज्ञानी। आर्त=रोगी, पीड़ित। प्रस्थितः=प्रवास के लिए चला, मुसाफिर हो गया। पृष्ठ=पूछा हुआ। रुग्ण=बीमार। भद्र=हितकारक। सह्य=सहने योग्य। भद्रतर=दोनों में अधिक अच्छा। समर्थ=शक्तिमान्। भद्रतम=सबसे अधिक अच्छा। दुःसह=सहन करने के लिये कठिन। प्रतिकूल=विरोधी। निःसारित=निकला हुआ। अनुकूल=मुआफिक।

अन्य (अव्यय)

इति=ऐसा। सकोपम्=गुस्से से। बहिः=बाहर। सादरं=नम्रता के साथ। संनिकाशम्=पास। तदनु=उसके पश्चात्। तथैव=वैसा ही। तदनुरूप=उसके अनुरूप (अनुकूल)।

इतने शब्द याद करने के पश्चात् निम्न वाक्य स्मरण कीजिये।

(२) मित्रसन्निकाशं गत्वा 'अपिसह्यो ज्वरावेगः', इति पृच्छेयम् । 'किंचिद् इव सह्यः' इति स प्रतिवदेत् ।

(३) ततः 'किं औषधं सेवसे', इति पृच्छेयम् । 'इदं औषधं सेवे' इति प्रतिभाषते । अनन्तरं 'कस्ते चिकित्सकः' ? इति मया पृष्टः 'असौ मम चिकित्सकः' इति प्रतिवदेत् ।

(४) अथ तत्तदनुपं संभाष्य, मित्रं आपृच्छ्य, गृहं आगमिष्यामि ।

(५) एवं चिन्तयन् मित्रं प्राप्य, सादरं अपृच्छत् "वयस्य,अपि सह्यो ज्वरावेगः" इति । "तथैव वर्तते । न विशेषः" इति स प्रत्यवदत् ।

(६) "भगवतः प्रसादेनतथैव वर्तताम् । कीदृशं औषधं सेवसे" इति । ज्वरार्तः अभ्यवदत् "मम औषधं मृत्तिका एव" इति ।

(२) मित्र के पास जाक
बुखार सहन करने योग्य (है
पूछूँगा ।

'कुछ ही सहन करने यं
ऐसा वह उत्तर देगा ।

(३) फिर 'क्या दवा ले
ऐसा पूछूँगा । 'यह दवा लेता
वह उत्तर देगा । पश्चात् 'कौन
वैद्य (है)' ऐसे मेरे पूछने पर 'व
वैद्य है' ऐसा वह उत्तर देगा ।

(४) अनन्तर इस प्रकार
बोलकर, मित्र को पूछ-ताछक
आ जाऊँगा ।

(५) इस प्रकार विचार
हुआ मित्र (के पास) पहुँचकर,
के साथ पूछा । 'मित्र क्या सहन
योग्य बुखार का जोर (है)' 'वै
है, कोई नहीं फरक' ऐसा वह
में बोला ।

(६) 'परमेश्वर की कृपा से
ही रहे । कौन-सा औषध लेते
ऐसा पूछने पर रोगी ने उ
दिया—'मेरी दवा मिट्टी ही है ।

(७) वयस्यः प्राह। 'तदेव भद्र-तरम्।

'कस्ते चिकित्सकः' इति।

(८) रुग्णः सकोपं अब्रवीत 'मम भिषग् यम एव' इति।

(९) बधिरः प्रोवाच। 'स एव समर्थः तं मा परित्यज' इति।

(१०) एवं प्रतिकूलं प्रतिवचनं [श्रु]त्वा स रोगी दुःसहेन कोपेन [स]माविष्टः परिजनं आदिशत्।

(११) 'भोः कथं अयं एवं क्षते क्षारं प्रक्षिपति। निष्कास्यतां अयं अर्धचन्द्रदानेन इति।

अथ स बधिरो मंदधीः परि-[ज]नेन गलहस्तिकया बहिः निः-[सा]रितः।

(कथा-कुसुमांजलिः)

(७) मित्र बोला—'वही अधिक हितकारी (है)।'

'कौन-सा तेरा वैद्य (है)।'

(८) रोगी क्रोध से बोला—'मेरा वैद्य यम ही (है)।'

(९) बधिर बोला—'वही शक्ति-मान् है, उसको न छोड़।'

(१०) इस प्रकार विरुद्ध भाषण सुनकर उस रोगी ने असह्य क्रोध से युक्त होकर नौकर को आज्ञा की।

(११) 'अरे क्यों यह इस प्रकार जख्म पर नमक डालता है। निकाल दे, इसको गला पकड़ कर।

पश्चात् उस मूर्ख बधिर को नौकर ने गला पकड़कर बाहर निकाला।

'कथा कुसुमांजलि' से।

सूचना—भाषा में 'इति' का सब स्थानों पर भाषान्तर [नह]ीं होता है। तथा संस्कृत के मुहावरे भी भाषा के मुहावरों से [भिन्न] हैं। यहां संस्कृत की शब्द-रचना के अनुकूल ही भाषा [की शब्द]-रचना रखी है, इस कारण भाषा का [भाव जैसा हो]ना चाहिये वैसा नहीं होगा, पाठक यह बात ध्यान [में रखें। भाष]ा का भाव ध्यान में लावें।

समास-विवरणम्

(१) स्वमित्रम्—स्वस्य मित्रं=स्वमित्रम्, स्ववयस्यः ।
(२) ज्वरार्तः—ज्वरेण आर्तः=पीड़ितः, ज्वरपीड़ितः ।
(३) ज्वरावेगः—ज्वरस्य आवेगः=ज्वरावेगः ।
(४) सादरम्–आदरेण सहितम्=आदरयुक्तम् ।
(५) सकोपम्—कोपेन सहितं=सकोपम्, सक्रोधम् इत्यर्थः ।

पाठ पाँचवाँ

पूर्व पाठों में अकारान्त तथा इकारान्त पुल्लिगी शब्दों के रूप दिये हैं, दीर्घ ईकारान्त शब्द भी संस्कृत में हैं, परन्तु उन के प्रयोग बहुत प्रयुक्त नहीं होते, इसलिये उनको छोड़कर यहाँ उकारान्त पुल्लिगी शब्द के रूप देते हैं ।

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
(१) भानुः	भानू	भानवः
संबो० हे भानो	(हे)„	(हे)„
(२) भानुं	„	भानून्
(३) भानुना	भानुभ्यां	भानुभिः
(४) भानवे	„	भानुभ्यः
(५) भानोः	„	„
(६) „	भान्वोः	भानूनाम्
(७) भानौ	„	भानुषु

इसी प्रकार गुरु, शम्भु, विष्णु, वायु, इन्दु, विधु इत्यादि उकारान्त पुल्लिगी शब्दों के रूप जानने चाहियें । पाठकों को उचित

है कि वे इन शब्दों के रूप सब विभक्तियों में बनाकर कागज़ पर लिखें, तथा पूर्वोक्त तृतीय पाठ में दिये हुए प्रकार से हर एक रूप को वाक्य में प्रयुक्त करने का यत्न करें। इस प्रकार बनाये हुए वाक्य कागज़ पर लिखने चाहियें। अगर दो विद्यार्थी साथ पढ़ते हों, एक-दूसरे से शब्दों के रूप सब विभक्तियों में परस्पर पूछकर, हर एक रूप का उपयोग भी परस्पर पूछना चाहिये। इससे सब विभक्तियों के रूपों की उपस्थिति ठीक-ठीक हो जायगी तथा उनका उपयोग कैसे करना चाहिये, इसका भी ज्ञान हो जायगा। परन्तु जहां पढ़ने वाला अकेला ही हो, वहां सब रूप तथा वाक्य जो-जो नये बनाये हों, वे सब कागज पर लिखने चाहियें और उनको बार-बार पढ़कर सबको स्मरण करना चाहिये।

संस्कृत में जहां-जहां दो स्वर अथव दो व्यजंन पास-पास आ जाते हैं वहां वे खास रीति से मिल जाते हैं। हमने 'स्वयं-शिक्षक' के प्रथम भाग में तथा इस द्वितीय भाग में भी जहां तक हो सका है वहां तक इस प्रकार के सन्धि नहीं दिये हैं। तथापि पाठक देखेंगे कि प्रथम भाग की अपेक्षा इस द्वितीय भाग में इस प्रकार के सन्धि अधिक दिये हैं।

ये सन्धि किस स्थान पर करने तथा किस स्थान पर न करने के विषय में निम्नलिखित नियम हैं।

(६) नियम— एक पद (शब्द) के अन्दर जोड़ (सन्धि) अवश्य होने चाहिएं। जैसे—रामेषु, देवेषु, रामेण इत्यादि।

सप्तमी के बहुवचन का प्रत्यय 'सु' है परन्तु इसके पीछे 'ए' होने से 'सु' का 'षु' बनता है। एक पद (शब्द) में होने से यह सन्धि आवश्यक है। तथा नियम ६ के अनुसार 'रामेण' में नकार के स्थान पर णकार आवश्यक है क्योंकि यह एक पद है।

(७) नियम—धातु का उपसर्ग के साथ जहाँ सम्बन्ध होता है वहाँ सन्धि करना आवश्यक है। (केवल वेदों में धातुओं से उनका उपसर्ग अलग रहता है, इस कारण वहाँ यह नियम नहीं लगता) उत्+गच्छति=उद्गच्छति। निः+बध्यते=निर्बध्यते।

(८) नियम—समास में सन्धि अवश्य करनी चाहिये। जैसे—जगत्+जननी=जगज्जननी। तत्+रूपं=तद्रूपम्।

(९) नियम—पद्यों में बहुतांश में सन्धि करना आवश्यक है।

(१०) नियम—बोलने के समय बोलने वाला मनुष्य चाहे सन्धि करे अथवा न करे। अर्थात् जो बोलने वाला हो उसकी इच्छा पर यह निर्भर है। जहां बोलने वाले को सुभीता हो, वहाँ वह सन्धि करे, जहाँ न हो, न करे। अथवा जहाँ सन्धि करके बोलने वाला सुनने वाले को अर्थ का परिचय सुगमता से करा सके, वहाँ सन्धि करना, अन्यत्र न करना।

इस दसवें नियम के अनुसार स्वयं-शिक्षक के प्रथम और द्वितीय भाग में बहुत स्थानों पर सन्धि नहीं किये हैं। जहाँ आवश्यक प्रतीत हुआ वहां किये हैं। 'स्वयं-शिक्षक' का उद्देश्य संस्कृत भाषा में विद्यार्थियों का सुगमता से प्रवेश कराना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रथम अवस्था में सन्धि न करना अत्यन्त आवश्यक है। यदि प्रथमारम्भ में सब सन्धि करके वाक्य का रूप गूढ़ बनाया जाय तो पाठक घबरा जायेंगे तथा उनकी बुद्धि में संस्कृत का प्रवेश नहीं होगा।

इस समय तक जो-जो संस्कृत की पुस्तकें बनी हैं, उनमें सब स्थानों पर सन्धि किये हुए रहने से पाठक उनको स्वयं नहीं पढ़ सकते, न उनसे स्वयं लाभ उठा सकते हैं। सन्धियों का परिचय

जोड़कर संस्कृत-मन्दिर में शीघ्र प्रवेश कराने का कार्य इस 'स्वयं-शिक्षक' के पुस्तकों का है। पाठक भी इस बात को स्वीकार करेंगे कि उनका प्रवेश संस्कृत-मन्दिर में इन पुस्तकों द्वारा सुगमता से हो रहा है।

अब हमने जो ऊपर दसवां नियम दिया हुआ है उसका परि-ज्ञान ठीक होने के लिये एक उदाहरण देते हैं।

[१] ततस्तमुपकारकमाचार्यमालोक्येश्वरभावनयाह।

यह वाक्य सब सन्धि करके लिखा है। इसमें बड़े सन्धि प्रायः कोई नहीं हैं। तथापि सब जोड़कर लिखने से पाठक इसको वैसा नहीं जान सकते जैसा निम्न प्रकार से लिखित जान सकते हैं—

[२] ततः तं उपकारकं आचार्यं आलोक्य ईश्वर भावनया आह [पश्चात् उस उपकार करने वाले आचार्य को देखकर ईश्वर की भावना से (अर्थात् आदर भाव से) कहा।]

उक्त दोनों वाक्य एक ही हैं परन्तु प्रथम वाक्य कठिन है; दूसरा आसान है। इस कारण, द्वितीय वाक्य में कोई सन्धि नहीं किया। बोलने वाला इसी प्रकार अपनी मर्जी के अनुसार सन्धि करेगा अथवा नहीं भी करेगा।

कई समझते हैं कि संस्कृत में सब जोड़ अवश्य करने चाहियें परन्तु यह उनकी भूल है। वाक्य बोलने वाला स्वकीय इच्छा से जहां चाहिये वहां सन्धि करेगा, जहां न चाहिये वहां वैसे के वैसे शब्द रखेगा। यह बात सब सन्धियों के विषय में जानना चाहिये, इसी कारण हमने बहुत थोड़े स्थानों पर सन्धि किये हैं। इस पुस्तक में कुछ-कुछ सन्धियों के नियम बतलाए जाते हैं। पाठकों को उचित है, कि वे इन नियमों को अच्छी

समझकर, जहाँ-जहाँ सन्धि करने की आवश्यकता हो, वहां-वहां नियमानुसार सन्धि किया करें।

कई लोग समझते हैं कि वे सन्धि केवल संस्कृत में ही हैं। परन्तु यह उनकी भूल है। फ्रेंच, जर्मन आदि भाषाओं में भी ये सन्धि हैं। इंगलिश में भी ये संधि हैं, देखिये—

(१) It is—इट् इज्—यह वाक्य 'इटीज़' ऐसा ही बोला जाता है।

(२) It is arranged out of court

इट् इज् अरेंज्ड आउट आफ कोर्ट।

यह वाक्य निम्नलिखित प्रकार बोला जाता है :—

इ—टी—ज़रेंझ्डाउटाफ् कोर्ट

इस प्रकार इंगलिश में सहस्रों स्थानों पर बोलने वाले के इच्छानुरूप संधि होते हैं। परन्तु अंग्रेजी के व्याकरण में इनके विषय में कोई नियम नहीं दिया है। केवल इसी कारण लोग समझते हैं कि अंग्रेजी में कोई सन्धि नहीं होती।

ठीक इसी प्रकार हिन्दी भाषा में भी स्थान-स्थान पर सन्धि होते हैं, देखिये :—

आप कब घर में जाते हैं।

यह वाक्य निम्नलिखित प्रकार बोला जाता है :—

आपकब्घर्में जाते हैं।

अर्थात् बोलने वाला 'आप, कब, घर' इन तीन शब्दों के अन्त के अकार का लोप करके बोलता है। परन्तु भाषा के व्याकरणों में इस विषय में कोई नियम नहीं दिया। संस्कृत का

व्याकरण ऋषियों ने अपनी सूक्ष्म बुद्धि से बनाया है, इस कारण उसमें सब नियम यथायोग्य दिये हैं, अस्तु। इससे सिद्ध हुआ कि सब भाषाओं में सन्धि है। सन्धि करना या न करना वक्ता के तथा अवसर के ऊपर निर्भर है।

वाक्य

(१) नृपेण तस्मै धनं दत्तम्।	(१) राजा ने उसको धन दिया।
(२) रामः सीतया सह वनं गतः।	(२) राम सीता के साथ वन को गया।
(३) अपराधं विना तेन सः दण्डितः।	(३) अपराध के बिना उसने उसको दंड दिया।
(४) कुमारेण कण्ठे माला धृता।	(४) लड़केने गलेमें माला धारण की।
(५) मया तस्य वार्ता अपि न श्रुता।	(५) मैंने उसकी बात भी नहीं सुनी।
(६) त्वया सुखं प्राप्तम्।	(६) तूने सुख प्राप्त किया।
(७) कृष्णस्य उपदेशेन अर्जुनस्य मोहः नष्टः।	(७) कृष्ण के उपदेश से अर्जुन का मोह नाश हो गया।
(८) गंगायाः उदकं स्नानार्थं अत्र आनय।	(८) गंगा का जल स्नान के लिये यहाँ ले आ।
(९) ते गृहं गच्छन्ति।	(९) वे घर जाते हैं।
(१०) जनाः तं मुनिं नैव निन्दन्ति।	(१०) लोग उस मुनि को नहीं निन्दते हैं।

पाठ छठा

शब्द—पुंल्लिंगी

भावितचेतः=विचारयुक्त । विषादः=खेद, कष्ट । विवेकः=विचार, सोच । विप्रः=ब्राह्मण । अविवेकः=अविचार । बालः=छोटा लड़का । राजन्=राजा । सर्पः=सांप । राज्ञः=राजा का । कृष्णसर्पः=काला साँप । वत्सः=लड़का, बछड़ा । चौरः=चोर । आचार्यः=गुरु । जनः=मनुष्य । कालः=समय । नकुलः=नेवला । अनुशयः=पश्चात्ताप । पाठकः=पढ़ने वाला ।

स्त्रीलिंगी

भार्या=धर्मपत्नी । बाला=लड़की, स्त्री । उज्जयिनी=उज्जयिन नगरी । आचार्या=स्त्री-अध्यापिका । उज्जयिन्याम्=उज्जयिन नगरी में । आचार्याणी=गुरुपत्नी ।

नपुंसकलिंगी

पार्वणं=पार्वणी में होने वाला श्राद्धादि । अपत्यं=सन्तान । आह्वानं=निमन्त्रण । श्राद्धं=श्राद्ध, मृतक्रिया, श्रद्धा से किया कर्म । दारिद्र्यं=दरिद्रता, गरीबी । पुरं=शहर, नगर ।

विशेषण

प्रसूता=प्रसूत हुई । व्यापादितवान्=हनन किया, मारा । निष्पन्न=निपन हुआ । परः=श्रेष्ठ, बहुत, दूसरा । खादित=खाया हुआ । पालित=पाला हुआ । व्यापादित=मारा हुआ, हनन किया हुआ । मर्दित=पीड़ा हुआ । सुस्थः=आराम से युक्त ।

अन्य

[illegible] । सत्वरं=शीघ्र । अथ=अनंतर । यथा-[illegible]=जैसा ।

क्रिया

अवस्थाप्य=रखकर। स्नातुं=स्नान करने के लिए। व्यवस्थाप्य=रखकर। लुलोट=पड़ा। उपगम्य=पास जाकर। यातुं=जाने को। अवधार्य=समझकर। ग्रहीष्यति=लेगा। उपसृत्य=पास होकर। उपगच्छति=पास जाता है। निरीक्ष्य=देखकर। व्यवस्थापयति=ठीक रखता है।

वाक्य

संस्कृत	भाषा
(१) अस्ति कलिकाता नगरे सूर्यशर्मा नाम विप्रः।	(१) कलकत्ता शहर में सूर्यशर्मा नामक ब्राह्मण है।
(२) प्रभावती नाम्नी तस्य भार्या सुशीला अस्ति।	(२) प्रभावती नामक उसकी धर्मपत्नी सुशीला है।
(३) एकदा सा नदी तीरे स्नानार्थं गता।	(३) एक बार वह नदी किनारे स्नान के लिये गई।
(४) सूर्यशर्मा ब्राह्मणः गृहे स्थितः।	(४) पं० सूर्यशर्मा घर में रहा।
(५) स अचिन्तयत।	(५) वह सोचने लगा।
(६) यदि सत्वरं अहं न गमिष्यामि।	(६) अगर शीघ्र मैं नहीं जाऊँगा।
(७) अन्यः कोऽपि तत्र गमिष्यति।	(७) दूसरा कोई वहाँ जाएगा।
(८) अथ भार्या स्नानं कृत्वा शीघ्र गृहं आगता।	(८) उसकी धर्मपत्नी स्नान करके जल्दी से ही घर आ गई।
(९) सूर्यशर्मा स्वभार्यां आगतां दृष्ट्वा अवदत्।	(९) पं० सूर्यशर्मा अपनी धर्मपत्नी आई हुई देखकर बोला।

(१०) देवि ! अहं इदानीं बहिर्गन्तुं इच्छामि ।

(११) पत्नी ब्रूते—भगवन्, कुत्र गन्तुं इच्छा इदानीम् ?

(१२) राज्ञः गृहे निमन्त्रणं अस्ति ।

(१३) तर्हि गंतव्यम् । शीघ्रमेव आगस्तव्यम् ।

(१४) सत्वरं पाकादिकं सिद्धं भविष्यति ।

(३) अविवेकोऽनुशयाय कल्पते

(१) अस्ति उज्जयिन्यां माधवः नाम विप्रः । तस्य भार्या प्रसूता । सा बालाऽपत्यस्य रक्षणार्थं पतिं अवस्थाप्य स्नातुं गता ।

(२) अथ ब्राह्मणाय राज्ञः पार्वणश्राद्धं दातुं आह्वानं आगतम् । तत् श्रुत्वा स विप्रः सहजदारिद्र्याद् अचिन्तयत् ।

(३) यदि सत्वरं न गच्छामि तदा तत्र अन्यः कश्चित् श्राद्धं ग्रहीष्यति ।

(४) किन्तु बालकस्य अत्र रक्षको नास्ति । तत् किं करोमि । यातु । चिरकालपालितं इमं नकुलं पुत्र निधि-

(१०) देवी, मैं अब बाहर जा[ना] चाहता हूँ ।

(११) पत्नी बोलती है—भगव[न्] कहां जाने की इच्छा है अब ?

(१२) राजा के घर निमंत्रण है

(१३) तो जाइये । जल्दी [वापस आइये ।

(१४) शीघ्र ही भोजन तैया[र] होगा ।

(३) अविचार पश्चात्ताप के लिए होता है ।

(१) उज्जयिनी नगरी में माध[व] नामक ब्राह्मण है । उसकी धर्मपत्[नी] प्रसूता हुई । वह बालसंतान की रक्[षा] के लिये पति को रखकर स्नान के लिये चली ।

(२) अनंतर ब्राह्मण के लिये राजा का पार्वणश्राद्ध देने के लिये निमन्त्रण आ गया । यह सुनकर वह ब्राह्मण स्वाभाविक दरिद्रता से सोचने लगा ।

(३) अगर शीघ्र नहीं जाता हूँ तो वहां दूसरा कोई श्राद्ध ले लेगा ।

(४) परन्तु बालक का यहां रक्षण करने वाला नहीं । तो क्या करूँ । जाने दो । बहुत समय से पाले हुए इस

शेषं बालकरक्षणार्थं व्यवस्थाप्य गच्छामि। तथा कृत्वा गतः।

पुत्र के समान नेवले को संतान की रक्षा के लिये रखकर जाता हूँ। वैसा करके गया।

(५) ततः तेन नकुलेन् बालकस्य समीपं आगच्छन् कृष्णसर्पो दृष्ट्वा व्यापादितः खण्डितः च।

(५) पश्चात् उस नेवले ने बालक के पास आते हुए काले सांप को देखकर [उसको] मारा और टुकड़े किये।

(६) ततो असौ नकुलो ब्राह्मणं आयान्तं अवलोक्य रक्तविलिप्त मुखपादः सत्वरं उपगम्य तच्चरणयोः लुलोट।

(६) अनन्तर यह नेवला ब्राह्मण को आते हुए देखकर खून से भरे हुए मुँह और पाँव [के साथ] शीघ्र पास जाकर उसके पांव पड़ा।

(७) ततः स विप्रः तथाविधं तं दृष्ट्वा बालकोऽनेन खादितः इति अवधार्य नकुलं व्यापादितवान्।

(७) बाद वह ब्राह्मण वैसे उसको देखकर, बालक इसने खाया ऐसा समझकर नेवले को मार दिया।

(८) अनन्तरं यावद् उपसृत्य पश्यति तावद् बालकः सुस्थः सर्पः च व्यापादितः तिष्ठति।

(८) अनन्तर जब पास जाकर देखता है, तब बालक आराम [में] है और सांप मरा हुआ है (ऐसा देखा)।

(९) ततः तं उपकारकं नकुलं निरीक्ष्य भावितचेतः स परं विषादं गतः।

(९) पश्चात् उस उपकार करने वाले नेवले को देखकर विचारमय होकर बहुत दुःख को प्राप्त हुआ।

[हितोपदेशः]

[हितोपदेश से]

समास-विवरण

(१) अविवेकः—न विवेकः अविवेकः। अविचारः।

(२) विप्रः—विशेषेण प्राज्ञः विप्रः। विशेषज्ञानयुक्तः।

(३) सत्वरं—त्वरया सहितं सत्वरं। शीघ्रं।

(४) बालकरक्षणार्थं—बालकस्य रक्षणं, बालकरक्षणम्। बालकरक्षणस्य इदं, बालकरक्षणार्थं इदं, बालकरक्षणार्थम्।

(५) बालकसमीपं—बालकस्य समीपं, बालक समीपम् ।

(६) कृष्णसर्पः—कृष्णश्च असौ सर्पः कृष्णसर्पः ।

(७) रक्तविलिप्तमुखपादः—रक्तेन विलिप्तः मुखं च पादः च मुखपादौ । रक्तविलिप्तौ मुखपादौ यस्य स, रक्तविलिप्तमुखपादः ।

(८) तच्चरणौ—तस्य चरणौ, तच्चरणौ ।

(९) उपकारकः—उपकारं करोति, इति उपकारकः ।

(१०) भावितचेतः—भावितं चेतः मनः यस्य स, भावितचेतः ।

सन्धि किए हुए कुछ वाक्य

(१) मूर्खो[1] भार्यामपि[2] वस्त्रं न ददाति—मूर्ख धर्मपत्नी को भी कपड़े नहीं देता ।

(२) वसिष्ठो[3] राममुपदिशति[4]—वसिष्ठ राम को उपदेश देता है ।

(३) विप्रास्तत्वं[5] जानन्ति—पंडित लोग तत्व जानते हैं ।

(४) पर्वतेवृक्षास्सन्ति[6]—पर्वत पर वृक्ष हैं ।

(५) अग्निर्गृहं[7] दहति—आग घर जलाती है ।

(६) आचार्यस्तं[8] नापश्यत्[9]—गुरु ने उसको नहीं देखा ।

---

१. मूर्खः+भार्या । २. भार्याम्+अपि । ३ वसिष्ठः+रामं । ४ रामम्+उपदिशति । ५ विप्राः+तत्वम् । ६ वृक्षाः+सन्ति । ७ अग्निः+गृहं । ८ आचार्यः+तं । ९ न+अपश्यत् ।

(७) मूल्यमदत्त्वैव[10][11] तेन धान्यमानीतम्[12]—कीमत न नेकर वह वा[illegible] लाया।

(८) नमस्ते[13]—तेरे लिए नमस्कार।

(९) नमो[14] भगवते वासुदेवाय—नमस्कार भगवान् वासुदेव के लिये।

(१०) नमस्तुभ्यम्[15]—तुम्हारे लिए नमस्कार।

(११) वसिष्ठविश्वामित्र[16] भारद्वाजेभ्यो नमः—वसिष्ठ, विश्वामित्र, भारद्वाज इनके लिये नमस्कार।

(१२) साधुभिर्जनैस्तव[17][18] मित्रत्वमस्ति[19]—साधु जनों के साथ तेरी मित्रता है।

(१३) श्रीरामचन्द्रोजयतु[20]—श्रीरामचन्द्र की जय हो।

(१४) श्रीधरोनद्यां[21] स्नाति—श्रीधर नदी में स्नान करता है।

(१५) त्वामभिवादये[22]—तुमको [मैं] नमस्कार करता हूँ।

---

१० मूल्यम्+अदत्त्वा ११ अदत्त्वा+एव। १२ धान्यम्+आनीतम् [illegible] १४ [illegible]+भगवते। १५ नमः+तुभ्यम्। १६ वसि[illegible] [illegible] १७ साधुभिः+जनैः। १८ जनैः+तव। १९ मित्रत्वम् [illegible] २० [illegible]+जयतु। २१ श्रीधरः+नद्यां। २२ त्वाम्+अभिवादये।

पाठ सातवाँ

पूर्वोक्त छः पाठों में अकारान्त, इकारान्त तथा उकारान्त पुल्लिगी शब्द चलाने का प्रकार बताया है। इकारान्त तथा उकारान्त पुल्लिगी शब्द एक जैसे ही चलते हैं। इकारान्त पुल्लिगी शब्दों में जहाँ 'य' आता है वहाँ उकारान्त पुल्लिगी शब्दों में 'व' आता है, तथा 'इ और ए' के स्थान पर क्रमशः 'उ और ओ' आते हैं, यह सुविज्ञ पाठकों के ध्यान में आया होगा। इतनी वात ध्यान में रखने से शब्द कंठ करने की बहुत-सी मेहनत वच जाएगी।

दीर्घ आकारान्त, ईकारान्त तथा ऊकारान्त पुल्लिगी शब्द बहुत प्रसिद्ध न होने के कारण इस समय नहीं देते हैं। उनका विचार आगे करेंगे। अव क्रम प्राप्त ऋकारान्त शब्द के रूप देखिये—

ऋकारान्त पुल्लिगी 'धातृ' शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
(१)	धाता	धातारौ	धातारः
सं०	हे धातः [धातर]	हे „	हे „
(२)	धातारम्	„	धातॄन्
(३)	धात्रा	धातृभ्याम्	धातृभिः
(४)	धात्रे	„	धातृभ्यः
(५)	धातुः	„	„
(६)	धातुः	धात्रोः	धातॄणाम्
(७)	धातरि	„	धातृषु

इसी प्रकार कर्तृ, नेतृ, नप्तृ, शास्तृ, उद्गातृ, दातृ, ज्ञातृ, विधातृ इत्यादि शब्द चलते हैं। पाठकों को उचित है कि वे इन शब्दों के रूप कागजों पर लिखें, ताकि सब विभक्तियों के

रूप ठीक-ठीक स्मरण हो जायें। जितना बल पाठकगण इन शब्दों की तैयारी में लगा देंगे, उसी प्रमाण से उनकी संस्कृत बोलने, लिखने आदि की शक्ति बढ़ेगी।

पूर्वोक्त छः पाठों में पाठकों ने देखा होगा कि वाक्यों में कई शब्द अकेले होते हैं तथा कई शब्द दो-दो तीन-तीन अथवा अधिक शब्द मिलकर बनते हैं। दो अथवा दो से अधिक शब्दों से बने हुए शब्द-समुदाय को 'समास' कहते हैं। जैसे—रामकृष्ण, गंगाधर, कृष्णार्जुन, ज्वरार्त, तपोवन, मुनिमूपक इत्यादि। ये तथा इसी प्रकार के सहस्रों सामासिक शब्द संस्कृत में प्रतिदिन प्रयुक्त होते हैं। समासों द्वारा थोड़ा बोलने से बहुत अर्थ निष्पन्न होता है।

(१) 'गंगाया लहरी' ऐसा कहने की अपेक्षा 'गंगालहरी' इतना कहने से ही 'गंगा की लहर' ऐसा अर्थ उत्पन्न होता है।

(२) 'पीतं अंबरं यस्य सः' इतना कहने की अपेक्षा 'पीतांबरः' इतना ही कहने से, पीला है वस्त्र जिसका वह (विष्णु) इतना अर्थ निष्पन्न होता है।

(३) तस्य वचनं=तद्वचनम्।

(४) प्रजायाः हितं=प्रजाहितम्।

(५) भरतस्य पुत्रः=भरतपुत्रः।

इस प्रकार अन्यान्य शब्दों के विषय में जानना चाहिए। जब पाठकों के पास इस प्रकार का सामासिक शब्द आ जायगा, तब प्रथम उसके पद अलग-अलग करके और पूर्वापर सम्बन्ध देखकर उन पदों का अर्थ लगाना। जैसे—

(१) अकीर्तिकरम् :—अ + कीर्ति + करं = न कीर्तिः = अकीर्तिः, अकीर्तिं करोति इति = अकीर्तिकरम्।

(२) मूषकशावकः=मूषक+शावकः=मूषकस्य
    शावकः=मूषकशावकः ।

(३) रक्तविलिप्तमुखपादः=रक्त+विलिप्त+मुख+पादः=
    रक्तेन विलिप्तं=रक्तविलिप्तम् ।
    मुखं च पादः च=मुखपादौयस्य सः=
    रक्तविलिप्तमुखपादः ।

इस प्रकार समासों का विग्रह करने का प्रकार होता है, ऐसा करने से समास का अर्थ खुल जाता है। समासों के प्रकार बहुत हैं। उन सब का वर्णन हम आगे करेंगे। यहाँ केवल नमूना बताया जाता है।

(११) नियम—संस्कृत में अकार के बाद आने वाले विसर्ग के सम्मुख आ जाने से उस अकार सहित विसर्ग का 'ओ' होता है, और आगे का अकार लुप्त हो जाता है तथा अकार के स्थान पर, अकार का सूचक ऽ ऐसा चिह्न लिखते हैं।

ऽ यह चिह्न अवश्यमेव लिखना चाहिए, ऐसा कोई नियम नहीं। कोई लिखते हैं कोई नहीं लिखते। बोलने में अकार का उच्चारण नहीं होता। (परन्तु बोलने वाले की इच्छा हो तो अकार का उच्चारण भी कर सकता है)। अर्थात् सन्धि का नियम वक्ता जिस जगह चाहे उसी समय प्रयोग में आ सकता है। जैसे—

(१) कः अपि=कोऽपि
(२) रामः अगच्छत्=रामोऽगच्छत् ।
(३) धन्यः अस्मि=धन्योऽस्मि ।
} अः+अ=ओऽ

(१२) नियम—पदान्त के अनुस्वार का 'म्' होता है और उसके आगे जो स्वर आ जाएगा, उस स्वर के साथ वह मकार मिल जाता है। जैसे—

(१) किं अस्ति=किमस्ति ।
(२) वधं अभिकांक्षन्=वधमभिकांक्षन् ।
(३) इदं औषधम्=इदमौषधम् ।

इस प्रकार सब सन्धि जोड़कर वाक्य लिखने से पाठकों को स्वयं पढ़ने में बड़ी कठिनता होगी, इसलिये इस पुस्तक में किसी-किसी स्थान पर सन्धि किये हैं, अन्य स्थानों पर नहीं किये । पाठकों को उचित है कि इन नियमों के अनुसार वे पाठों में जहाँ-जहाँ सन्धि नहीं किया है, वहाँ-वहाँ अवश्य सन्धि बनायें, और हर एक पाठ सन्धि करके लिख दें, जिससे कि सन्धियों का अभ्यास दृढ़ हो जाए ।

शब्द—पुल्लिंगी

दण्डः=सोटी, डण्डा । महावीरः=बड़ा शूर, एक देवता । प्रत्येकः=हर एक । मासः=महीना । मासि=महीने में । दुरात्मन्=दुष्ट आत्मा । विप्रवेशः=पंडित की पोशाक । वासरः=दिन । नंदनः=पुत्र, लड़का । प्रहसन्=हंसता हुआ । भवताम्=आपका । भवन्तः=आप (बहुवचन) । भवान्=आप (एकवचन) । बलिः=बली, भोजन । दुष्टाशयः=बुरे मन वाला । महाशयः=अच्छे मन वाला । अभिकांक्षन्=इच्छा करने वाला । जनपदः=प्रदेश । मधुपर्कः=दधि, मधु, घी । पार्थिवः=राजा । स्तुवन्=स्तुति करता हुआ । रसः=रसना ।

स्त्रीलिंगी

पञ्चवटी=[illegible] । भूमिः=भूमी । [illegible]=[illegible] ।

नपुंसकलिंगी

[illegible]

भयंकर। द्वन्द्व=मल्लयुद्ध। द्वन्द्वयुद्धं=मल्लयुद्ध। वस्तु=पदार्थ। स्ववेश्मन=अपना घर। वेश्मन=घर। आसनं=आसन। गृहं=घर। मद्गृहं=मेरा घर। कारागृहं=जेलखाना।

विशेषण

मन्वानः=मानने वाला। भीषण=भयंकर। संशोधित=शुद्ध किया हुआ। कारागृहीत=जेल में पड़ा हुआ। कृतकृत्य=कृतार्थ। दीक्षित=जिसने दीक्षा ली हुई है। बलिष्ठ=बलवान्। उचित=योग्य, ठीक, मुनासिब।

अन्य

बहुधा=अनेक प्रकार से। पुरा=प्राचीन काल में। किल=निश्चय से। यथोचित=योग्यतानुसार। इति=ऐसा। द्विधा=दो प्रकार से। दण्डवत=सोटी के समान। वस्तुतः=सचमुच।

क्रिया

जित्वा=जीत करके। निरुध्य=बंद करके। समुपवेश्य=बैठाकर। आकर्ण्य=सुनकर। प्रणम्य=नमस्कार करके। संपूज्य=पूजा करके। हत्वा=हनन करके। घातयित्वा=हनन करके। वृणीष्व=चुन। वरयामास=चुना। आसीत्=था। अकरोत्=करता था। प्रदास्यामि=दूंगा। प्रवर्तते=होता है। मोचयामास=खुला किया। निपातयामास=गिराया। प्रतिपेदिरे=प्राप्त हुए।

वाक्य

(१) पुरा किल कृष्णकृत्यो नाम एकः क्षत्रियः आसीत्।

(१) प्राचीन काल में कृष्णकृत्य नामक एक क्षत्रिय था।

(२) स दुरात्माऽन्यायेन अराजत्।

(२) वह दुष्ट आत्मा अन्याय से राज्य करता था।

(३) तेन बहवः क्षत्रियाः कारागृहे स्थापिताः ।

(३) उसने बहुत क्षत्रिय जेलखाने में डाल रखे थे ।

(४) तस्मिन् राज्यं शासति* न कोऽपि सुखं प्राप्तवान् ।

(४) उसके राज्य शासन के समय किसी को भी सुख प्राप्त नहीं हुआ ।

(५) सर्वे धार्मिकाः तस्य राज्यं त्यक्त्वा अन्यत्र गताः ।

(५) सब धार्मिक (पुरुष) उसका राज्य छोड़कर दूसरे स्थान पर गये ।

(६) श्रीकृष्णः तस्य वधमिच्छन् तस्य राजधानीं गतः ।

(६) श्रीकृष्ण उसके वध की इच्छा करता हुआ उसकी राजधानी में गया ।

(७) तेन सह भीमोऽपि आसीत् ।

(७) उसके साथ भीम भी था ।

(८) भीमसेनः कृष्णकृत्येन सह मल्लयुद्धमकरोत् ।

(८) भीमसेन ने कृष्णकृत्य के साथ मल्लयुद्ध किया ।

(४) जरासंध-कथा

(१) पुरा किल जरासंधो नाम कोऽपि क्षत्रियः आसीत् । स दुरात्मा महावीरान् क्षत्रियान् युद्धे निर्जित्य स्ववेश्मनि निरुध्य मासि-मासि कृष्णचतुर्दश्यां एकैकं हत्वा भैरवाय तेषां बलिं अकरोत् ।

(२) एवं सकल-जनपद-क्षत्रियवधे दीक्षितस्य तस्य दुरात्मनस्य वधं [illegible] श्रीकृष्णः भीमार्जुनसहितः तस्य गृहं विप्रवेषेण प्रविवेश ।

(४) जरासंध-कथा

(१) पूर्वकाल में निश्चय से जरासंध नामक कोई एक क्षत्रिय था । वह दुष्टात्मा बड़े शूर क्षत्रियों को युद्ध में जीतकर अपने घर में बन्द करके प्रत्येक महीने में कृष्ण (पक्ष के) चतुर्दशी के दिन एक-एक को हनन करके भैरव के लिये उनकी बलि करता था ।

(२) इस प्रकार सम्पूर्ण देश के क्षत्रियों का हनन करने की दीक्षा (व्रत) लिये हुए, उस दुरात्मा के वध की इच्छा करते हुए श्रीकृष्ण, भीम तथा अर्जुन के साथ उसके घर में ब्राह्मण की वेशभूषा से प्रविष्ट हुए ।

* [illegible]

(३) स तु तान् वस्तुतो विप्रान् एव मन्वानो दण्डवत् प्रणम्य यथोचितं आसनेषु समुपवेश्य मधुपर्कदानेन संपूज्य, धन्योऽस्मि, कृतकृत्योऽस्मि, किमर्थं भवन्तो मद्गृहं आगता: तद्वक्तव्यम् ।

(३) वह तो उनको सचमु ब्राह्मण ही समझकर सोटी के समा (दण्डवत्) नमस्कार करके, यथ योग्य आसनों के ऊपर बिठला मधुपर्क देकर पूजा करके, (मैं) ध हूँ, (मैं) कृतकृत्य हूँ, किस लिए अ मेरे घर आये, वह कहिये ।

(४) यद् यद् अभिलषितं तत् सर्वं भवतां प्रदास्यामि इति उवाच । तद् आकर्ण्य भगवान् श्रीकृष्णः प्रहसन् पार्थिवं तं अब्रवीत् ।

(४) जो जो आपको इच्छि होगा वह सब आपको दूंगा, ऐ बोला । यह सुनकर भगवान् श्रीकृष् हँसता हुआ उस राजा से बोला ।

(५) भद्र, वयं कृष्ण-भीमार्जुनाः युद्धार्थं समागतः । अस्माकं अन्यतमं द्वंद्वयुद्धार्थं वृणीष्व इति ।

(५) 'हे कल्याण, हम कृष् भीम, अर्जुन युद्ध के लिए आये है हमारे में से किसी एक को द्वंद्वयुद्ध लिए चुनो' (ऐसा) ।

(६) सोऽपि महाबलः 'तथा' इति वदन् द्वंद्वयुद्धाय भीमसेनं वरयामास । अथ भीमजरासंधयोः भीषणं मल्लयुद्धं पञ्चविंशति वासरान् प्रवर्तते स्म ।

(६) उस महाबली ने भी 'ठी ऐसा कहकर मल्लयुद्ध के लिए भी सेन को चुना । पश्चात् भीम अ जरासंघ इनका भयंकर मल्लयुद्ध पच्ची दिन हुआ ।

(७) अन्ते च भगवता देवकीनन्दनेन संबोधितः स भीमसेनः तस्य शरीरं द्विधा कृत्वा भूमौ निपातयामास ।

(७) अन्त में भगवान् देवकी-पु (कृष्ण) से कहे हुए, उस भीमसेन उसके शरीर के दो हिस्से करके भू पर गिराये ।

(८) एवं बलिष्ठं जरासंधम् पाण्डुपुत्रेण मारयित्वा तेन कारागृहीतान् पार्थिवान् वासुदेवो मोचयामास ।

(८) इस प्रकार बलवान् जरास को पाण्डु के पुत्र द्वारा मरवाकर, उस जेलखाने में बन्द किये हुए राजा को, श्रीकृष्ण ने छोड़ दिया ।

(९) तेऽपि तं भगवंतं बहुधा स्तुवन्तः स्वान् स्वान् जनपदान् प्रतिपेदिरे ।

(महाभारतम्)

(९) वे भी उस भगवान् को बहुत प्रकार स्तुति करते हुए अपने प्रदेश को प्राप्त हुए ।

(महाभारत से)

समास-विवरणम्

(१) दुष्टाशयः—दुष्टः आशयः यस्य स, दुष्टाशयः, दुरात्मा ।

(२) भीमार्जुनसहितः—भीमः च अर्जुनः च भीमार्जुनौ । भीमार्जुनाभ्यां सहितः, भीमार्जुन सहितः ।

(३) मधुपर्कदानं—मधुपर्कस्य दानं, मधुपर्कदानम् ।

(४) कृष्णभीमार्जुनाः—कृष्णश्च भीमश्च अर्जुनश्च, कृष्णभीमार्जुनाः ।

(५) देवकीनंदनः—देवक्याः नंदनः, देवकीनंदनः ।

(६) सकलजनपदक्षत्रियवधः—सकलं च यत् जनपदं च, सकलजनपदं । सकलजनपदस्य क्षत्रियाः, सकलजनपदक्षत्रियाः । सकलजनपदक्षत्रियाणां वधः—सकलजनपदक्षत्रियवधः ।

पाठ आठवां

संस्कृत में पुल्लिंग के ऋकारान्त, एकारान्त, ऐकारान्त, ओकारान्त तथा औकारान्त शब्द हैं, परन्तु उनमें बहुत ही थोड़े ऐसे हैं कि जो व्यावहारिक बोलचाल में आते हैं । इसलिए उनको छोड़कर [illegible] पुल्लिंग शब्दों के रूपों का प्रकार यह [illegible] हैं—

अन्नन्त पुल्लिंगी 'ब्रह्मन्' शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
(१)	ब्रह्मा	ब्रह्माणौ	ब्रह्माणः
(सं)	(हे) ब्रह्मन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	ब्रह्माणम्	,,	ब्रह्मणः
(३)	ब्रह्मणा	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभिः
(४)	ब्रह्मणे	,,	ब्रह्मभ्यः
(५)	ब्रह्मणः	,,	,,
(६)	,,	ब्रह्मणोः	ब्रह्मणाम्
(७)	ब्रह्मणि	,,	ब्रह्मसु

इसी प्रकार जिनके अन्त में 'अन्' है ऐसे आत्मन्, यज्वन्, सुशर्मन्, कृष्णवर्मन्, अर्यमन् इत्यादि अन्नन्त शब्द चलते हैं। पाठकों को उचित है कि वे इनको स्मरण करके इन शब्दों के रूप लिखें। अन्नन्त शब्दों में कई ऐसे शब्द हैं कि जिनके रूप 'ब्रह्मन्' शब्द से कुछ भिन्न प्रकार के होते हैं, उनमें 'राजन्' शब्द मुख्य है।

अन्नन्त पुल्लिंगी 'राजन्' शब्द

(१)	राजा	राजानौ	राजानः
(सं)	(हे) राजन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	राजानम्	,,	राज्ञः
(३)	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
(४)	राज्ञे	,,	राजभ्यः
(५)	राज्ञः	,,	,,
(६)	,,	राज्ञोः	राज्ञाम्
(७)	राज्ञि / राजनि	राज्ञोः	राजसु

इस शब्द के समान 'मज्जन्, सीमन्, गरिमन्, लघिमन्,

सुनामन्, दुर्णामन्, अणिमन्,' इत्यादि शब्द चलते हैं। पाठकों को चाहिए कि वे इनके रूप बनाकर लिखें, जिससे कि इनके रूप बनाना वे भूल न जायें। अब कुछ स्वरसन्धि के नियम लिखते हैं।

(१३) नियम—अ, इ, उ, ऋ इन स्वरों के सम्मुख सजातीय ह्रस्व अथवा दीर्घ यही स्वर आ जायें तो, उन दोनों स्वरों का एक सजातीय दीर्घ स्वर बनता है। जैसे—

अ+अ=आ अ+आ=आ
आ+अ=आ आ+आ=आ
इ+इ=ई ई+इ=ई
इ+ई=ई ई+ई=ई
उ+उ=ऊ ऊ+उ=ऊ
उ+ऊ=ऊ ऊ+ऊ=ऊ
ऋ+ऋ=ॠ

इनके उदाहरण नीचे दिये हैं, उनको देखने से उक्त नियम ठीक प्रकार समझ में आवेगा।

[अ]

वसिष्ठ+आश्रमः=वसिष्ठाश्रमः=अ+आ=आ
रमा+आनन्दः=रमानंदः=आ+आ=आ
हिम+अरण्यः=हिमारण्यः=अ+अ=आ
देवता+अंशः=देवतांशः=आ+अ=आ

इन उदाहरणों में प्रथम दो शब्द दिये हैं, पश्चात् उनका संधि करके एक रूप किया है, तत्पश्चात् कौन-से स्वर मिलने से कौन-सा स्वर हुआ है, यह बताया है। इसी प्रकार अन्य स्वरों के उदाहरण नीचे दिये हैं—

[इ]

कवि+इष्टम्=कवीष्टम्=इ+इ=ई

नदी+इच्छा=नदीच्छा=ई+इ=ई

कवि+ईश्वरः=कवीश्वरः=इ+ई=ई

लक्ष्मी+ईश्वरः=लक्ष्मीश्वरः=ई+ई=ई

[उ]

भानु+उदयः=भानूदयः=उ+उ=ऊ

चमू+ऊर्मिः=चमूर्मिः=ऊ+ऊ=ऊ

वधू+उच्छिष्टम्=वधूच्छिष्टम्=ऊ+उ=ऊ

सूनु+ऊरुः=सूनूरुः=उ+ऊ=ऊ

ऋकार के सन्धि प्रसिद्ध नहीं हैं, इसलिये नहीं दिये हैं।

पाठकों को चाहिए कि वे इस सन्धि-नियम को ठीक स्मरण रखें। क्योंकि यह नियम बहुत उपयोगी है। अब नीचे कुछ शब्द दिये हैं, उनको कण्ठ कीजिये:—

शब्द—पुंल्लिगी

अधिपतिः=राजा। भ्रातृ=भाई। पतिः=स्वामी। भ्रातरं=भाई को। दुर्गम्=किला। अधीशः=स्वामी, राजा। अधिकारः=हुकूमत। दीनारः=मोहर। उदन्तः=वृत्तान्त। स्वामिन्=स्वामी। बहुमानः=बहुत सम्मान। स्वामिने=स्वामी के लिये। ईशः=स्वामी। वदन्=बोलता हुआ।

नपुंसकलिंगी

भाषितम्=बोलना। यौवनं=तारुण्य, जवानी। सहस्रं=हजार। तेजस्=तेज, चमक। आर्जवं=सरलता। तेजसा=तेज से।

विशेषण

पीन = मोटा-ताजा। अधर्मशील—अधार्मिक। कृपण—कंजूस। भ्रष्टाधिकार—जिसका अधिकार छीना है। इतर—अन्य। गत—प्राप्त, गया हुआ, (संबंध में-उसके)। सुलभ—सुप्राप्य, आसान। दुर्गगत—किले के भीतर। दुर्विनीत—नम्रता-रहित। कारित—कराया। क्रूर—क्रोधी, गुस्सा करने वाला। तुष्ट—खुश। अन्याय-प्रवृत्त—अन्याय में प्रवृत्त।

अन्य

इह—इस लोक में। अमुत्र—परलोक में। मह्यम्—मुझे, मेरे लिए। अग्रे—सम्मुख।

धातु साधित

भेतव्यं—डरने योग्य। रक्षितव्यं—रक्षा करने योग्य।

क्रिया

लभते—प्राप्त करता है। अपृच्छत्—पूछा (उसने)। बिभेमि—डरता हूँ। अब्रवीत्—बोला (वह)। बिभेषि—डरता है (तू)। अभाषत—बोला (वह)। शास्ति—राज्य करता है। अवदत्—बोला (वह)। बिभेति—डरता है। अवदम्—(मैंने) कहा। अपृच्छम्—(मैंने) पूछा। अवदः—(तूने) कहा। अपृच्छः—(तूने) पूछा। अब्रवीः—(तूने) कहा। अगच्छत्—गया। शास्ति—राज्य करता है।

वाक्य

संस्कृत	भाषा
(१) [illegible] राजा [illegible]	(१) [illegible]

(२) किमर्थं स राजा तमेव पुरुषमपृच्छत् ।

(३) यतः स पुरुषः दुर्गप्रदेशाद् आगतः ।

(४) पुरुषेण राज्ञे किं कथितम् ।

(५) दुर्गपालः कृपणोऽधार्मिकः क्रूरोऽविनीतः च अस्ति इति पुरुषोऽवदत् ।

(६) तद् आकर्ण्य राजा क्रोधं प्राप्तः ।

(७) पुरुषेण उक्तम् । क्रोधः किमर्थं क्रियते । यन्मया उक्तं तत्सत्यं अस्ति ।

(८) यः पुरुषः ईश्वराद् बिभेति स इतरस्माद् कस्माद् अपि न बिभेति ।

(९) राजा तस्य वचनेन तुष्टः सन् तस्मै दीनाराणां सहस्रं ददौ ।

(१०) यः सत्यं वदति तं ईश्वरः सदैव रक्षति ।

(११) अतः सर्वे सत्यमेव वदन्ति ।

(५) कृतार्थंसत्यवादित्वम्

(२) क्यों वह राजा उसी पु
से पूछता था ।

(३) क्योंकि वह पुरुष दुर्ग-
से आया था ।

(४) पुरुष ने राजा को क्या कह

(५) दुर्गपाल कंजूस, अधार्मि
क्रूर, अनम्र है, ऐसा मनुष्य ने कहा

(६) यह सुनकर राजा क्रोध
प्राप्त हुआ ।

(७) पुरुष ने कहा—गुस्सा कि
लिये किया जाता है । जो मैंने क
वह सत्य है ।

(८) जो मनुष्य ईश्वर से ड
है, वह ईश्वर से भिन्न दूसरे किसी
भी नहीं डरता ।

(९) राजा (ने) उसके भाषण
सन्तुष्ट होकर उसको हजार मोहरें

(१०) जो सत्य बोलता है, उ
ईश्वर हमेशा रक्षा करता है ।

(११) इस कारण सब लोग
बोलते हैं ।

(५) सच बोलने से कृतकार्

दुर्गात् आगतं कंचित पुरुषं दुर्गपाल-गतं उदन्तं अपृच्छत ।

सार ने दुर्ग से आये हुए किसी एक पुरुष को दुर्गपाल-सम्बन्धी वृत्तान्त पूछा ।

(२) पुरुषः अब्रवीत् । स दुर्गपालः पीनः यौवन-सुलभेन तेजसा बलेन च युक्तः स्वर्गा-धिपतिरिव कालं नयति ।

(२) पुरुष बोला । वह दुर्गपाल मोटा-ताजा, तारुण्य के कारण प्राप्त हुए तेज से तथा बल से युक्त स्वर्ग के राजा के समान समय व्यतीत करता है ।

(३) दर्पसारः प्राह । नाहं तस्य शरीरस्वास्थ्यं पृच्छामि किन्तु कथं स प्रजाः शास्ति इति मह्यं कथय ।

(३) दर्पसार बोला । मैं उसके शरीर का स्वास्थ्य नहीं पूछता हूँ, परन्तु कैसा वह प्रजा के ऊपर राज्य करता है, यह मुझे कह ।

(४) पुरुषोऽभाषत । 'स कृपणः अधर्माधीनः दुर्विनीतः क्रूरः च अस्ति । राजा अभाषत । प्रजाभिः दोषान् तस्य राज्ञे कथयित्वा किमर्थं अधिकाराद्भ्रष्टो न कारितः ।

(४) पुरुष बोला । वह कंजूस, अधार्मिक, नम्रता-रहित और क्रोधी है । राजा बोला, प्रजाओं ने उसके दोष राजा को कथन करके क्यों अधिकार-भ्रष्ट न कराया ।

(५) पुरुषोऽभाषत् । तस्य स्वामी स्वयमेव अन्याय-प्रवृत्तः अस्ति ।

(५) पुरुष बोला । उसका स्वामी स्वयं भी अन्याय करने वाला है ।

(६) राजा अभाषत । पुरुष, त्वं [illegible] [illegible] । पुरुषः [illegible] । जानामि त्वं दुर्गपालस्य [illegible] [illegible] ।

(६) राजा बोला । हे मनुष्य तू नहीं जानता कौन मैं हूँ । पुरुष बोला— मैं जानता हूँ कि तुम दुर्गपाल के बड़े भाई [illegible] हो ।

(७) राजा अभाषत् । पुरुष [illegible]

(७) राजा बोला । यह [illegible]

वृत्तान्तं मम अग्रे कथितुं कथं न बिभेषि।

मेरे सामने कहने के लिये तू कैसे नहीं डरता है।

(८) पुरुषः अवदत्। ईश्वराद् बिभ्यत्पुरुषः तदितरस्मात् कस्माद् अपि न बिभेति।

(८) पुरुष बोला—ईश्वर से डरने वाला मनुष्य उसके सिवाय अन्य किसी से भी नहीं डरता।

(९) तथा च सत्यं वदन् जनो मनसाऽपि असत्यं न चिंतयति।

(९) उसी प्रकार सच बोलने वाला मनुष्य झूठ को मन से भी नहीं चिन्तन करता है।

(१०) अनेन वचनेन तुष्टो राजा पुरुषस्य आर्जवं दृष्ट्वा तस्मै दीनार-सहस्रं अददात् अवदत् च। सत्यभाषणे कृतनिश्चयेन पुरुषेण न कस्मादपि भेतव्यम्।

(१०) इस भाषण से खुश हुए हुए राजा ने, पुरुष की सरलता को देखकर उसको हजार मोहरें दीं और कहा—सत्यभाषण करने का निश्चय किये हुए पुरुष को किसी से भी नहीं डरना चाहिये।

(११) यतः स सदा ईश्वरेण रक्षितव्यः। सत्यावादी इह अमुत्र च बहुमानं लभते।

(११) कारण वह सदैव परमेश्वर से रक्षित होता है। सत्य भाषण करने वाला इस लोक तथा परलोक में बहुत सम्मान प्राप्त करता है।

समास–विवरणम्

(१) मालवाधिपतिः—मालवस्य अधिपतिः, मालवाधिपतिः।

(२) शरीरस्वास्थ्यम्—शरीरस्य स्वास्थ्यं, शरीरस्वास्थ्यम्।

(३) अधर्मशीलः—न धर्मः अधर्मः। अधर्मं शीलं यस्य स अधर्मशीलः।

(४) भ्रष्टाधिकारः—भ्रष्टः अधिकारः यस्मात् स, भ्रष्टाधिकारः

(५) अन्यायप्रवृत्तः—अन्याये प्रवृत्तः, अन्यायप्रवृत्तः ।
(६) दीनारसहस्त्रं—दीनाराणां सहस्त्रं, दीनारसहस्त्रम् ।
(७) सत्यभाषणं—सत्यं च तत भाषणं, सत्यभाषणम् ।
(८) कृतनिश्चयः—कृतः निश्चय येन स, कृतनिश्चयः ।

पाठ नवां

नकारान्त पुल्लिंगी शब्दों में 'श्वन्, युवन्, मघवन्,' इन शब्दों के रूप कुछ विलक्षण प्रकार से होते हैं । उनको नीचे देते हैं—

नकारान्तः पुल्लिंगी 'श्वन्' शब्द

(१)	श्वा	श्वानौ	श्वानः
(सं०)	(हे) श्वन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	श्वानम्	,,	शुनः
(३)	शुना	श्वभ्याम्	श्वभिः
(४)	शुने	,,	श्वभ्यः
(५)	शुनः	,,	,,
(६)	,,	शुनोः	शुनाम्
(७)	शुनि	,,	श्वसु

नकारान्त पुल्लिंगी 'युवन्' शब्द

(१)	युवा	युवानौ	युवानः
(सं०)	(हे) युवन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	युवानम्	,,	यूनः
(३)	यूना	युवभ्याम्	युवभिः
(४)	यूने	,,	युवभ्यः
(५)	यूनः	,,	,,

(६)	यूनः	यूनोः	यूनाम्
(७)	यूनि	,,	युवसु

नकारान्त पुंल्लिंगी 'मघवन्' शब्द

(१)	मघवा	मघवानौ	मघवानः
(सं०)	(हे) मघवन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	मघवानम्	,,	मघोनः
(३)	मघोना	मघवभ्याम्	मघवभिः
(४)	मघोने	,,	मघवभ्यः
(५)	मघोनः	,,	,,
(६)	,,	मघोनोः	मघोनाम्
(७)	मघोनि	,,	मघवसु

श्वन् (कुत्ता), युवन् (जवान), मघवन् (इन्द्र), ये इनके अर्थ हैं। इनके प्रयोग संस्कृत में बहुत बार आते हैं। इसलिये पाठकों को चाहिये कि वे इनका ठीक-ठीक स्मरण रखें। अब कुछ सन्धि के नियम देते हैं :—

(१४) नियम—पदान्त के मकार के सम्मुख क, च, ट, त, प, इन पाँच वर्गों में से कोई व्यंजन आ जाय तो उस मकार का अनुस्वार बनता है अथवा उसी वर्ग का अनुनासिक (पाँचवां व्यंजन) बनता है, जैसे:—

पीतम् + कुसुमम् = पीतं कुसुमम्, अथवा पीतङ्कुसुमम्,
रक्तम् + जलम् = रक्तं जलम् ,, रक्तञ्जलम्,
चक्रम् + ढौकति = चक्रं ढौकति ,, चक्रण्ढौकति,
पुस्तकम् + दर्शय = पुस्तकं दर्शय ,, पुस्तकन्दर्शय,
दुग्धम् + पीतम् = दुग्धं पीतम् ,, दुग्धम्पीतम्,

सम्मुख पूर्वोक्त पांच वर्ग के व्यञ्जन आने से, उस अनुस्वार अथवा मकार का, उसी वर्ग का अनुनासिक बनता है जैसेः—

अलंकार=अलङ्कारः [ज़ेवर]

पंचांगम्=पञ्चांगम् [जन्त्री]

मंदिरम्=मन्दिरम् [घर]

पंडितः=पण्डितः [विद्वान्]

पंपा=पम्पा [एक सरोवर]

परन्तु आजकल यह नियम कुछ शिथिल हुआ है। छपाई के तथा लिखने के सुभीते के लिये दोनों प्रकार के रूप छापे तथा लिखे जाते हैं। पाठकों को यही ध्यान देना चाहिये कि ये नियम विशेषतया उच्चारण के लिये होते हैं। अनुस्वार लिखा जाय अथवा परसवर्ण—अनुनासिक लिखा जाय, दोनों का उच्चारण एक ही प्रकार का होना चाहिए। जैसा :—

गंगा } इन दोनों का उच्चारण 'गङ्गा' ऐसा ही करना चाहिए।
गङ्गा }

भाषा में भी यह नियम बहुतांश में है 'कंघी, घंटा, धंदा, अंदर, [illegible], [illegible], गुंफा' इत्यादि शब्द 'कङ्घी, घण्टा, धन्दा, अन्दर, [illegible], [illegible], गुम्फा' ऐसे ही बोले जाते हैं। कोई गलती से 'घन्टा, घन्टा' ऐसा उच्चारण करेगा तो उसकी उसी समय हँसी हो जायगी। यही बात संस्कृत शब्दों की भी समझनी चाहिए।

इसी नियम १६ के विषय में भी समझना चाहिये कि अनु-[illegible] [illegible] [illegible] भी लिखा जाय तो दोनों के [illegible] [illegible] करना चाहिये। जैसा :—

[illegible]

[illegible]

वृक्षम् आलोक्य=(इसका उच्चारण)=वृक्षमालोक्य

दृष्टम् अस्ति= " =दृष्टमस्ति

सुगमता के लिये किसी प्रकार लिखा जाय परन्तु उच्चारण एक जैसा होना चाहिये। यदि किसी कारण वक्ता उनको अलग बोलना चाहे तो भी बोल सकता है। इस पुस्तक में पाठकों के सुभीते के लिये मकार, अनुस्वार तथा स्वर बहुत स्थान पर अलग ही छापे हैं। अब कुछ शब्द नीचे देते हैं।

शब्द—पुंल्लिंगी

स्पृशन्—स्पर्श करता हुआ। व्यपदेशः—कुटुंब, नाम, जाति। अभावः—न होना। नाथः—स्वामी। गजः—हाथी। यूथः—समुदाय। अभ्युपायः—उपाय। पर्वतः—पहाड़। दूतः—दूत, नौकर। पतिः—स्वामी। जन्तुः—प्राणी। शशकः—खरगोश। चंद्रः—चांद। शशांकः—चांद। प्रतिकारः—प्रतिबंध, उपाय। वाचकः—बोलने वाला।

स्त्रीलिंगी

पिपासा—प्यास। तृषा—प्यास। वृष्टिः—वर्षा। आहतिः—आघात। वृष्ट्याः—वर्षा के।

नपुंसकलिंगी

कुसुमं—फूल। जीवनं—जिन्दगी। निमज्जनं—स्नान, डुबकी [illegible] कुलं—कुटुम्ब। चंद्रबिम्बं—चंद्र की छाया। अज्ञानं—ज्ञान रहितता। ह्रदः—तालाब। तीरं—किनारा। शस्त्रं—हथियार [illegible] सरः—तालाब।

विशेषण

[illegible]—[illegible]। [illegible]—छोटा। तृषार्त—प्यासा। कर्तव्य—[illegible]

योग्य । समायात—आया हुआ । प्रेषित—भेजा हुआ । कंपमान—कांपता हुआ । आकुल—व्याकुल । अवध्य—वध न करने योग्य । आलोचित—देखा हुआ । रक्त—लाल । संजात—हो गया, हुआ-हुआ । निर्मल—साफ़ । आगंतव्य—आने योग्य, आना । चलित—चला हुआ । निःसारित—हटाया हुआ । चूर्णित—चूरण किया हुआ । अनुष्ठित—किया हुआ । उद्यत—तैयार, ऊँचा किया हुआ । युक्त—योग्य ।

इतर शब्द

कदाचित्—किसी समय । क्व—कहां । वारान्तरं—दूसरे दिन । सन्निधं—पास । अन्यथा—दूसरे प्रकार । अज्ञानतः—अज्ञान से । नातिदूरम्—पास । प्रत्यहं—हर दिन । कुतः—कहां से । भवदन्तिकं—आपके पास । यथार्थ—सत्य । ज्ञानतः—ज्ञान से ।

क्रिया

दर्शितवान्—दिखाया । उच्यताम्—कहिये, कहो, यामः—जाते हैं । कुर्मः—करते हैं । प्रतिज्ञाय—प्रतिज्ञा करके । आरुह्य—चढ़कर । आह्वयामि—बुलाता हूं । प्रणम्य—नमस्कार करके । गच्छ—जा । [illegible]—क्षमा कीजिये । विधास्यते—करेगा । [illegible]—[illegible] होता है । [illegible]—दूर करो ।

वाक्य

संस्कृत	भाषा
(१) [illegible] ।	(१) [illegible] है ।
(२) [illegible] ।	(२) [illegible] करते हैं ।
[illegible] ।	

(३) पर्वतस्य शिखरे मृगाश्च[2]-रन्ति ।

(४) उद्याने बालाश्चरन्ति[3] ।

(५) मार्गे रथाश्चरन्ति[4] ।

(६) ततो नरपतिरतिदूरं[5] गत्वा वनं दर्शितवान् ।

(७) अनंतरं रामस्वरूपोऽचिं[6]-तयत् ।

(८) शृणुत, मयाद्यैष[7][8] लेखोलेख[9]-नीयः ।

(९) तथाऽनुष्ठितेऽश्वपतिर्नल[10][11][12]-मुवाच[13] ।

(१०) शृणु, एते ग्रामरक्षका-स्त्वया[14] हताः । एतत्त्वया[15] नैव[16] साधु कृतम् ।

(६) व्यपदेशो अपि सिद्धि-स्यात् ।

(१) कदाचित् वर्षासु अपि वृष्टेः

(३) पर्वत के शिखर पर [मृ]ग घूमते हैं ।

(४) बाग़ में लड़के घूमते हैं ।

(५) मार्ग में रथ घूमते हैं ।

(६) पश्चात् राजा ने बहुत दूर जाकर वन दिखाया ।

(७) बाद में रामस्वरूप सोचने लगा ।

(८) सुनिये, मैंने आज यह लेख लिखना है ।

(९) वैसा करने पर अश्वपति नल को बोला ।

(१०) सुनो, ये ग्राम के रक्षक तूने मारे हैं । यह तूने नहीं अच्छा किया ।

(६) नाम में भी सिद्धि होगी ।

(१) किसी समय बरसात में भी

---

२ मृगाः + चरन्ति । ३ बालाः + चरन्ति । ४ रथाः + चरन्ति । ५ नरपतिः + अति । ६ रामस्वरूपः + अचिंतयत् । ७ मया + अद्य । ८ अद्य + एषः । ९ लेखः + लेख० । १० तथा + अनुष्ठिते । ११ अनुष्ठिते + अश्वप० । [illegible] १३ नलं + उवाच । १४ रक्षकाः + त्वया । १५ एतत् + त्वया । १६ न + एव ।

अभावात् तृषार्तो गजयूथो यूथपतिं प्राह। "नाथ, कोऽस्त्युपायोऽस्माकं[1] जीवनाय।"

(२) अस्ति अत्र क्षुद्र जन्तूनां निमज्जन-स्थानम्।[2] वयं तु निमज्जनाभावाद् अंधा एव सञ्जाताः।

(३) क्व यामः? किं कुर्मः।" ततो हस्तिराजो नातिदूरं गत्वा निर्मलं ह्रदं दर्शितवान्।

(४) ततो दिनेषु गच्छत्सु[3] तत्तीरावस्थिताः[4] क्षुद्रशशकाः गजपादाहतिभिः चूर्णिताः।

(५) अनन्तरं शिलीमुखो नाम शशकः चिन्तयामास। अनेन गजयूथेन पिपासाकुलितेन[5] प्रत्यहं[6] अत्र आगन्तव्यम्।

(६) अतो विनश्यति अस्मत्कुलम्। ततो विजयो नाम वृद्धशशको ऽवदत्।

(७) "मा विषीदत। [illegible]

वृष्टि न होने के कारण प्यास से दुखित हाथियों के समूह ने समुदाय के राजा से कहा—"हे स्वामिन्! कौन-सा उपाय है हमारे जीने के लिये।

(२) यहां छोटे प्राणियों के लिये स्नान का स्थान है। हम तो स्नान न होने से अन्धे के समान हो गये हैं।

(३) कहां जाएं, क्या करें।" पश्चात् हाथियों के राजा ने समीप ही जाकर एक स्वच्छ तालाब दिखलाया।

(४) कुछ दिन व्यतीत होने पर उस किनारे पर रहने वाले छोटे खर-गोश हाथियों के पाँवों के आघात से चूर्ण हुए।

(५) बाद में शिलीमुख नामक एक खरगोश सोचने लगा। इस प्यास से व्याकुल हाथियों के समूह से प्रति दिन यहाँ आना है।

(६) इसलिये [illegible] विजय नामक बूढ़ा खरगोश बोला।

(७) "दुःख न कीजिये, [illegible]

[illegible]

प्रतीकारः कर्तव्यः।" ततोऽसौ[7] प्रतिज्ञाय चलितः।

(८) गच्छता च तेन आलोचितम्। कथं मया गजयूथस्य समीपे स्थित्वा वक्तव्यम्। यतः गजः स्पृशन् अपि हन्ति। अतो अहम् पर्वत शिखरं आरुह्य यूथनाथं संवादयामि।

(९) तथा अनुष्ठिते यूथनाथः उवाच। "कः त्वम्। कुतः समायातः।" स ब्रूते—"शशकोऽहम्[8]। भगवता चन्द्रेण भवदन्तिकं प्रेषितः।"

(१०) यूथपतिः आह—"कार्य उच्यताम्। विजयो ब्रूते—"उद्यतेषु अपि शस्त्रेषु दूतोऽन्यथा न वदति। सदा एव अवध्यभावेन यथार्थस्य एव वाचकः।

(११) तद् अहं तवाज्ञया ब्रवीमि। शृणु, यद् एते चन्द्रसरो-रक्षकाः शशकाः त्वया निःसारिताः तत् न युक्तं कृतम्।

(१२) यतः ते चिरं अस्माकं

प्रतिबन्ध करना है" पश्चात् वह प्रतिज्ञा करके चला।

(८) जाते हुए उसने सोचा। किस प्रकार मैंने हाथियों के समूह के पास रहकर बोलना है, क्योंकि हाथी स्पर्श करने से ही मारता है। इस कारण मैं पहाड़ की चोटी पर चढ़कर हाथियों के समुदाय के स्वामी के साथ बात-चीत करता हूँ।

(९) वैसा करने पर समूह का स्वामी बोला। "तू कौन है। कहाँ से आया है।" वह बोलता है। "मैं खरगोश (हूँ)। भगवान् चन्द्र ने आपके पास भेजा है।"

(१०) समुदाय के राजा ने कहा—"काम कहिए।" विजय बोलता है—"शस्त्र खड़े होने पर भी दूत असत्य नहीं बोलता, हमेशा ही अवध्य होने के कारण सत्य का ही बोलने वाला (होता है)।

(११) तो मैं तेरी आज्ञा से बोलता हूँ। सुन, जो ये चन्द्र के तालाब के रक्षक खरगोश तूने हटाये (मारे) वह नहीं ठीक किया।

(१२) क्योंकि वे बहुत समय से

[7] ततः+असौ। [8] शशकः+अहम्। [9] [illegible]

(६) चन्द्रसरोरक्षकाः—चन्द्रस्य सरः चन्द्रसरः । चन्द्रसरः रक्षकाः
चन्द्रसरोरक्षकाः ।

(७) अज्ञानं—न ज्ञानं अज्ञानम् ।

(८) वारान्तरं—अन्यः वारः वारान्तरम् ।

(९) ग्रामान्तरं—अन्यः ग्रामः ग्रामान्तरम् ।

(१०) देशान्तरं—अन्यः देशः देशान्तरम् ।

पाठ दसवां

इन्नन्तः पुंल्लिगी 'करिन्' शब्द

(१)	करी	करिणौ	करिणः
सं	(हे) करिन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	करिणम्	,,	,,
(३)	करिणा	करिभ्याम्	करिभिः
(४)	करिणे	,,	करिभ्यः
(५)	करिणः	,,	,,
(६)	,,	करिणोः	करिणाम्
(७)	करिणि	,,	करिषु

इस प्रकार हस्तिन् (हाथी), दण्डिन् (दण्डी), शृङ्गिन् (सींग-वाला), चक्रिन् (चक्रवाला), स्रग्विन् (मालाधारी) इत्यादि शब्द चलते हैं। पाठकों को चाहिये कि वे इन शब्दों को चलाकर अपना अभ्यास दृढ़ करें।

वस्वन्त पुंल्लिगी 'विद्वस्' शब्द

१	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
(सं)	(हे) विद्वन्	(हे) विद्वांसौ	(हे) विद्वांसः

२	विद्वांसम्	विद्वांसौ	विदुषः
३	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
४	विदुषे	"	विद्वद्भ्यः
५	विदुषः	"	"
६	"	विदुषोः	विदुषाम्
७	विदुषि	"	विद्वत्सु

इस शब्द के समान 'तस्थिवस् (खड़ा), सेदिवस् (बैठा हुआ), शुश्रुवस् (सुनता हुआ), दाश्वस् (दाता), मीढ्वस् (सिंचक), जगन्वस् (संचारक) इत्यादि वस्वंत शब्द चलते हैं। जिनके अन्त में प्रत्यय होता है। उनको वस्वंत शब्द कहते हैं।

संस्कृत में एक शब्द के समान ही कई शब्दों के रूप हुआ करते हैं। जब पाठक एक शब्द को स्मरण करेंगे तब उनमें उसके समान शब्द के रूप बनाने की शक्ति आ जायगी। इसी प्रकार कई एक पुल्लिंगी शब्दों के रूप बनाने में पाठक इस समय तक योग्य हो गये हैं। अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त, अन्नन्त, इन्नन्त, वस्वन्त, नान्त इतने पुल्लिंगी शब्द पाठकों को स्मरण हो चुके हैं और इनके समान शब्दों के रूप अब पाठक बना भी सकते हैं। पुल्लिंगी शब्दों में मुख्य-मुख्य अब दो-चार शब्द रहे हैं। तत्पश्चात् कुछ सर्वनाम के रूप बताकर नपुंसकलिंगी शब्दों के रूप दिखलाने हैं। इसलिए पाठकों से सविनय निवेदन है कि वे ऐसी भी [illegible] न मानते हुए हर एक पाठ को [illegible] करें, [illegible] कि न तो [illegible] है, और न [illegible] कर सकता है।

[illegible]

परन्तु पाठकों के पुरुषार्थ की भी आवश्यकता है, उसके बिना कार्य नहीं चलेगा। अस्तु, अब कुछ व्याकरण के नियम देते हैं:—

विसर्ग

(१६) नियम—क, ख, प, फ के पूर्व जो विसर्ग आता है वह जैसा का तैसा ही रहता है। जैसे—दुष्टः पुरुषः। कृष्णः कंसः। गतः खगः। मधुरः फलागमः।

(१७) नियम—पदान्त के विसर्ग का च, छ के पूर्व श् बनता है। जैसे—

पूर्णः+चन्द्रः—पूर्णश्चन्द्रः
हरेः+छत्रम्—हरेश्छत्रम्
रामः+तत्र—रामस्त
कवेः+टीका—कवेष्टीका

(१८) नियम—पदान्त के विसर्ग के सम्मुख श, ष, स, आने से विसर्ग का श, ष, स, बनता है, परन्तु किसी समय विसर्ग ही कायम रहता है। जैसे—

धनंजयः+सर्वः=धनंजयस्सर्वः (अथवा) धनंजयः सर्वः
देवाः+षट्=देवाष्षट् " देवाः षट्
श्वेतः+शंखः=श्वेतश्शंखः " श्वेतः शंखः

ये नियम अच्छी प्रकार ध्यान में आने के पश्चात् निम्नलिखित शब्दों को स्मरण कीजिये:—

शब्द-क्रियापद

निश्चक्रुः—निश्चय किया (उन्होंने)। त्रुट्यन्ति—टूटते हैं (वे)। [illegible]—[illegible] (उन्होंने)। कुर्याम्—करूँ। चर्वामः—चर्वण करें। [illegible]—[illegible] हो गये, (वे) भूल गये। संगृह्णीमः—

वाक्य

(१) वानरा[1] वृक्षे तिष्ठन्ति ।	(१) बन्दर वृक्ष पर ठहरते हैं।
(२) सर्पो वनमगच्छत्[2] ।	(२) सांप बन को गया।
(३) मम शरीरं ज्वरेण कृशं जातम् ।	(३) मेरा शरीर ज्वर से कमजोर हुआ है।
(४) कुमारस्य एकः शुचिः करो[3]ऽस्ति तथा अन्यो[4] न ।	(४) लड़के का एक हाथ शुद्ध है तथा दूसरा नहीं।
(५) मया ह तौ कुमारौ नगरं गच्छतः ।	(५) मेरे साथ कुमार शहर जाते हैं।
(६) अहं तत्र यामि यत्र पंडिता[5] वसन्ति ।	(६) मैं वहाँ जाता हूँ जहाँ पंडित लोग रहते हैं।
(७) यस्य बुद्धिर्बलमपि[6] तस्यैव ।	(७) जिसकी बुद्धि (होती है) शक्ति भी उसी की है।
(८) खगा[7] वृक्षादुड्डीयन्ते[8] ।	(८) पक्षी वृक्ष से उड़ते हैं।
(९) तस्य हस्तान्माला[9] पतिता ।	(९) उसके हाथ से माला गिरी।
(१०) तत्र नैव गमिष्यामि ।	(१०) वहाँ नहीं जाऊँगा।

---

१ वानराः+वृक्षे । २ वनं+अगच्छत् । ३ करः+अस्ति । ४ अन्यः+न । ५ पंडिताः+वसन्ति । ६ बुद्धिः+बलम् । ७ खगाः+वृक्षात् । ८ वृक्षात्+उड्डीयन्ते । ९ हस्तात्+माला ।

छते ग्रासं चर्वामः भंगः उपैतु अस्मान्।

तो टूट आ जाय हम पर।

(७) एवं शपथेषु कृतेषु यो निश्चयः कृतस्तस्य पालनं आवश्यकं बभूव।

(७) इस प्रकार शपथें कर चुकने पर जो निश्चय किया गया उसका पालन आवश्यक हो गय।

(८) एवं जाते सर्वे अवयवा अशुष्यन्। *अस्थि चर्म-मात्रं अवशिष्यत्।

(८) इस प्रकार होने पर, सब अवयव सूख गये। हड्डी-चमड़ी भर शेष रह गई।

(९) तदा "न साधु कृतं अस्माभिः" इति सर्वेषां चक्षूंषी उन्मीलिते,—"उदरेण विना वयं अगतिकाः।"

(९) तब, "ठीक नहीं किया हमने," सो सबकी आँखें खुल गईं—"पेट के बिना हमारी गति नहीं है।"

(१०) तत् स्वयं न श्राम्यति। परं यावद् वयं तस्य पोषं विदध्मः तावद् अस्माकं पोषणं भवति इति सर्वे सम्यग् जज्ञिरे।

(१०) वह (पेट) स्वयं तो नहीं श्रम करता, परन्तु जब तक हम उसका पोषण करते हैं, तब तक (ही) हमारा पोषण होता है, ऐसा सबने ठीक प्रकार जान लिया।

(११) तात्पर्यम्—कस्मिंश्चित् काले एकस्यां राजधान्यां चिर-युद्ध प्रसंगात् राज्ञः कोशागारे धनसं-[illegible] स राजा प्रजाभ्यो बलिं जग्राह।

(११) तात्पर्य—किसी समय एक राजधानी में हमेशा युद्ध होने के कारण राजा के खजाने में (पैसा) कम होने पर उस (शहर के) राजा ने प्रजाओं से 'कर' लिया।

(१२) तत् प्रजा नाभिमेनिरे।

(१२) वह प्रजा (जनों) ने नहीं

*अस्थि ✕ [illegible] । न [illegible] ✕ [illegible] ।

वद्धपरिकरा दिवाऽपि लुण्ठनं विधास्यन्ति ।

कमर कसकर दिन में भी लूट किया करेंगे ।

१४
(१८) एकोऽन्यं न अनुरोत्स्यते ।
१५
मर्यादातिक्रमः प्रमाथाश्च उद्भविष्यन्ति । राजा प्रजाश्च समं एव न शिष्यन्ति ।

(१८) एक दूसरे को नहीं येगा । मर्यादा का उल्लंघन अन्याय होंगे । राजा एवं प्रजा, समान, न बच रहेगी ।

समास-विवरणम्

१ हस्तपादाद्यवयवाः—हस्तश्च पादश्च हस्तपादौ । हस्तप आदि येषां ते हस्तपादादयः ।
हस्तपादादय अवयवाः ।

२ आनुकूल्यम्—अनुकूलस्य भावः = आनुकूल्यम् ।

३ वद्धपरिकराः—वद्धाः परिकरा यैः ते = वद्धपरिकराः ।

४ मर्यादातिक्रमः—मर्यादाया अतिक्रमः = मर्यादातिक्रमः ।

५ सशपथम्—शपथेन सह, सशपथम् ।

पाठ ग्यारहवां

तकारान्त पुंल्लिगी 'धीमत्' शब्द

१	धीमान्	धीमन्तौ	धीमन्तः
सं०	(हे) धीमन्	(हे) ,,	(हे) ,,
२	धीमन्तम्	,,	धीमतः

३	धीमता	धीमद्भ्याम्	धीमद्भिः
४	धीमते	,,	धीमद्भ्यः
५	धीमतः	,,	,,
६	,,	धीमतोः	धीमताम्
७	धीमति	,,	धीमत्सु

'धीमत्' शब्द 'मत्' प्रत्यय वाला है। 'मत्' प्रत्यय वाले तथा 'वत्,' 'यत्' प्रत्यय वाले शब्द इसी प्रकार चलते हैं।

मत् प्रत्यय वाले शब्द—धीमत्, बुद्धिमत्, आयुष्मत् इत्यादि।

वत् प्रत्यय वाले शब्द—भगवत्, मघवत्, भवत्, यावत्, तावत्, एतावत् इत्यादि।

यत् प्रत्यय वाले शब्द—कियत्, इयत्, इत्यादि

तकारान्त पुल्लिंगी 'महत्' शब्द

१	महान्	महान्तौ	महान्तः
सं०	(हे) महन्	(हे) ,,	(हे) ,,
२	महान्तम्	,,	महतः
३	महता	महद्भ्याम्	महद्भिः
४	महते	,,	महद्भ्यः
५	महतः	,,	,,
६	महतः	महतोः	महताम्
७	महति	,,	महत्सु

पूर्वोक्त धीमत् और महत् शब्द में भेद यह है कि, धीमत् शब्द में (प्रथमा का एकवचन छोड़कर) [illegible], [illegible] और [illegible] के [illegible] में कहीं भी [illegible] नहीं होता है, परन्तु महत् शब्द के [illegible] होता है। उदाहरणार्थ—

(१)	धीमान्	धीमन्तौ	धीमन्तः—[illegible]
(२)	महान्	महान्तौ	महान्तः—[illegible]

इसी प्रकार अन्यान्य शब्द विशेष पाठकों को जानने चाहियें।

—सन्धि—

नियम (१९)—'सः' शब्द के अन्त का विसर्ग, अ के सिवाय कोई अन्य वर्ण सम्मुख आने पर, लुप्त हो जाता है—

सः+आगतः—स आगतः । सः+गच्छति—स गच्छति । सः+श्रेष्ठ—स श्रेष्ठः ।

'सः' के सामने अ आने से दोनों का 'सोऽ' बनता है।

(देखो नियम ११) जैसे—

सः+अगच्छत्—सोऽगच्छत् । सः+अवदत्—सोऽवदत् । सः+अस्ति—सोऽस्ति ।

नियम (२०)—जिसके पूर्व अकार है ऐसे पदान्त के विसर्ग के पश्चात् मृदु व्यञ्जन आने से, उस अकार और विसर्ग का 'ओ' बन जाता है। जैसे—

मनुष्यः+गच्छति—मनुष्यो गच्छति । अश्वः+मृतः=अश्वो मृतः । पुत्रः+लब्धः—पुत्रो लब्धः । अर्थः+गतः—अर्थो गतः ।

नियम (२१)—जिसके पूर्व आकार है ऐसे पदान्त का विसर्ग, उसके सम्मुख स्वर अथवा मृदु व्यञ्जन आने से, लुप्त हो जाता है जैसा—

मनुष्याः+अवदन्=मनुष्या अवदन् । असुराः+गताः=असुरा गताः । देवाः+आगताः=देवा आगताः । वृक्षाः+नष्टाः=वृक्षा नष्टाः

नियम (२२)—अ आ को छोड़कर अन्य स्वरों के बाद आने वाले विसर्ग का र बनता है, अगर उनके सम्मुख स्वर अथवा मृदु व्यञ्जन आता हो। जैसा—

हरिः+अस्ति=हरिरस्ति । भानुः+उदेति=भानुरुदेति ।

कवेः+आलेख्यम्=कवेरालेख्यम्।

ऋषिपुत्रैः+आलोचितम्—ऋषिपुत्रैरालोचितम्।

देवैः+दत्तम्—देवैर्दत्तम्। हरेः+मुखम्—हरेर्मुखम्।

हस्तैः+यच्छति=हस्तैर्यच्छति।

विसर्ग के पूर्व अ अथवा आ आने पर नियम १८ तथा २० के अनुसार सन्धि होगी।

नियम—(२३) र् के सामने र् आने से प्रथम र् का लोप होता है, और लुप्त रकार का पूर्व स्वर दीर्घ हो जाता है। जैसे—

ऋषिभिः+रचितम्=ऋषिभी रचितम्। भानु+राजते=भानू राजते। शस्त्रैः+रक्षितम्=शस्त्रै रक्षितम्। हरेः+रक्षकः=हरे रक्षकः।

पाठकों को चाहिए कि वे इन सन्धि-नियमों को बारम्बार पढ़कर ठीक-ठीक समझ रक्खें। प्राचीन पुस्तकें पढ़ने के लिये सन्धि-नियमों के परिज्ञान के बिना काम नहीं चल सकता। तथा नियमानुसार अच्छा संस्कृत बोलने के लिये स्थान-स्थान पर सन्धि करने की आवश्यकता होती है।

शब्द—पुल्लिंगी

[illegible]

चलने वाला । वधः—हनन । वंशः—कुल । मूर्ध्नि—शिर में। यत्नः—प्रयत्न । महापंकः—बड़ा कीचड़ ।

स्त्रीलिंगी

प्रवृत्तिः—प्रयत्न, पुरुषार्थ । यौवन (दशा)—जवानी (की अवस्था) ।

नपुंसकलिंगी

भाग्य—सुदैव । कंकरण—चूड़ी । शील—स्वभाव । सरः—तालाब । तीर—किनारा । अर्जन—कमाना । ललाट—सिर । वचः—भाषरण ।

विशेषरण

समीहित—युक्त, इष्ट । अनिष्ट—जो इष्ट नहीं । भद्र—कल्याण । वंशहीन—कुलहीन । अधीत—अध्ययन किया । आलोचित—देखा हुआ । विधेय—करने योग्य । मारात्मक—हिंसा-प्रवृत्ति वाला । गलित—गला हुआ । हस्तस्थ—हाथ में रक्खा हुआ । प्रतीत—विश्वस्त । धृत—धरा हुआ । आदिष्ट—आज्ञपित । निमग्न—डूबा हुआ । दुर्गत—बुरी अवस्था में फँसा हुआ । अक्षम—असमर्थ । दुर्वृत्त—दुराचारी । दुर्निवार—दूर करने के लिये कठिन । सयत्न—प्रयत्नशील ।

अन्य

अविचार्य—विचार न करके । तुभ्यम्—तुमको । अहह—अरे ! रे !!! । प्राक्—पहिले । प्रकाशम्—बाहर ।

क्रिया

[illegible]—[illegible] । उपगम्य—पास आकर । प्रयतताम्—

दीजिये। संभवति—संभव है (होता है)। निरूपयामि—देखता हूँ। अपश्यम्—देखा। पलायितुम्—दौड़ने के लिये। प्रोज्झितुं—मिटाने के लिये। आसम्—(मैं) था। चरतु—करे, चले। उत्थापयामि—उठाता हूँ।

(८) विप्र-व्याघ्रयोः कथा	(८) ब्राह्मण और शेर की कथा
(१) अहमेकदा दक्षिणारण्ये चरन् अपश्यम्—एको वृद्ध व्याघ्रः स्नातः कुशहस्तः सरस्तीरे ब्रूते।	(१) मैंने एक समय दक्षिण अरण्य में घूमते हुए देखा—एक बूढ़ा शेर स्नान करके दर्भ हाथ में धरकर तालाब के तीर पर कह रहा है।
(२) भो भो पान्थाः! इदं सुवर्ण कंकणं गृह्यताम्। ततो लोभाकृष्टेन केनचित् पान्थेनालोचितम्।	(२) हे पथिको! यह सोने की चूड़ी ले लो। इसके बाद लोभ से खिंचे हुए किसी पथिक ने सोचा—
(३) भाग्येनैतत् संभवति। किन्तु अस्मिन् आत्मसन्देहे प्रवृत्तिर्न विधेया।	(३) भाग्य से यह संभव होता है। परन्तु इस आत्मा के संशय (जान के खतरे) में प्रवृत्त नहीं होना चाहिये।
(४) यतो अनिष्टादिष्टलाभेऽपि [illegible] जायते।	(४) क्योंकि बुरी जगह से अच्छा लाभ होने पर भी [illegible] नहीं होता है।
(५) किन्तु सर्वत्र अर्थार्जने प्रवृत्तिः संदेह एव। तथा च उक्तम्	(५) परन्तु सब जगह धन कमाने में प्रवृत्ति संदेह (खतरा) ही है।

अनारुह्य नरो भद्राणि न पश्यति ।

(६) तत् निरूपयामि तावत् । प्रकाशं ब्रूते "कुत्र तव कंकणम्" व्याघ्रो हस्तं प्रसार्य दर्शयति ।

(७) पान्थो[९]ऽवदत् कथं—मारात्मके त्वयि विश्वासः । [१०]व्याघ्र उवाच—"शृणु रे पान्थ । प्राग् एव यौवनदशायां अति दुर्वृत्त आसम् ।

(८) अनेक 'गोमानुषाणां [११]वधान्मृता मे पुत्राः दाराश्च । [१२]वंशहीनश्च अहम् ।

(९) तत् केनचिद् धार्मिके[१३]णाहम् आदिष्टः—दानधर्मादिकं चरतु भवान् ।

(१०) [१४]तदुपदेशादिदानीम् अहं स्नानशीलो दाता वृद्धो गलितनखदन्तो कथं न विश्वासभूमिः ।

(११) मम च एतावान् लोभ

कहा भी है—संशय के ऊपर चढ़े बिना मनुष्य कल्याण को नहीं देखता ।

(६) इसलिये देखता हूँ । बाहर (खुले आवाज़ में) बोलता है-"कहाँ (है) ? तेरी चूड़ी ?" शेर हाथ खोलकर बताता है ।

(७) पथिक बोला—किस प्रकार हिंसारूप तेरे में विश्वास (हो) ? शेर बोला—"सुन रे पथिक ! पहिले ही जवानी में (मैं) बहुत दुराचारी था ।

(८) बहुत गौवों, मनुष्यों के वध से मेरे पुत्र मर गये और स्त्रियां; और वंशरहित मैं (हुआ) ।

(९) तब किसी धार्मिक ने मुझे कहा—दान धर्मादिक कीजिए आप ।

(१०) उसके उपदेश से अब मैं स्नानशील, दाता, बुड्ढा, जिसके नाखून और दांत गल गये हैं, क्योंकर विश्वास-योग्य नहीं हूँ ।

(११) और मेरा इतना लोभ मैं

विरतो[15] येन स्वहस्तस्थम् अपि सुवर्ण-कंकणं यस्मै-कस्मै-चिद् दातुं इच्छामि।

(१२) तथापि व्याघ्रो मानुषं खादति इति लोकापवादो दुर्निवारः। यतो लोकः गतानुगतिकः मया च धर्मशास्त्राणि अधीतानि।

(१३) त्वं च अतीव[16] दुर्गतस्तेन तुभ्यं[17] दातुं[18] सयत्नोऽहम्। तदत्र सरसि स्नात्वा सुवर्णकंकणं गृहाण।

(१४) ततो यावद् असौ तद्वचः प्रतीतो लोभात् सरः स्नातुं प्रविशति, तावत् महापङ्के निमग्नः पलायितुम् अक्षमः।

(१५) पङ्के पतितं दृष्ट्वा व्याघ्रोऽवदत्। अहह! महापङ्के पतितोऽसि। अतः त्वाम् अहम् उत्थापयामि।

(१६) इति उक्त्वा शनैः शनैः उपगम्य, तेन व्याघ्रेण धृतः स पान्थः अचिन्तयत्।

छुटकारा है कि अपने हाथ में पड़ा भी सोने का कंकण जिस-किसी को देना चाहता हूँ।

(१२) तथापि शेर मनुष्य को खाता है, लोगों में ऐसी निंदा है, वह दूर होनी कठिन है क्योंकि लोग अंधविश्वासी हैं, और मैंने धर्म-शास्त्र पढ़े हैं।"

(१३) और तू बहुत बुरी हालत में है इसलिए तुझे देने के लिए मैं प्रयत्नवान् हूँ। तो इस तालाब में स्नान करके सोने की चूड़ी ले लो।

(१४) बाद, जब उसके भाषण पर विश्वास कर लोभ से तालाब में स्नान के लिए प्रविष्ट हुआ, तब बड़े कीचड़ में फँसा, और भागने के लिए असमर्थ रहा।

(१५) कीचड़ में फँसा हुआ (देख) शेर ने कहा—अहो ! बड़े कीचड़ में फँस गए हो, इसलिए तुमको मैं उठाता हूँ।

(१६) यह कहकर धीरे-धीरे पास आकर, उस शेर से पकड़ा हुआ वह पथिक सोचने लगा—

[illegible]

(१७) तन् मया भद्रं न कृतं यद् अत्र मारात्मके विश्वासः कृतः। स्वभावो हि सर्वान् गुणान् अतीत्य मूर्ध्नि वर्तते।

(१७) सो मैंने अच्छा नहीं किया जो इस हिंसा-रूप में (मैंने) विश्वास किया। स्वभाव ही सब गुणों को अतिक्रमण करके सिर पर होता है।

(१८) अन्यच्च—ललाटे लिखितं प्रोज्झितुं कः समर्थः इति चिंतयन् एव असौ व्याघ्रेण व्यापादितः खादितः च।

(१८) और भी है—माथे पर लिखा हुआ दूर करने के लिए कौन समर्थ है? ऐसा सोचता हुआ ही उसे शेर ने मार डाला और खा लिया।

(१९) अतः अहं ब्रवीमि सर्वथाऽविचारितं कर्म न कर्तव्यम् इति।

(हितोपदेशः)

(१९) इसलिए मैं कहता हूँ—सब प्रकार से न सोचा हुआ कार्य नहीं करना चाहिए।

(हितोपदेश)

समास-विवरणम्

१ कुशहस्तः—कुशाः हस्ते यस्य सः कुशहस्तः।
२ लोभाकृष्टः—लोभेन आकृष्टः लोभाकृष्टः।
३ आत्मसंदेहः—आत्मनः संदेहः आत्मसंदेहः।
४ अनेकगोमानुषाणां—गावश्च मानुषाश्च गोमानुषाः; अनेके गोमानुषाः=अनेकगोमानुषाः।
५ दानधर्मादिकम्—दानं च धर्मश्च दानधर्मौ। दानधर्मौ आदि यस्य तत् दानधर्मादि=दानधर्मादिकम्।
६ अविचारितम्—न विचारितम्=अविचारितम्।

पाठ बारहवाँ

ऋकारान्त पुल्लिंगी 'पितृ' शब्द

(१)	पिता	पितरौ	पितरः
सं० (हे)	पितः	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	पितरम्	,,	पितॄन्
(३)	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
(४)	पित्रे	,,	पितृभ्यः
(५)	पितुः	,,	,,
(६)	,,	पित्रोः	पितॄणाम्
(७)	पितरि	,,	पितृषु

चतुर्थ पाठ में 'धातृ' शब्द दिया है। उसमें और इस 'पितृ' शब्द में प्रथमा, संबोधन और द्वितीया के रूपों में कुछ भेद है। जैसे—

धातृ—धाता धातारौ धातारः
पितृ—पिता पितरौ पितरः

जैसा धातृ शब्द के रकार के पूर्व आ है वैसा पितृ शब्द के रकार के पूर्व नहीं हुआ। यह विशेष भ्रातृ, जामातृ, देवृ, शस्तृ [illegible] —इन [illegible] शब्दों में भी पाया जाता है।

इन्नन्त पुल्लिंगी 'पथिन्' शब्द

(१)	पन्थाः	पन्थानौ	पन्थानः
सं० (हे)	,,	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	पन्थानम्	,,	पथः
(३)	पथा	पथिभ्याम्	पथिभिः
(४)	पथे	,,	पथिभ्यः
(५)	पथः	,,	,,

६	पथः	पथोः	पथाम्
७	पथि	,,	पथिषु

इस प्रकार मथिन्, ऋभुक्षिन्, आदि शब्द चलते हैं।

इकारान्त पुल्लिंगी 'सखि' शब्द

१	सखा	सखायौ	सखायः
सं०	(हे) सखे	(हे) ,,	(हे) ,,
२	सखायम्	,,	सखीन्
३	सख्या	सखिभ्याम्	सखिभिः
४	सख्ये	,,	सखिभ्यः
५	सख्युः	,,	,,
६	,,	सख्योः	सखीनाम्
७	सख्यौ	,,	सखिषु

'सखि' इकारान्त होने पर भी 'हरि' शब्द के समान रूप नहीं हैं। यह बात पाठकों को ध्यान में रखनी चाहिये। इस प्रकार पति आदि शब्द हैं जो विशेष प्रकार से चलते हैं। जिनका विचार हम आगे करेंगे।

(२४) नियम—विसर्ग के पूर्व अकार हो तथा उसके बाद अ के सिवाय दूसरा कोई स्वर आ जाय तो विसर्ग का लोप हो जाता है। जैसे—

रामः	+	इति	=	राम इति
देवः	+	इच्छति	=	देव इच्छति
सूर्यः	+	उदयते	=	सूर्य उदयते

(२५) नियम—शब्दान्त के 'ए, ऐ, ओ, औ,' इनके सामने कोई स्वर आने से उनके स्थान में क्रमशः 'अय्, आय्, अव् आव्' हो जाते हैं—

हड्डी । बाल्य——बालपन । कुटुम्बक——परिवार । औत्सुक्यं——उत्सुकता ।

विशेषण

हीन——न्यून । उपागत——प्राप्त । अभिहित——कहा हुआ । पराङ्मुख——पीछे मुँह किये हुए । क्रीडित——खेले हुए । लघु-चेतस——क्षुद्र बुद्धि वाला । त्रयः——तीन । मंत्रित——सोचा हुआ । स्वोपार्जित——अपनी कमाई । निषिद्ध——मना किया हुआ । ज्येष्ठ——बड़ा । ज्येष्ठतर——दोनों में बड़ा । ज्येष्ठतम्——सब से बड़ा । उदारचरित——बड़े दिल वाला । संयोजित——मिलाया हुआ ।

अन्य

धिक्——धिक्कार । क्षणं——क्षणभर । भोः——अरे ।

क्रिया

वसन्ति——रहते हैं । लभ्यते——प्राप्त होता है । संचारयति——संचार कराता है । प्रतीक्षस्व——ठहर । आरोहामि——चढ़ता हूँ । उपदिश्य——उपदेश करके । परितोष्य——संतुष्ट करके । अवतीर्य——उतरकर । क्रियते——किया जाता है । युज्यते——योग्य है । निष्पाद्यते——बनाया जाता है । उत्थाय——उठकर ।

विशेषणों का उपयोग

बुद्धिहीनः पुरुषः । निषिद्धो ग्रन्थः । ज्येष्ठो भ्राता ।
[illegible] स्त्री । निषिद्धा कथा । ज्येष्ठा भगिनी ।

(९) बुद्धिहीना विनश्यन्ति

(१) कस्मिंश्चिदधिष्ठाने[१] चत्वारो[२] ब्राह्मणपुत्राः परं मित्रभावं उपगताः वसन्ति स्म। (२) तेषु त्रयः शास्त्रपारंगताः परन्तु बुद्धिरहिताः एकस्तु[३] बुद्धिमान् केवलं शास्त्रपराङ्मुखः।

अथ कदाचित् तैः मित्रैः मंत्रितम्। (३) को गुणो[४] विद्याया येन देशान्तरं गत्वा भूपतीन् परितोष्य अर्थोपार्जना न क्रियते। तत् पूर्वदेशं गच्छामः। तथाऽनुष्ठिते[५] किंचित् मार्गं गत्वा ज्येष्ठतरः प्राह। अहो अस्माकं एकश्चतुर्थो[६] मूढः[७] केवलं बुद्धिमान्। (४) न च राजप्रतिग्रहो बुद्ध्या लभ्यते, विद्यां विना। तत् न अस्मै स्वोपार्जितं दास्यामः। तद् गच्छतु गृहम्। ततो[८] द्वितीयेन अभिहितम्। (५) अहो न युज्यते एवं कर्तुम् यतो (६) वयं बाल्यात्-प्रभृति एकत्र क्रीडिताः। तद् आगच्छतु, (७) महानुभावोऽस्मदुपार्जितवित्तस्य

---

(१) (परं मित्रभावं उपगता)—बड़े मित्र बन गये। (२) (शास्त्रपराङ्मुखः)—शास्त्र न पढ़ा हुआ।

(३) (भूपतीन् परितोष्य अर्थोपार्जना न क्रियते) राजाओं को प्रसन्न करके धन प्राप्ति नहीं की जाती है। (४) (न च राजप्रति- [illegible]) [illegible]

[illegible]

संविभागी भविष्यति इति। (८) उक्तं च—अयं निजः परो वा इति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरितानां तु वसुधैव[१०] कुटुम्बकम्, इति (९) तद् आगच्छतु एषोऽपि,[११] इति। तथाऽनुष्ठिते,[१२] मार्गाश्रितै[१३]रटव्याम्[१४] मृतसिंहस्य अस्थीनि दृष्टानि। (१०) ततश्च[१५] एकेन अभिहितम्—यद् अहो विद्याप्रत्ययः क्रियते। किंचिद् एतत् सत्वं मृतं तिष्ठति। तद् विद्याप्रभावेण जीवसहितं कुर्मः (११) अहम् अस्थिसंचयं करोमि। ततश्च एकेन औत्सुक्याद् अस्थिसंचयः कृतः (१२) द्वितीयेन चर्म-मांस-रुधिरं संयोजितम् तृतीयोऽपि[१६] यावद् जीवं संचारयति, तावद् सुबुद्धिना निषिद्धः। (१३) भोः! तिष्ठतु भवान्। एष सिंहो निष्पद्यते। यदि एनं सजीवं

---

(६) (वयं बाल्यात्-प्रभृति एकत्र क्रीडिताः) हम बचपन से एक स्थान पर खेले हैं। (७) (वित्तस्य संविभागी) द्रव्य का हिस्सेदार। (८) (अयं निजः परो वा इति गणना लघु चेतसाम्) यह अपना यह पराया ऐसी गिनती छोटे दिल वालों की है। (उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्) उदार बुद्धि वालों का पृथ्वी ही परिवार है। (९) (तै मार्गाश्रितैः) उनके मार्ग का आश्रय लेने पर—चलने पर। (१०) (विद्याप्रत्ययः क्रियते) विद्या का अनुभव लिया जाता है। (जीवसहितं कुर्मः) सजीव करेंगे। (११) (अस्थिसंचयं करोमि) मैं हड्डियाँ एकत्र करता हूँ। (१२) (यावज्जीवं संचारयति) जब जीव डालने लगा। (१३) (तावत् सुबुद्धिना निषिद्धः) तब सुबुद्धि ने मना

१० वसुधा + एव। ११ एषः + अपि। १२ तथा + अनु०। १३ मार्ग + आश्रितैः। १४ तैः + अटव्याम्। १५ ततः + च। १६ तृतीयः + अपि।

करिष्यामि, ततः सर्वानपि स व्यापादयिष्यति।' (१४) स प्राह। 'धिङ्[15] मूर्ख! नाहं विद्याया विफलतां करोमि।' ततस्तेन अभिहितम्—'तर्हि प्रतीक्षस्व क्षणम्। यावद् अहं वृक्षम् आरोहामि।'

(१५) तथानुष्ठिते, यावत् सजीवः कृतः, तावत् ते त्रयोऽपि[18] सिंहेनो-[19]त्थाय व्यापादिताः। (१६) स पुनः वृक्षाद् अवतीर्य गृहं गतः। अतोऽहं ब्रवीमि 'बुद्धिहीना विनश्यन्ति' इति।

(पंचतन्त्रम्)

सूचना—इस पाठ का भाषा में भाषान्तर नहीं दिया है। पाठक स्वयं समझने का यत्न स्वयं कर सकते हैं। जो कुछ कठिन वाक्य हैं, उन्हीं का भाषान्तर दिया है

समास-विवरणम्

(१) ब्राह्मणपुत्राः—ब्राह्मणस्य पुत्राः ब्राह्मणपुत्राः।
(२) शास्त्रपराङ्मुखः—शास्त्रात् पराङ् मुखः शास्त्रपराङ्मुखः।
(३) अर्थोपार्जना—अर्थस्य उपार्जना अर्थोपार्जना।
(४) अस्मदुपार्जितं—अस्माभिः उपार्जितं अस्मदुपार्जितं।
(५) लघुमेधसः—लघु मेधा यस्य सः [illegible]
(६) मूर्खसिंहः—मूर्खः च असौ सिंहः च मूर्खसिंहः।
(७) कुबुद्धिः—कुत्सिता बुद्धिः यस्य सः कुबुद्धिः।

पाठ तेरह

इकारान्त पुंल्लिगी 'पति' शब्द

१	पतिः	पती	पतयः
सं०	(हे) पते	(हे) ,,	(हे) ,,
२	पतिम्	,,	पतीन्
३	पत्या	पतिभ्याम्	पतिभिः
४	पत्ये	,,	पतिभ्यः
५	पत्युः	,,	,,
६	,,	पत्योः	पतीनाम्
७	पत्यौ	,,	पतिषु

जिस समय पति शब्द समास के अन्त में होता है, उस समय उसके रूप पूर्वोक्त 'हरि' शब्द (पाठ ३) के समान होते हैं। देखिये—

इकारान्त पुंल्लिगी 'भूपति' शब्द

१	भूपतिः	भूपती	भूपतयः
सं० (हे)	भूपते	(हे) ,,	(हे) ,,
२	भूपतिम्	,,	भूपतीन्
३	भूपतिना	भूपतिभ्याम्	भूपतिभिः
४	भूपतये	,,	भूपतिभ्यः
५	भूपतेः	,,	,,
६	,,	भूपत्योः	भूपतीनाम्
७	भूपतौ	,,	भूपतिषु

(२७) सन्धि नियम—इ, उ, ऋ, लृ, इनके सामने विजातीय स्वर आने पर इनके स्थान में क्रमशः 'य्, व्, र्, ल्' आदेश होते हैं।

अन्य

इतः—इस ओर । उद्घुष्टं=पुकारा । तरसा=वेग से । ततः=वहां से ।

क्रिया

शृणोतु=सुनो । आरोहत=चढ़ो । मनुते=मानता है । उद्घोषयन्=बोले । व्यापाद्य=हनन करके । आस्ते=बैठा है । अहनम्=मैंने मारा । जर्जरीकृत्य=जर्जर करके । बभञ्ज=तोड़ा । अकरवम्=मैंने की । संप्रधार्य=निश्चय करके । निश्वस्य=साँस लेकर । अपनयत=ले जाओ । मर्दयितुम्=रगड़ने के लिये । परित्रातुम्=रक्षा करने के लिये । निवेदयितुम्=कहने के लिये ।

(१०) अवदातं कर्म

(१) शृणोतु आर्या मे पराक्रमम् । योऽसौ[1] आर्याया[2] हस्ती स महामात्रं व्यापाद्य आलानस्तम्भं बभंज ।

(२) ततः स महान्तं संक्षोभं कुर्वन् राजमार्गम् अवतीर्णः । अत्रान्तरे उद्घुष्टं जनेन—

(३) अपनयत बालकजनम् । आरोहत वृक्षान् भित्तीश्च[3] ! हस्ती इत एति,[4] इति ।

(४) करी कर-चरण-रदनेन

(१०) उत्तम कार्य

(१) देवी ! सुनो मेरा पराक्रम । जो वह आर्या (आप) का हाथी है, उसने महावत को मारकर बन्धन-स्तम्भ को तोड़ डाला ।

(२) अनन्तर, वह बड़ा रौला करता हुआ राजमार्ग पर आया । इतने में पुकारा लोगों ने—

(३) ले जाओ बालकों को । चढ़ो अभी वृक्षों और दीवारों पर । हाथी इधर आ रहा है ।

(४) हाथी सूंड और पांवों से

१ यः असौ । २ आर्यायाः=आर्या । ३ भित्तीः+च । ४ इतः+एति ।

धावन्तं जनमनुजातं विदारयन्नास्ते। एतां नगरीं नलिन-पूर्णां महासरसीम् इव मनुते।

(५) तेन ततः कोऽपि परिव्राजकः समासादितः। तत्र परिभ्रष्ट-दंड-कुण्डिका-भाजनं यदा स चरणैर्मर्दयितुं उद्युक्तो बभूव, तदा परिव्राजकं परित्रातुं दृढमतिम् अकरवम्।

(६) एवं संप्रधार्य सत्वरं लोहदण्डम् एकं सहसा गृहीत्वा तं हस्तिनं अताडयम्।

(७) विन्ध्यशैल-शिखराभं महाकायम् अपि तं जर्जरीकृत्य स परिव्राजको मोचितः। ततः 'शूर साधु साधु' इति सर्वैः जनैः उच्चैः उद्घोषितम्।

(८) [illegible]

रगड़ से सब पदार्थों को चूर कर रहा है। इस नगरी को (वह) कमलिनियों से भरे हुए बड़े तालाब के समान माने (है)।

(५) तत्पश्चात् उसने कोई संन्यासी पकड़ा। जिसके दण्ड, कमंडल, बरतन गिर गये हैं, ऐसे उस (संन्यासी) को जब वह चरणों से रौंदने के लिए तैयार हुआ, तब संन्यासी की रक्षा करने की दृढ़ बुद्धि (मैंने) की।

(६) शीघ्र ही इस प्रकार निश्चय करके लोहे का एक सोटा शीघ्रता से पकड़कर (मैंने) उस हाथी को मारा।

(७) विन्ध्यपर्वत के शिखर के समान बड़े शरीर वाले उस (हाथी) को भी जर्जर करके, वह संन्यासी छुड़ाया। पश्चात् 'शूर शाबाश! शाबाश' ऐसा सब लोगों ने ऊँची आवाज से पुकारा।

(८) [illegible]

[illegible]

(६) तम् अहं गृहीत्वा, इमं वृत्तान्तं आर्याय निवेदयितुं आगतः।

(संस्कृत पाठावली)

(६) उसको मैं लेकर यह वृत्तांत आपको कहने के लिये आ गया।

(संस्कृत पाठावली)

समास-विवरणम्

(१) करीकरचरणरदनेन—करः च चरणः च करचरणौ। करिणः करचरणौ = करीकरचरणौ। करीकरचरणयोः रदनं=करीकरचरणरदनम्। तेन करीकरचरणरदनेन।

(२) नलिनपूर्णाम्—नलिनैः पूर्णाम्।

(३) परिभ्रष्टदण्डकुण्डिकाभाजनम्—दण्डः च कुण्डिकाभाजनं च= दण्डकुण्डिका भाजने। परिभ्रष्टे दण्ड-कुण्डिकाभाजने यस्मात् (यस्य वा) सः= परिभ्रष्टदण्डकुण्डिकाभाजनः; तम्।

(४) लोहदण्डः—लोहस्य दण्डः=लोहदण्डः।

(५) स्वप्रावारकः—स्वस्य प्रावारकः=स्वप्रावारकः।

(६) विनीतवेषः—विनीतः वेषः यस्य सः=विनीतवेषः।

(७) महाकायः—महान् कायः यस्य सः=महाकायः।

पाठ चौदहवां

शकारान्त पुंल्लिंगी 'विश्' शब्द

विट्
विड् } विशौ विशः

सं०	(हे) विट् विड्	(हे) विशौ	(हे) विशः
द्वि०	विशम्	,,	,,
तृ०	विशा	विड्भ्याम्	विड्भिः
च०	विशे	,,	विड्भ्यः
पं०	विशः	,,	,,
ष०	,,	विशोः	विशाम्
स०	विशि	,,	विट्सु

इस शब्द के प्रथम सम्बोधन के एकवचन के रूप दो-दो होते हैं। प्रायः जिस शब्द के अन्त में व्यंजन होता है, उसके दो रूप स्वाभाविक हैं। इस शब्द के समान, विश्वसृज्, परिमृज्, देवेज्, परिव्राज्, विभ्राज्, राज्, सुवृश्च्, भृज्ज्, त्विष्, द्विष्, रत्नमुष्, [illegible], सम्राज्, प्राश्, लिह्—इत्यादि शब्द चलते हैं। तथा 'छ्, श्, ष्, ह्' आदि व्यंजन जिनके अन्त में होते हैं, ऐसे शब्द इसी शब्द के समान चलते हैं। सुभीते के लिये परिव्राज् शब्द के रूप नीचे देते हैं:—

जकारान्त पुल्लिंगी 'परिव्राज्' शब्द

प्र०	परिव्राट्	परिव्राजौ	परिव्राजः
सं०	(हे) ,,	(हे) ,,	(हे) ,,
द्वि०	परिव्राजम्	,,	,,
तृ०	परिव्राजा	परिव्राड्भ्याम्	परिव्राड्भिः
च०	परिव्राजे	,,	परिव्राड्भ्यः
पं०	परिव्राजः	,,	,,
ष०	,,	परिव्राजोः	परिव्राजाम्
स०	परिव्राजि	,,	परिव्राट्सु

जकारान्त पुंल्लिंगी 'ऋत्विज्' शब्द

१	ऋत्विक्-ग्	ऋत्विजौ	ऋत्विजः
३	ऋत्विजा	ऋत्विग्भ्याम्	ऋत्विग्भिः
७	ऋत्विजि	ऋत्विजोः	ऋत्विक्षु

चकारान्त पुंल्लिंगी 'पयोमुच्' शब्द

१	पयोमुक्-ग्	पयोमुचौ	पयोमुचः
४	पयोमुचे	पयोमुग्भ्याम्	पयोमुग्भ्यः
७	पयोमुचि	पयोमुचोः	पयोमुक्षु

जकारान्त पुंल्लिंगी 'विश्वसृज्' शब्द

१	विश्वसृट्-ड्	विश्वसृजौ	विश्वसृजः
३	विश्वसृजा	विश्वसृड्भ्याम्	विश्वसृड्भिः
५	विश्वसृजः	"	विश्वसृड्भ्यः

'देवेज्' शब्द

१	देवेट्-ड्	देवेजौ	देवेजः
४	देवेजे	देवेड्भ्याम्	देवेड्भ्यः
७	देवेजि	देवेजोः	देवेट्सु

'राज्' शब्द

१	राट्-ड्	राजौ	राजः
३	राजा	राड्भ्याम्	राड्भिः
६	राजः	राजोः	राजाम्
७	राजि	राजोः	राट्सु

'द्विष्' शब्द

द्विट्-ड्	द्विषौ	द्विषः
द्विषा	द्विड्भ्याम्	द्विड्भिः

है जिसने ऐसा ब्रह्मचारी । राष्ट्रविप्लव=ग़दर । आहार= भोजन । महोदधि=बड़ा समुद्र । गुण=गुण । रागिन्=लोभी । नृ= मनुष्य ।

स्त्रीलिंगी

विंशति=बीस । परिवेदना=शोक ।

नपुंसकलिंगी

उद्यान=बाग । भाग्य=दैव । विष=जहर । कौतुक=कुतूहल, आश्चर्य । दुर्भिक्ष=अकाल । व्यसन=आपत्ति, बुरी अवस्था । श्मशान=मरघट । काष्ठ=लकड़ी । अग्र=नोक । वाहन=रथ आदि । दैव=भाग्य ।

विशेषण

जीर्ण=पुराना । मन्दभाग्य=दुर्दैव । देशीय=देश का, उमर का । पञ्च=पाँच । प्रबुद्ध=जगा हुआ । संजात=उत्पन्न । पृष्ट= पूछा हुआ । नृशंस=क्रूर । गुणसम्पन्न=गुणी । मूर्छित=बेहोश । दंष्ट=काटा हुआ । आकुल=व्याकुल । कुत्सित=निन्दित । अकुत्सित=अनिंदित ।

इतर

परेद्युः=दूसरे दिन । चित्रपदक्रमम्=पांव अजब रीति से रखते हुए । सर्वथा=सब प्रकार से ।

क्रिया

अन्विष्यसि=(तुम) ढूंढते हो । अन्वेष्टुम्=ढूंढने के लिये । [illegible]=चाहिये । पतित्वा=गिरकर । लुलोठ=लुढ़क पड़ा । [illegible]=इकट्ठा होती हैं । [illegible]=अलग होती हैं । विलपसि=रोते हो । [illegible]=ध्यान रखा । परिहर=छोड़ । [illegible]= [illegible] । [illegible]=[illegible] के लिये ।

(११ सर्प-मंडूकयोः कथा)

(१) अस्ति जीर्णोद्याने मंदविषो नाम सर्पः। सोऽतिजीर्णतया[1] आहारमपि अन्वेष्टुम् अक्षमः सरस्तीरे पतित्वा स्थितः।

(२) ततो दूरादेव[3] केनचित् मण्डूकेन दृष्टः पृष्टश्च। किमिति अद्य [illegible] आहारं नान्विष्यसि[4]।

(३) भुजंगोऽवदत्—गच्छ भद्र, मम मंदभाग्यस्य प्रश्नेन किं [illegible] ततः संजात-कौतुकः स च भेकः सर्वथा कथ्यतां—इत्याह—

(४) भुजंगोऽपि आह—भद्र, ब्रह्मपुरवासिनः श्रोत्रियस्य कौण्डिन्यस्य पुत्रः विंशतिवर्षदेशीयः सर्वगुणसंपन्नो दुर्दैवात् मया नृशंसेन दष्टः—

(५) ततः सुशीलनामानं तं पुत्रं मृतं आलोक्य मूर्च्छितः कौण्डिन्यः पृथिव्यां लुलोठ। अनन्तरं ब्रह्मपुरवासिनः सर्वे

---

(१) (सोऽतिजीर्णतया)—वह बहुत बूढ़ा—जीर्ण—होने से (आहारमपि अन्वेष्टुम् अक्षमः) भोजन ढूंढ़ने के लिये असमर्थ है।

(२) (गच्छ भद्र) जा भाई (मम मंदभाग्यस्य प्रश्नेन किं)—मुझ अभागे से पूछने का क्या (लाभ) (क्या लाभ है।) [illegible]

[illegible]

बांधवास्तत्र[७] आगत्य उपविष्टाः । (६) तथा च उक्तं—आहवे, व्यसने, दुर्भिक्षे, राष्ट्रविप्लवे, राजद्वारे, श्मशाने च यस्तिष्ठिति स बांधव इति। (७) तत्र कपिलो नाम स्नातकोऽवदत् । अरे कौण्डिन्य ! मूढ़ोऽसि तेन एवं प्रलपसि विलपसि च। (८) शृणु—यथा महोदधौ काष्ठं च समेयातां, समेत्य च व्यपेयाताम्, तद्वद् भूतसमागमः । (९) तथा पञ्चभिः निर्मिते देहे पुनः पञ्चत्वं गते तत्र का परिवेदना। (१०) तद् भद्र ! आत्मानं अनुसंवेहि, शोकचर्चां च परिहर इति । ततः तद्ववचनं निशाम्य प्रबुद्ध इव कौण्डिन्य[१०] उत्थाय अब्रवीत्—(११) तद् अलं-गृहनरक-वासेन । वनं एव गच्छामि । कपिलः पुनराह ।

---

(५) (सुशीलनामानां तं पुत्रं मृतं आलोक्य)—सुशील नामक उस पुत्र को मरा हुआ देखकर। (६) (आहवे व्यसने दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे। राजद्वारे श्मशाने च यः तिष्ठति स बांधवाः)—युद्ध, कष्ट, अकाल, गदर, राजा की कचहरी, श्मशान इन स्थानों में जो (मदद करने के लिये) ठहरता है वही भाई है। (७) (मूढ़ोऽसि) तू मूर्ख है। (तेन एवं प्रलपसि विलपसिच)—इसलिये इस प्रकार रोते-पीटते हो। (८) (यथा महोदधौ काष्ठं च काष्ठं च समेयातां) जिस प्रकार बड़े समुद्र में एक लकड़ी दूसरी लकड़ी के साथ मिलती है। (समेत्य च व्यपेयातां) और एक होकर फिर अलग होती है। (भूत-समागमः) प्राणियों का सहवास । (९) (पञ्चभिः निर्मिते देहे)। पांचों तत्वों से बना हुआ देह (पुनः पञ्चत्व गते)

[illegible] । ८ यः+तिष्ठति । ९ स्नातकः+अवदत्
[illegible] ।

महाप्रसाद; इति उक्त्वा क्रमशो मण्डूकान् खादितवान् । अतो निर्मण्डूकं सरो विलोक्य, भेकाधिपतिरपि तेन भक्षितः ।

(हितोपदेशः)

सूचना—इस पाठ का भाषान्तर नहीं दिया है । पाठक स्वयं जान सकेंगे । कठिन वाक्यों का ही केवल अर्थ दिया है ।

समास-विवरणम्

१ जीर्णोद्यानम्—जीर्णं उद्यानं=जीर्णोद्यानम् ।

२ मन्दविषः—मन्दं विषं यस्य स, मन्दविषः ।

३ भुजंगः—भुजैर्गच्छति इति भुजंगः=भुजबाहु ।

४ ब्रह्मपुरवासी—ब्रह्मपुरे वसति इति स ब्रह्मपुरवासी

५ सर्वगुणसंपन्नः—सर्वैः गुणैः संपन्नः=सर्वगुणसंपन्नः ।

६ भूत-समागमः—भूतानां समागमः=भूतसमागमः ।

७ शोकाकुलाः—शोकेन आकुलाः=शोकाकुलाः ।

८ मण्डूकनाथः—मण्डूकानां नाथः=मण्डूकनाथः ।

९ दर्दुराधिपतिः—दर्दुराणाम् अधिपतिः=दुर्दुराधिपतिः ।

१० निर्मण्डूकम्—निर्गताः मण्डूकाः यस्मात् तत्=निर्मण्डूकम्

[illegible] । (चित्र पदक्रमं बभ्राम)—विचित्र प्रकार नाचता हुआ घूमने लगा । (१६) (किं अद्य भवान् मन्दगतिः) क्यों आज आप थक गए हैं । (१७) (गृहीत अयं महाप्रसादः) लिया यह महाप्रसाद । ([illegible] खादितवान्) मेंढकों को खाया । (निर्मण्डूकं सरः विलोक्य) [illegible] खाली हुआ हुआ तालाब देखकर ।

पाठ पन्द्रहवाँ

सकारान्त पुंल्लिंगी 'चन्द्रमस्' शब्द

१	चंद्रमा	चंद्रमसौ	चंद्रमसः
सं०	(हे) चंद्रमः	(हे) ,,	(हे) ,,
२	चंद्रमसम्	,,	,,
३	चंद्रमसा	चंद्रमोभ्याम्	चंद्रमोभिः
४	चंद्रमसे	,,	चंद्रमोभ्यः
५	चंद्रमसः	,,	,,
६	,,	चंद्रमसोः	चंद्रमसाम्
७	चंद्रमसि	,,	चंद्रमस्सु

इस प्रकार वेधस्, सुमनस्, दुर्मनस् इत्यादि शब्द चलते हैं।

सकारान्त पुंल्लिंगी 'ज्यायस्' शब्द

१	ज्यायान्	ज्यायांसौ	ज्यायांसः
सं०	(हे) ज्यायन्	(हे)	(हे)

महाप्रसाद; इति उक्त्वा क्रमशो मण्डूकान् खादितवान् । अतो निर्मण्डूकं सरो विलोक्य, भेकाधिपतिरपि तेन भक्षितः ।

(हितोपदेशः)

सूचना—इस पाठ का भाषान्तर नहीं दिया है । पाठक स्वयं जान सकेंगे । कठिन वाक्यों का ही केवल अर्थ दिया है ।

समास-विवरणम्

१ जीर्णोद्यानम्—जीर्णं उद्यानं=जीर्णोद्यानम् ।

२ मन्दविषः—मन्दं विषं यस्य स, मन्दविषः ।

३ भुजंगः—भुजैर्गच्छति इति भुजंगः=भुजबाहु ।

४ ब्रह्मपुरवासी—ब्रह्मपुरे वसति इति स ब्रह्मपुरवासी

५ सर्वगुणसंपन्नः—सर्वैः गुणैः संपन्नः=सर्वगुणसंपन्नः ।

६ भूत–समागमः—भूतानां समागमः=भूतसमागमः ।

७ शोकाकुलाः—शोकेन आकुलाः=शोकाकुलाः ।

८ मण्डूकनाथः—मण्डूकानां नाथः=मण्डूकनाथः ।

९ दर्दुराधिपतिः—दर्दुराणाम् अधिपतिः=दुर्दुराधिपतिः ।

१० निर्मण्डूकम्—निर्गताः मण्डूकाः यस्मात् तत्=निर्मण्डूकम्

सार । (चित्र पदक्रमं बभ्राम)—विचित्र प्रकार नाचता हुआ घूमने लगा । (१६) (किं अद्य भवान् मन्दगतिः) क्यों आज आप धक गए हैं । (२०) (गृहीत अयं महाप्रसादः) लिया यह महाप्रसाद । (मण्डूकान् खादितवान्) मेंढकों को खाया । (निर्मण्डूकं सरः विलोक्य) मेंढकों से खाली हुआ हुआ तालाब देखकर ।

पाठ पन्द्रहवाँ

सकारान्त पुंल्लिंगी 'चन्द्रमस्' शब्द

	चंद्रमा	चंद्रमसौ	चंद्रमसः
सं०	(हे) चंद्रमः	(हे) ,,	(हे) ,,
	चंद्रमसम्	,,	,,
	चंद्रमसा	चंद्रमोभ्याम्	चंद्रमोभिः
	चंद्रमसे	,,	चंद्रमोभ्यः
	चंद्रमसः	,,	,,
	,,	चंद्रमसोः	चंद्रमसाम्
	चंद्रमसि	,,	चंद्रमस्सु

इस प्रकार वेधस्, सुमनस्, दुर्मनस् इत्यादि शब्द चलते हैं।

सकारान्त पुंल्लिंगी 'ज्यायस्' शब्द

१	ज्यायान्	ज्यायांसौ	ज्यायांसः
सं०	(हे) ज्यायन्	(हे) ,,	(हे) ,,
२	ज्यायांसम्	,,	ज्यायसः
३	ज्यायसा	ज्यायोभ्याम्	ज्यायोभिः
४	ज्यायसे	,,	ज्यायोभ्यः
५	ज्यायसः	,,	,,
६	,,	ज्यायसोः	ज्यायसाम्
७	ज्यायसि	,,	ज्यायस्सु

इस शब्द के समान सब 'यस्' प्रत्ययान्त पुंल्लिगी शब्द चलते हैं। 'कनीयस, गरीयस्, श्रेयस्, लघीयस्, महीयस्, इत्यादि शब्दों के रूप ज्यायस् शब्द के समान ही होते हैं।

सकारान्त पुंल्लिंगी 'पुम्स्' शब्द

१	पुमान्	पुमांसौ	पुमांसः

सं०	(हे) पुमन्	(हे) पुमांसौ	(हे) पुमांसः
२	पुमांसम्	,,	पुंसः
३	पुंसा	पुंभ्याम्	पुंभिः
४	पुंसे	,,	पुंभ्यः
५	पुंसः	,,	,,
६	,,	पुंसोः	पुंसाम्
७	पुंसि	,,	पुंसु

इस शब्द के रूपों में विशेष यह है कि 'भ्याम्, भिः, भ्यसः' इन व्यञ्जनादि प्रत्ययों के आगे होने पर 'पुम्स' के सकार का लोप होता है, तथा स्वरादि प्रत्यय आगे आने पर नहीं होता।

हकारान्त पुल्लिंगी 'अनडुह्' शब्द

१	अनड्वान्	अनड्वाहौ	अनड्वाहः
सं०	(हे) अनड्वन्	(हे) ,,	(हे) ,,
२	अनड्वाहम्	,,	अनडुहः
३	अनडुहा	अनडुद्भ्याम्	अनडुद्भिः
४	अनडुहे	,,	अनडुद्भ्यः
५	अनडुहः	,,	,,
६	अनडुहः	अनडुहोः	अनडुहाम्
७	अनडुहि	,,	अनडुत्सु

इस शब्द में विशेषता यह है कि द्वितीया के बहुवचन से 'ड्व' के स्थान पर 'डु' होता है, तथा स्वरादि प्रत्ययों के समय अन्त में 'ह्' रहता है और व्यञ्जनादि प्रत्ययों के समय 'ह्' के स्थान पर 'द्' हो जाता है, परन्तु 'सु' प्रत्यय के पूर्व 'न्' होता है।

शब्द—पुल्लिंगी

[illegible] = किंकर, नौकर। अमर्षः = गुस्सा। अपरागः = अप्रीति।

पादः=चरणः, पांव । भर्तृ=स्वामी । स्नेह=दोस्ती, मैत्री । वाग्मिन्=बोलने वाला, वक्ता । महाहव=बड़ा युद्ध । पंगु=लूला ।

स्त्रीलिंगी

संपत्ति—पैसा, दौलत । विपत्ति=मुसीबत, दारिद्रच । तृष्णा=प्यास । लज्जा=लाज, शरम । वाचालता=तीसमारखां का स्वभाव । स्वाधीनता=स्वातन्त्र्य ।

नपुंसकलिंगी

कार्पण्य=कृपणता, कंजूसी । आनन=मुख । पृष्ठ=पीठ । व्यसन=कष्ट ।

विशेषण

स्तूयमान=जिनकी स्तुति हो रही है । क्षिप्यमान=धिक्कार किया जाता हुआ । कथ्यमान=कहा जाता हुआ । समुन्नस्यमान=सम्मानित । समालाप=बराबरी से बोलने वाला । अनादिष्ट=आज्ञा न किया हुआ । मूक=गूँगा । जड़=अज्ञानी, अचेतन । आलप्यमान=बोला जाता हुआ । ध्वजभूत=झंडे के समान । अन्ध=अंधा ।

इतर

अग्रतः=आगे । प्रतीपम्=विरुद्ध ।

क्रिया

विज्ञपयन्ति=बताते हैं । विकत्थन्ते=कहते हैं । अभिवांछन्ति=इच्छा करते हैं । पलाय्य=भागकर । निलीयन्ते=छिपते हैं । जल्पन्ति—बोलते हैं । सेवन्ते=सेवा करते हैं । पराक्रम्य=शौर्य (प्रस्तुत) करके ।

विशेषणों का उपयोग

कथ्यमाना कथा, उच्यमानः उपदेशः, क्षिप्यमानं पात्रम्, स्तूयमानः पुरुषः अन्धा स्त्री, स्वाधीनं दैवतम् ।

(१२) भृत्य-धर्माः

(१) भृत्या[1] अपि त एव[2] ये सम्पत्तेः विपत्तौ सविशेषं सेवन्ते ।

(२) समुन्नम्यमानाः सुतरां अवनमन्ति । आलाप्यमाना न समालापाः सञ्जायन्ते ।

(३) स्तूयमाना[3] न गर्वमनुभवन्ति । क्षिप्यमाणा न अपरागं गृह्णन्ति ।

(४) उच्यमाना न प्रतीपं भाषन्ते पृष्टा[5] हितप्रियं विज्ञपयन्ति ।

(५) अनादिष्टाः कुर्वन्ति । कृत्वा न जल्पन्ति । पराक्रम्य न विकत्थन्ते ।

(६) कथ्यमाना[6] अपि लज्जाम् उद्वहन्ति । महाहवेष्वग्रतो[7][8]

(१२) नौकर के धर्म

(१) नौकर भी वे ही (हैं), जो दौलत से ग़रीबी में अधिक सेवा करते हैं ।

(२) सम्मान दिये जाने पर बहुत नम्र होते हैं । बोलने पर भी नहीं बराबरी से बोलने वाले होते हैं ।

(३) स्तुति पर घमण्डी नहीं होते हैं । धिक्कार करने पर अप्रीति नहीं लेते ।

(४) बोलने पर विरुद्ध नहीं बोलते । पूछने पर हितकर प्रिय बताते हैं ।

(५) हुकुम न करने पर (कार्य) करते हैं, करके बोलते नहीं हैं । पराक्रम करके नहीं बोलते हैं ।

(६) कहे जाते हुए भी लज्जा करते हैं । बड़े युद्ध में आगे भाले के समान दीखते हैं ।

---

१ भृत्याः+अपि । २ ते+एव । ३ मानाः+न । ४ मानाः+न । ५ [illegible] । ६ मानाः+अपि । ७ हवेषु+अग्रतः । ८ अग्रतः+[illegible]

[९]
...ध्वजभूता इव लक्ष्यन्ते।

(७) दानकाले पलाय्य पृष्ठतो निलीयन्ते। धनात्स्नेहं भूयांसं मन्यन्ते।

(७) दान के समय भागकर पीछे छिप जाते हैं। धन से मैत्री अधिक समझते हैं।

(८) जीवितात् पुरो मरणं अभिवांछन्ति। गृहाद् अपिस्वामिपाद-मूले सुखं तिष्ठन्ति।

(८) जीने से बढ़कर मरण चाहते हैं। घर से भी स्वामी के पाँव के मूल में आनन्द से ठहरते हैं।

(९) येषां तृष्णा चरणपरि-चर्यायाम्, असंतोषो[१०] हृदयाऽऽराधने, व्यसनं आननालोकने।

(९) (नौकर वह) जिनकी इच्छा चरणों की सेवा में है, असन्तोष हृदय के आराधन में है, व्यसन मुँह देखने में है (जिनमें)।

(१०) वाचालतागुणग्रहणे, कार्पण्यं अपरित्यागे भर्तुः।

(१०) गुण लेने में बहुत बोलना, कंजूसी स्वामी के न छोड़ने में (हो)।

(११) ये च विद्यमाने स्वामिनि अस्वाधीनसकलेन्द्रियवृत्तयः, पश्यन्तोऽपि अन्धा[११] इव, शृण्वन्तो-[१२]ऽपि वधिरा[१३] इव, वाग्मिनो-[१४]ऽपि मूका[१५] इव, जानन्तोऽपि[१६] जड़ा[१७] इव, अनपहतकरचरणाः[१८]

(११) और जो स्वामी के रहते हुए अपनी इन्द्रियों की वृत्तियाँ अपने लिये नहीं रखते, देखते हुए भी अन्धे के समान हैं, सुनते हुए भी बहरे हैं, बोलने वाले होने पर भी गूंगे (हैं), जानते हुए भी जड़ के समान (हैं), हाथ-पांव साबत होने पर भी लूले के समान (हैं), जो अपने स्वामी के चिन्ता-

---

९ भूताः+इव। १० असन्तोषः+हृदया०। ११ अन्धाः+इव। १२ शृण्वन्तः+अपि। १३ वधिराः+इव। १४ वाग्मिनः+अपि। १५ मूकाः+इव। १६ जानन्तः+अपि। १७ जड़ाः+इव। १८ चरणाः+अपि।

अपि पल्लव[१९] इव, आत्मनः स्वामि-चिन्तादर्शे प्रतिबिम्बवद् वर्तन्ते।
(कादम्बरी)

रूप शीशे में प्रतिबिम्ब के समान रहते हैं।
(कादम्बरी)

समास-विवरणम्

(१) भृत्यधर्माः—भृत्यस्य (सेवकस्य) धर्माः (कर्त्तव्याणि)।
(२) सविशेषं—विशेषेण सहितं=सविशेषम्।
(३) दानकालः—दानस्य कालः=दानकालः।
(४) स्वामिपाद मूलं—स्वामिनः पादौ-स्वामिपादौ। स्वामिपादयोः मूलं=स्वामिपादमूलम्।
(५) असन्तोषः—न संतोषः=असंतोषः।
(६) अस्वाधीनसकलेन्द्रियवृत्तयः—सकलानि इन्द्रियाणि=सकलेन्द्रियाणि। सकलेन्द्रियाणां वृत्तयः सकलेन्द्रियवृत्तयः। न स्वाधीनाः=अस्वाधीनाः। अस्वाधीनाः सकलेन्द्रियवृत्तयः येषां ते=अस्वाधीनसकलेन्द्रियवृत्तयः।
(७) अनपहृतकरचरणाः—करौ च चरणौ च करचरणाः। न अपहृतः—अनपहृतः। अनपहृताः करचरणा येषां ते=अनपहृतकरचरणाः।

पाठ सोलहवां

सर्वनाम

पूर्व पाठ में पाठकों से प्रार्थना की है कि वे पूर्वोक्त १५ पाठों का अध्ययन परिपूर्ण होने से पूर्व ही इस पाठ को प्रारम्भ न करें। द्विवार या त्रिवार पूर्व पाठों का अध्ययन करके उनमें दिये हुए नियमादि की अच्छी उपस्थिति होने के बाद इस पाठ को प्रारम्भ करें।

प्रायः सर्वनामों के लिये सम्बोधन नहीं होता है। परन्तु 'सर्व, विश्व' आदि कई ऐसे सर्वनाम हैं कि जिनके सम्बोधन होता है। नाम वे होते हैं जो पदार्थों के नाम हों, जैसे—कृष्णः, रामः, गृहम्, नगरम्, दीपः, लेखनी, पुस्तकम् इत्यादि। सर्वनाम उनको कहते हैं कि जो नाम के बदले में आते हैं, जैसे—सः (वह), त्वम् (तू,) अहम् (मैं); सर्वम् (सब को), उभौ (दो), कः (कौन), अयम् (यह), इत्यादि।

अकारान्त पुंल्लिंगी 'सर्व' शब्द

१	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
सं०	(हे) सर्व	(हे) ,,	(हे) ,,
२	सर्वम्	,,	सर्वान्
३	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
४	सर्वस्मै	,,	सर्वेभ्यः
५	सर्वस्मात्	,,	,,
६	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
७	सर्वस्मिन्	,,	सर्वेषु

इसी प्रकार 'विश्व, एक, उभय' इत्यादि सर्वनामों के रूप हैं। 'उभ' सर्वनाम का केवल द्विवचन में ही प्रयोग होता है।

१, सं०, २	उभौ
३, ४, ५	उभाभ्याम्
६, ७	उभयोः

'उभ' शब्द के अर्थ 'दो' होने से एकवचन तथा बहुवचन उस का सम्भव ही नहीं।

अकारान्त पुंल्लिंगी 'पूर्व' शब्द

१	पूर्वः	पूर्वौ	पूर्वे, पूर्वाः
२	पूर्वम्	,,	पूर्वान्
३	पूर्वेण	पूर्वाभ्याम्	पूर्वैः
४	पूर्वस्मै, पूर्वाय	,,	पूर्वेभ्यः
५	पूर्वस्मात्, पूर्वात्	,,	,,
६	पूर्वस्य	पूर्वयोः	पूर्वेषाम्, पूर्वाणाम्
७	पूर्वस्मिन, पूर्वे	,,	पूर्वेषु

'पूर्व' शब्द के समान ही 'पर, अपर, उत्तर, अधर' इत्यादि शब्द चलते हैं।

(२८) नियम—'स्व' शब्द 'आत्मीय', स्वकीय, अर्थ में 'स्व' के रूप 'पूर्व' के समान होते हैं, परन्तु 'जाति' और 'धन' अर्थ में 'देव' शब्द के समान होते हैं।

(२९) नियम—अन्तर शब्द 'बाह्य, परिधानीय' इन अर्थों में 'पूर्व' शब्द के समान चलता है, परन्तु अन्य अर्थों में 'देव' के समान चलता है। जैसे—

स्व—	१ स्वः	स्वौ	स्वे, स्वाः
	५ स्वस्मात्, स्वात्	स्वाभ्याम्	स्वेभ्यः
	७ स्वस्मिन्, स्वे	स्वयोः	स्वेषु
अंतर—	१ अंतरः	अंतरौ	अंतरेः
	२ अंतरम्	अंतरौ	अंतरान्
	३ अंतरेण	अंतराभ्याम्	अंतरैः
	४ अंतरस्मै, अंतराय	,,	अंतरेभ्यः
	५ अन्तरस्मात् अन्तरात्	अन्तराभ्याम्	अन्तरेभ्यः
	६ अन्तरस्य	अन्तरयोः	अन्तरेषां-अन्तराणाम्
	७ अन्तरस्मिन्, अन्तरे	अन्तरयोः	अन्तरेषु

(३०) नियम—'प्रथम' सर्वनाम के, पुंल्लिग में केवल प्रथमा विभक्ति में 'पूर्व' के समान रूप होते हैं, अन्य विभक्तियों में 'देव' के समान है। इसी प्रकार 'कतिपय, अर्ध, अल्प, चरम, द्वितीय, तृतीय, चतुष्टय, पञ्चतय, इत्यादि सर्वनामों के रूप होते हैं।

१	प्रथमः	प्रथमौ	प्रथमे, प्रथमाः
२	प्रथमं	,,	प्रथमान्

शेष 'देव' शब्द के समान।

शब्द—पुंल्लिगी

सन्धिः—सुराख, जोड़	मृदंगः—मृदंग (तवला)
पणवः—ढोल	वंशी—बांसुरी
प्रणयः—विनति	सुतः—पुत्र
विषादः—दुख	नाट्याचार्यः—नाटक का आचार्य
प्रदीपः—दीवा	आक्रन्दः—पुकार, रोना

स्त्रीलिंगी

वीणा—वीणा । रजनी—रात्रि । शाटी—चादर, भाषा—भाषण ।

नपुंसकलिंगी

भाण्ड=बरतन । अलंकरण=अलंकार । सदन=घर चोरी । वाद्य=वाद्य, बाजा । चौर्य=चोरी । गान्धर्व= नाट्य=नाटक ।

विशेषण

सुप्त=सोया हुआ । प्रबुद्ध=जागा हुआ । व्यवस्थि हुआ । निष्क्रान्त=चल पड़ा । समासादित=प्राप्त किया क्रान्त=समाप्त हुआ । आशान्वित्=आशा से युक्त । शापि दिया गया । निर्वापित=बुझाया गया । निबद्ध=बांध निष्क्रान्त निकल=गया ।

क्रिया

अनुशुशोच=शोक किया । अस्वप्नायत=स्वप्न आया वेश=घुस गया । आप्तुम्=प्राप्त करने के लिये । प्रविश कर । वक्ति=बोलता है । कर्तित्वा=काटकर । सुष्वाप=सो उत्पाद्य=बनाकर । कांक्षति=इच्छा करता है ।

अन्य

परमार्थेन:=वास्तव में । भूमिगर्ते=जमीन में गाड़ा

विशेषणों का उपयोग

सुप्ता कामिनी । सुप्तः पुरु [illegible] श्रम । निर्वापित

(१३) चारुदत्तसदने चौर्यम्

(१) गच्छति[1] काले कस्मिश्चिद् दिने गाँधर्वं श्रोतुं गतः चारुदत्तः अतिक्रान्तायाँ अर्धरजन्यां गृहम् आगत्य समैत्रेयःसुष्वाप।

(२) सुप्तयोरुभयोः[2] शर्विलक[3] इति कश्चिद् ब्राह्मणचौरः स्तेयेन द्रव्यम् आप्तुं चारुदत्तस्य सदने सन्धिम् उत्पाद्य प्रविवेश। (३) प्रविश्य च मृदंग–पणव–वीणा–वंशादीनि वाद्यानि दृष्ट्वा परं विषादम्[4] अगच्छत्। (४) आत्मानं वक्ति च 'कथं नाट्याचार्यस्य गृहम् इदम्? अथवा परमार्थतो[5] दरिद्रोऽयम्? उत राजभयाच्चौर-भयाद्[7] वा भूमिष्ठं द्रव्यं धारयति? (५) ततः परमार्थदरिद्रोऽयम् इति निश्चित्य, भवतु, गच्छामि इति गन्तुं व्यवसिते मैत्रेये[8] उदस्वप्नयत—(६) 'भो वयस्य! संधिरिव दृश्यते, चौरमिव पश्यामि। तद् गृहणातु भवान् इदं सुवर्ण-

---

(१) (गच्छति काले)—समय जाने पर। (अतिक्रातायां अधरजन्या) आधी रात बीत जाने पर। (२)(सुप्तयोः उभयोः) दोनों के सो जाने पर (सन्धि उत्पाद्य प्रविवेश) सुराख करके घुस गया। (३) (परं विषादं अगच्छत्) बहुत दुःख को प्राप्त हुआ (४) (आत्मनं वक्ति) अपने आप से बोलता है (परमार्थतः दरिद्रः) वास्तव में गरीब। (भूमिष्ठं द्रव्यं धारयति) भूमि के अन्दर पैसा रखता है। (५) (मैत्रेयः उदस्वप्नायत) मैत्रेय को स्वप्न आ गया

---

१ कस्मिन्+चित्। १ सुप्तयोः+उभ०। शर्विलकः+इति
४ विषादम्+अगच्छत्। ५ परम+अर्थतः। ६ दरिद्रः+अयं।
७ भयात्+चौरः। ८मैत्रेयः+उदस्व।

भाण्डम् इति । (७) ततः च तद्वचनाद् इतस्ततो दृष्ट्वा, जर्जर-स्नान-शाटी-निर्बद्धम् अलंकरणभाण्डम् उपलक्ष्य ग्रहीतुमना अपि न युक्तं तुल्यावस्थं कुलपुत्रजनं पीडयितुम्, तद् गच्छामि-इति मनश्चकार[९]। (८) ततो[१०] मैत्रेयश्चचारुदत्तम्[११] उद्दिश्य पुनः उदस्वप्नायत 'भो वयस्य ! शापितोऽसि[१२] गोब्राह्मणकाम्यया, यदि एतत् सुवर्णभाण्डं न गृहणासि'[१३] (९) ततो निर्वापिते प्रदीपे, इदानीं करोमि ब्राह्मणस्य प्रणयम्-इति भाण्डं जग्राह शर्विलकः मैत्रेयस्य हस्तात् । (१०) ग्रहणकाले च मैत्रेयः उत्स्वप्नायमान आह । 'भो वयस्य । शीतलस्ते[१४] हस्तग्रहः, इति' (११) तस्मिन् चौरे निष्क्रामति गृहाद् रदनिका सत्रासं प्रबुद्धा । हा धिक, हा धिक् ! अस्माकं गृहे सन्धिं कर्तित्वा चौरो निष्क्रान्तः ! (१२) आर्यमैत्रेय, उत्तिष्ठ उत्तिष्ठ । अस्माकं गृहे सन्धिं कृत्वा चौरो निष्क्रा-

---

(७) (इतस्ततो दृष्ट्वा) इधर-उधर देखकर । (जर्जर-स्नानशाटी निवद्ध) स्नान करने के पुराने कपड़े में बांधा हुआ (ग्रहीतुमनः) लेने की इच्छा । (न युक्तं तुल्यावस्थं कुलपुत्रजनं पीडयितुं) समान अवस्था में रहने वाले कुलीन मनुष्यों को कष्ट देना योग्य नहीं । (इति मनश्चकार) ऐसा दिल किया ।

(८) (शापितोऽसिगोब्राह्मणकाम्यया) शाप है तुझे गाय और ब्राह्मण की शपथ का (९) (निर्वापिते प्रदीपे) दीप बुझाने पर । (१०) (शीतलस्ते हस्तग्रहः) ठण्डा है तेरे हाथ का स्पर्श । (१२) (उत्तिष्ठोत्तिष्ठ) उठो उठो (उच्चैः आचक्रंद) ऊँचे से बोली ।

---

९ मनः + चकार । १० ततः + मैत्रेयः । ११ मैत्रेयः + चारुदत्तः । शापितः + असि । १३ ततः + निर्वा० । १४ शीतलः + ते ।

न्तः, इति उच्चैः आचक्रन्द । सोऽपि उत्थाय चारुदत्तं प्रबोधयामास (१३) चारुदत्तस्तु-आशान्वितः चौरोऽस्माकं महतीं निवासरचनां दृष्ट्वा सन्धिच्छेदनखिन्न इव निराशो गतः । किम् असौ कथयिष्यति तपस्वी सार्थवाहम् ? तस्यगृहं प्रविश्य न किंचिन् मया समासादितम् इति तम् एव चौरम् अनुशुशोच ।

—मृच्छकटिकम्

समास-विवरणम्

(१) समैत्रेयः—मैत्रेयेण सहितः=समैत्रेय ।

(२) मृदङ्गपणववंशादीनि—मृदङ्गश्च पणवश्च वंशश्च=मृदङ्गपणववंशाः । मृदङ्गपणववंशानि आदीनि येषां तानि=मृदङ्गपणववंशादीनी ।

(३) भूमिष्ठम्—भूम्यां तिष्ठिति इति भूमिष्ठम् ।

(४) आशान्वितः—आशया अन्वितः=आशान्वितः ।

(५) जर्जरस्नानशाटीनिबद्धम्—स्नानार्थं शाटी=स्नानशाटी, जर्जरा स्नानशाटी=जर्जरस्नानशाटी । जर्जर स्नानशाट्यानिबद्धं=जर्जरस्नानशाटीनिबद्धम् ।

(६) सत्रासम्—त्रासेन सहितं=सत्रासम् ।

---

(१३) (आशान्वितः चौरः) आशायुक्त चोर । (महतीं निवासरचनां दृष्ट्वा) बड़ा महल देखकर । (संधिछेदन खिन्न इव निराशो गतः) छेद करके दुःखी बनकर निराश होकर गया । (नकिंचिन्मयासमासादितं) नहीं कुछ भी मैंने प्राप्त किया ।

पाठ सत्रहवां

'यत्' शब्द (पुंलिंग)

१	यः	यौ	ये
२	यम्	,,	यान्
३	येन	याभ्याम्	यैः
४	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
५	यस्मात्	,,	,,
६	यस्य	ययोः	येषाम्
७	यस्मिन्	,,	येषु

इसी प्रकार 'अन्य, अन्यतर, इतर, कतर, कतम, त्व' इत्यादि सर्वनामों के रूप बनते हैं। 'अन्यतम' सर्वनाम के रूप 'देव' शब्द के समान होते हैं।

'किम्' शब्द (पुंलिंग)

१	कः	कौ	के
२	कम्	,,	कान्
३	केन	काभ्याम्	कैः

इत्यादि रूप 'यत्' के समान ही होते हैं।

'तद्' शब्द (पुंलिंग)

१	सः	तौ	ते
२	तम्	तौ	तान्
३	तेन	ताभ्याम्	तैः

इत्यादि रूप 'यत्' के समान ही होते हैं।

'द्वि' शब्द (पुंल्लिंग)

शब्द का केवल द्विवचन में ही प्रयोग होता है।

१	द्वौ	५	द्वाभ्याम्
२	द्वौ	६	द्वयोः
३	द्वाभ्याम्	७	द्वयोः
४	द्वाभ्याम्		

'त्रि' शब्द (पुल्लिंग)

इस शब्द का केवल बहुवचन में ही प्रयोग होता है।

१	त्रयः	५	त्रिभ्यः
२	त्रीन्	६	त्रयाणाम्
३	त्रिभिः	७	त्रिषु
४	त्रिभ्यः		

'चतुर' शब्द (पुल्लिंग)

१	चत्वारः	४-५	चतुर्भ्यः
२	चतुरः	६	चतुर्णाम्
३	चतुर्भिः	७	चतुर्षु

पञ्चन्, षष्, सप्तन्, अष्टन्, नवन्, दशन्, एकादशन्, द्वादशन्, योदशन्, चतुर्दशन्, पंचदशन्, षोडशन्, सप्तदशन्, अष्टदशन्, भी सी प्रकार नित्य बहुवचनान्त चलते हैं।

(१-२) पञ्च षट् सप्त अष्टौ नव दश

३) पञ्चभिः षड्भिः सप्तभिः अष्टाभिः (अष्टभिः) नवभिः दशभिः

४-५) पञ्चभ्यः षड्भ्यः सप्तभ्यः अष्टाभ्यः (अष्टभ्यः) नवभ्यः शभ्यः (६) पञ्चानाम् षण्णाम् सप्तनाम् अष्टनाम् नवानाम् शानाम् (७) पञ्चसु षट्सु सप्तसु अष्टासु (अष्टसु) नवसु दशसु

—सन्धि—

(२६) नियम—पदान्त के 'न्' के पश्चाद् 'च' अथवा 'छ' आने से न का अनु-स्वार म+श् बनता है,

पदान्त के 'न्' के पश्चात् 'ट' अथवा 'ड' आने 'न्' का अनुस्वार ण +

पदान्त के 'न्' के पश्चात् 'त' अथवा 'थ' आने पर
'न्' का अनुस्वार न्+स् बनता है।

पदान्त के 'न्' के पश्चात् 'ज', 'झ', अथवा 'श' आने पर
'न्' के अनुस्वार क 'ञ्' बनता है।

पदान्त के 'न्' के पश्चात् 'ड' अथवा 'ढ' आने पर
'न्' के अनुस्वार का 'ण्' बनता है।

पदान्त के 'त्' के पश्चात् 'ल्' आने पर
'न्' के अनुस्वार का अनुस्वार+ल् बनता है।

उदाहरण—तान् + चौरान् = ताँश्चौरान्
सर्वान् + छात्रान् = सर्वांश्छात्रान्
तस्मिन् + टीका = तस्मिंष्टीका
तान् + तरून् = तांस्तरून्
कान् + जनान् = काञ्जनान्
यान् + शत्रून् = याञ्छत्रून्
तान् + डिभान् = ताण्डिंभान्
तान् + लोकान् = तांल्लोकान्

शब्द—पुल्लिंगी

सार्थवाह=व्यापारी । मनीषिन्=विद्वान् । काक=कौवा । अनुचर=नौकर, सेवक । सार्थ=झुण्ड, (व्यापारी) । जम्बूक=गीदड़ । आहार=भोजन । उष्ट्र=ऊँट । वायस=कौवा । खल=दुष्ट । उपवास=व्रत, लंघन ।

स्त्रीलिंगी

उक्ति=भाषण । कुक्षि=पेट, बगल ।

नपुंसकलिंगी

[illegible]=[illegible] । कुत्सित=कुटिल, गन्दा । शरीरवैकल्य=शरीर भिन्नता । मांस=गोश्त ।

विशेषरण

परिक्षीण=दुबला । बुभुक्षित=भूखा । अनुगृहीत=उपकार हुआ । स्वाधीन—स्वतन्त्र, पास रखा हुआ, अपने काबू में । व्यग्र—दुःखी ।

क्रिया

जग्मुः—गये । विदार्य—फाड़कर । दोलायते—हिलती है । अकथयत्—कहा ।

विशेषणों का उपयोग

बुभुक्षितः मनुष्यः । क्षीणः पुरुषः । बुभुक्षिता नारी । क्षीणा माता । बुभुक्षितं मनः । क्षीणं मित्रम् ।

(१४) सिंहानुचराणां कथा

(१) अस्ति कस्मिश्चिद् वनोद्देशे मदोत्कटो नाम सिंहः । तस्य सेवकास्त्रयः[1]—काको व्याघ्रो जम्बूकश्च[2] । (२) अथ तैर्भ्रमद्भिः सार्थाद् भ्रष्टः[3] कश्चिद् उष्ट्रो[4] दृष्टः । पृष्टश्च—कुतो[5] भवान् आगतः ? (३) स च आत्मवृत्तान्तम् अकथयत् । ततस्तैर्नीत्वा[6]

(१) (वनोद्देशे)—जङ्गल के एक स्थान में । (मदोत्कटः) घमंड से भरा हुआ, सिंह का नाम । (२) (सार्थाद्भ्रष्टः कश्चिदुष्ट्रो दृष्टः) काफ़िले से अलग हुआ कोई एक ऊंट देखा । (पृष्टश्च) और पूछा (कुतो भवानागतः)—कहां से आप आये । (३) (ततस्तैर्नीत्वाऽसौसिंहायसमर्पितः) अनन्तर उन्होंने ले जाकर वह सिंह

१ सेवकाः+त्रयः । २ जम्बूकः+च । ३ उष्ट्रः+दृष्टः
५ कुतः+भवान् । ६ ततः+तैः+नीत्वा+असौ ।

ऽसौ सिंहाय[६] समर्पितः । तेन अभयवाचं दत्वा चित्रकर्ण[७] इति[७] नाम कृत्वा स्थापितः. (४) अथ कदाचित् सिंहस्य शरीरवै-कल्याद् भूरिवृष्टिकारणात् च, आहारं अलभमानास्ते[८] व्यग्राः बभूवुः[९] (५) ततस्तैः[१०] आलोचितम् । चित्रकर्णम् एव यथा स्वामी व्यापा-दयति तथाऽनुष्ठीयताम्[११] । (६) किम् अनेन कण्टकभुजा । व्याघ्र उवाच—स्वामिनाभयवाचं[१२] दत्वाऽनुगृहीतः । तत्कथं एवं संभ-वति । (७) काकोब्रूते—इह समये परिक्षीणः स्वामी पापम् अपि करिष्यति । बुभुक्षितः किं न करोति पापम् । (८) इति संचिन्त्य सर्वे सिंहान्तिकं जग्मुः । सिंहेन उक्तम् । आहाराय किंचित् प्राप्तम् ? (९) तैः उक्तम् यत्नाद् अपि न प्राप्तं

लिए अर्पण किया । (तेन अभयवाचं दत्वा) उसने अभय वचन देकर । (४) (शरीर-वैकल्यात्) शरीर अस्वस्थ होने से (भूरि वृष्टिकारणात्) बहुत वर्षा होने से । (५) (तैरालोचितं)—उन्हों-ने सोचा । (यथा स्वामी व्यापादयति तथाऽनुष्ठीयतां) जिससे स्वामी मार डाले वैसा कीजिये । (६) (किमनेन कण्टकभुजा)—इस कांटे खाने वाले से क्या करना है । (अनुगृहीतः) मेहरबानी की (तत् कथमेवं संभवति)—तो कैसे ऐसा हो सकता है । (७) (परिक्षीणः) अशक्त । (बुभुक्षितः किं न करोति पापं) भूखा कौन-सा पाप नहीं करता । (८) (इति संचिन्त्य) इस प्रकार विचार

---

७ कर्णः + इति । ८ मानाः + ते । ९ व्यग्राः + बभूवुः । १० ततः + तैः । ११ तथा + अनु० । १२ स्वामिना + अभय ।

किंचित् । सिंहेनोक्तम्[13]—कोऽधुना[14] जीवनोपायः ? (१०) देव, स्वाधीनाहारपरित्यागात् सर्वनाशः अयम् उपस्थितः । (११) सिंहेनोक्तम्[13]—अत्र आहारः कः स्वाधीनः ? काकः कर्णे कथयति—चित्रकर्ण इति । (१२) सिंहो भूमिं स्पृष्ट्वा कर्णौ स्पृशति, अभयवाचं दत्वा धृतोऽयम्[15] अस्माभिः । तत् कथं संभवति ? (१३) तथा च सर्वेषु दानेषु अभयप्रदानं महादानं वदन्ति इह मनीषिणः । (१४) काको ब्रूते[16]—नासौ स्वामिना व्यापादयितव्यः, किंतु अस्माभिरेव[17] तथा कर्त्तव्यम् । असौ स्वदेहदानम् अंगी करोति । (१५) सिंहः तत् श्रुत्वा तूष्णीं स्थितः । तेनाऽसौ[18] वायसः कूटं कृत्वा सर्वान् आदाय सिंहान्तिकं गतः (१६)

करके ।(सर्वे सिंहान्तिकं जग्मुः) सब शेर के पास गये ।(आहारार्थम्) भोजन के लिये (९) (कोऽधुना जीवनोपायः)—कौन-सा अब जिंदा रहने के लिये उपाय है। (१०) स्वाधीनाहारपरित्यागात्) अपने पास का भोजन छोड़ने से। (सर्वनाशोऽयमुपस्थितः) सब का यह नाश आ रहा है। (११) (अत्राहारः कः स्वाधीनः) यहाँ कौन-सा भोजन अपने पास है। (१२) (भूमिं स्पृष्ट्वा कर्णौ स्पृशति) जमीन को स्पर्श कर के कानों को हाथ लगाता है। (१३) (सर्वेषु दानेषु अभयदानं महादानं वदन्ति)—सब दानों में अभयदान बड़ा दान है ऐसा विद्वान् कहते हैं। (१४) (असौ स्वदेहदानमंगीकरोति)—यह अपना शरीर देना स्वीकार करेगा

---

१३ सिंहेन+उक्तं । १४ कः+अधुना । १५ धृतः+अयं । १६ न+असौ । १७ अस्माभिः+एव । १८ ततः+असौ ।

अथ काकेन उक्तम्---देव, यत्नाद् अपि आहारो न प्राप्तः। अनेकोपवासखिन्नः स्वामी। (१७) तद् इदानीं मदीयंमासं उपभुज्यताम्। सिंहेन उक्तम्---भद्र! वरं प्राणपरित्यागः, न पुनर् ईदृशी कर्मणि प्रवृत्तिः। (१८) जम्बूकेन अपि तथोक्तम्। ततः सिंहेन उक्तम्—मैवम्। अथ चित्रकर्णोऽपि जात-विश्वासः तथैव आत्मदानम् आह। (१९) तद् वदन् एव असौ व्याघ्रेण कुक्षिं विदार्य व्यापादितः सर्वैर्भक्षितश्च[19]। अतोऽहं[20] ब्रवीमि---सताम् अपि मतिः खलोक्तिभिः दोलायत[21] इति।

---हितोपदेशः।

---

(१५) (तूष्णीं स्थितः)---चुपचाप रहा। (वायसः कूटं कृत्वा) कौवा कपट की सलाह करके। (सर्वानादाय सिंहान्तिकं गतः) सब को लेकर शेर के पास गया। (१६) (अनेकोपवास-खिन्नः) अनेक उपवासों से दुःखित। (१७) (मदीयं मांसम् उपभुज्यताम्) मेरा गोश्त खाओ। (वरं प्राणपरित्यागः) मरना अच्छा है। (न पुनः कर्मणि ईदृशी प्रवृत्तिः) परन्तु कर्म में ऐसा प्रयत्न ठीक नहीं। (१८) (जातविश्वासः) जिसका विश्वास हुआ है। (आत्म-दानमाह) अपना दान बोला। (१९) (कुक्षिं विदार्य) बगल फाड़-कर। (सतामपि मतिः खलोक्तिभिःदोलायते)—सज्जनों की भी बुद्धि दुष्टों की बातों से चञ्चल हो जाती है।

---

१९ सर्वैः + भक्षितः। २० अतः + अहं। २१ दोलायते + इति।

पाठ अठारहवां

'अस्मत्' शब्द

इसके तीनों लिङ्गों में समान ही रूप होते हैं।

१	अहम्	आवाम्	वयम्
२	माम् (मा)	आवाम् (नौ)	अस्मान् (नः)
३	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
४	मह्यम् (मे)	आवाभ्याम् (नौ)	अस्मभ्यम् (नः)
५	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
६	मम (मे)	आवयोः (नौ)	अस्माकम् (नः)
७	मयि	आवयोः	अस्मासु

इस शब्द के द्वितीया, चतुर्थी, षष्ठी इन तीनों विभक्तियों के प्रत्येक वचन के दो-दो रूप होते हैं। इसी प्रकार 'युष्मद्' शब्द के भी होते हैं। देखिये—

१	त्वम्	युवाम्	यूयम्
२	त्वां (त्वा)	युवाम् (वाम्)	युष्मान् (वः)
३	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
४	तुभ्यम् (ते)	युवाभ्याम् (वाम्)	युष्मभ्यम् (वः)
५	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
६	तव (ते)	युवयोः (वाम्)	युष्माकम् (वः)
७	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

'अदस्' शब्द (पुंल्लिगी)

१	असौ	अमू	अमी
२	अमुम्	,,	अमून्
३	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
४	अमुष्मै	,,	अमीभ्यः
५	अमुष्मात्	,,	,,
६	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
७	अमुष्मिन्	,,	

सन्धि

(३२) नियम—पदान्त के त् का 'च, छ, श' सामने आने पर च् बनता है।

,,	,,	ज् झ्	,,	ज्	,,
,,	,,	ट् ठ्	,,	ट्	,,
,,	,,	ड् ढ्	,,	ड्	,,
,,	,,	ल्	,,	ल्	,,

उदाहरण :—

तत्	+	चरणौ	=	तच्चरणौ
तत्	+	छाया	=	तच्छाया
तत्	+	शास्त्रम्	=	तच्छास्त्रम्
तत्	+	जलम्	=	तज्जलम्
यत्	+	झझरः	=	यज्झझरः
तत्	+	टीका	=	तट्टीका
यत्	+	डयनम्	=	यड्डयनम्
तस्मात्	+	लोकात्	=	तस्माल्लोकात्

(३३) नियम—'त्' के बाद अनुनासिक आने से 'त्' को 'न्' अथवा 'द्' होता है।

तत्	+	मनः	=	तन्मनः, तद्मनः
यत्	+	मतम्	=	यन्मतम्, यद्मतम्
तस्मात्	+	नित्यम्	=	तस्मान्नित्यम्, तस्माद्नित्यम्

यहाँ पाठकों को स्मरण रखना चाहिए कि नकार होने वाला पहला रूप ही बहुत प्रसिद्ध है।

शब्द—पुंल्लिंग

प्रबोधः = ज्ञान, जागृति। प्रकाशः = उजाला। सचिवः = मन्त्री।

महाभागः=महाशय। सौरभः=सुगन्ध। वत्सरः=वर्ष, साल। प्रधानः=मुख्य (मन्त्री)। महीपतिः=भूपालः=राजा। सार्वभौमः=सम्राट्, राजाधिराज। अञ्जलि=हाथ। अञ्जलिबंधः=हाथ जोड़ना। अंशः=हिस्सा।

स्त्रीलिंगी

निःसारता=खुश्की, सार न होना। निःश्रीकता=निःसारता।

नपुँसकलिंगी

कृत=करने वाला। रूपक=अलंकार। विभव=धन-दौलत। सदन=घर। विश्वमंडल=जनममंडल। द्वार=दरवाजा। तत्व=सार। अन्तर=मन। प्रयाण=प्रवास।

विशेषण

सहज=साथ उत्पन्न हुआ-हुआ (स्वाभाविक)। वर्तिन्=रहने वाला। मन्वान=मानते वाला। प्रतिश्रुतवत्=प्रतिज्ञा करने वाला, वचन देने वाला। नियोज्य=सेवक। सरल=सीधा। इतर=अन्य। भद्रमुख=श्रेष्ठ, प्रियदर्शी। प्रत्यावृत्त=लौटा हुआ। मृत=मरा हुआ। संवृत्त=हुआ-हुआ। निश्चेतन=अचेतन, जड़। अपक्रान्त=अलग हुआ-हुआ। विच्छिन्न=टूटा हुआ। बहु=बहुत। आक्रान्त=व्याप्त। निकृष्ट=नीच। अनुपयुक्त=निरुपयोगी। प्रतिनिवृत्त=वापस आया हुआ। विकल=शिथिल। सुव्यवस्थित=ठीक-ठीक। उन्नत=उठा हुआ।

क्रिया

विश्वसिति=विश्वास करता है। स्निह्यति=स्नेह क
मन्यन्ते=मानते हैं। उपगच्छेयुः=पास जावेंगे। ७५क

करके। पालयति=पालन करता है। आकर्ण्य=सुनकर। वर्तेरन्=रहेंगे। अधिचिक्षिपुः=नीचा मानने लगे। उपाक्रंसत=प्रारम्भ किया। श्रूयताम्=सुनिये। प्रतिष्ठितः=चल पड़ा। पप्रच्छ=पूछा। प्रायात्=चला। निर्णीयताम्=निश्चय कीजिये। पर्यटच=घूमकर। उपयुज्यते=उपयोग किया जाता है।

कथा में आये हुए विशेष शब्दों के आध्यात्मिक अर्थ।

नवद्वारं नगरम्=शरीर। सचिवः=मन। प्रकाशानन्दः=आँख। स्पर्शानन्दः=त्वचा, चमड़ा। संल्लापानन्दः=वाक् मुँह। आनन्दवर्मन्=जीवात्मा। सार्वभौम=ईश्वर। सौरभानन्द,=नाक। रसानन्दः=जिह्वा।

ये अर्थ वास्तव में इन शब्दों के नहीं, परन्तु कथा के प्रसङ्ग से माने हुए हैं—इतनी बात पाठकों को ध्यान रखनी चाहिए।

(१५) प्रबोधकृद् रूपकम्

(१) अस्ति विश्वमण्डलेषु नव द्वारं नाम नगरम्। तत्र च बभूव पतिः आनंदवर्मा नाम।

(२) आसीच्च[1] अस्य कोऽपि[2] सचिवः, अन्ये च नियोज्या[3] बहवः।

(३) सरलतममतिरसौ[4] भूपः सर्वेषु अपि एतेषु तथा विश्वसिति,

(१५) ज्ञान देने वाली आलङ्कारिक कथा

(१) इस जगत्-चक्र में एक नौ दरवाज़ों वाला शहर है। वहाँ आनन्द-वर्मा नामक राजा हुआ।

(२) उसका कोई एक मंत्री था, और अन्य सेवक बहुत थे।

(३) अति सरल बुद्धि वाला यह राजा इन सबके ऊपर वैसा ही

१ आसीत्+च। २ कः+अपि। ३ नियोज्याः+बहवः। ४ मतिः+असौ।

तया च स्निह्यति, तथैव चैतान्[५] पालयति, यथैते[६] सर्वेऽपि[७] प्रत्येकं वयमेव भूपाला इति मन्यन्ते स्म ।

(४) गच्छता च कालेन विभ-सहजेन अनात्मज्ञभावेन आक्रान्ताः वेंऽपि स्वेतरं निकृष्टं आत्मानम् एव प्रधानं मन्वानाः, आनन्दवर्माणं ापि अधिचिक्षिपुः ।

(५) उपाक्रंसत च विवादं अन्योऽन्यम्[८] । अथ एवं विवदमाना एते कमपि सार्वभौमं उपगत्य प्रोचुः—महाभाग, निर्णीयतां कोऽस्मासु[९] प्रधान इति ।

(६) सार्वभौमः प्राह—भद्र-मुखाः, श्रूयतां तत्वम् । युष्मासु यस्मिन् अपक्रान्ते सर्वेऽपि यूयं निःसा-रतां, चानुपयुक्ततां[१०]चोपगच्छेयुः[११], स एव प्रधानतमः ।

(७) तत् क्रमशः उपक्रम्य निश्चीयतां कः प्रधान इति । तद् आकर्ण्य प्रसन्नान्तराः सर्वेऽपि तथा

विश्वास रखता, और स्नेह करता, और इन को वैसा हीं पालता, जिससे कि ये सब (हर एक) 'हम ही राजा हैं' ऐसा मानते रहे ।

(४) कुछ समय जाने पर दौलत के साथ उत्पन्न होने वाले आत्म-विषयक अज्ञान से युक्त हुए-हुए सब अपने से गैर को नीच और अपने-आपको मुख्य मानते हुए आनन्दवर्मा को भी नीचा मानने लगे ।

(५) प्रारम्भ हुआ झगड़ा एक दूसरे से । इस प्रकार झगड़ते हुए वे किसी सम्राट् के पास जाकर बोले—हे श्रेष्ठ, निश्चय कीजिये, कौन हमारे में मुख्य है ?

(६) महाराजाधिराज ने कहा—सज्जनो, तत्व सुन लीजिये । तुम्हारे अन्दर से जिसके जाने से तुम सब निःसत्व और निकम्मे हो जाओ (गे), वही सब में श्रेष्ठ है ।

(७) इसलिये क्रम से प्रारम्भ करके निश्चय कर लो कि कौन मुख्य है । वह सुनकर प्रसन्नचित्त होकर सब

---

५ च+एतान् । ६ यथा+एते । ७ सर्वे+अपि । ८ अन्यः+अन्यं । ९ कः+अस्मासु । १० च+अनुपयु० । ११ च+उपग० ।

कर्तुं प्रतिश्रुतवन्तः ।

(८) अथैतेषु[१२] प्रथमं प्रातिष्ठत् कोऽपि नियोज्यः प्रकाशानन्दो[१३] नाम ।

(९) आ-वत्सरं च देशान्तरे पिर्यट्य प्रत्यावृत्तोऽयम्[१४] अन्यान् पप्रच्छ—कथं वा भवन्तो मयि[१५] गतेऽवर्तन्त इति ।

(१०) अन्ये प्राहुः—यथा एक-सदन-वर्तिषु पुरुषेषु एकस्मिन् मृते अपरे वर्तेरंस्तथा[१६] इति ।

(११) ततोऽपरः सौरभानन्दो नाम प्रायात् । तस्मिन् प्रतिनिवृत्ते स्पर्शानन्दः, तदुत्तरं[१७] रसानन्दः, तदनु संल्लापानन्दः, ततः परं सचिवः—इति एवं क्रमेण सर्वेऽपि प्रस्थाय, प्रतिनिवृत्य च विनाऽपि[१८] आत्मानम् अन्येषां अविच्छिन्नसुखशालितां प्रत्यक्षीचक्रुः ।

(१२) अथ महीपतिः आनन्दवर्मा प्रस्थातुम् उपाक्रमत । प्रतिष्ठमान

ने वैसा करने के लिये प्रतिज्ञा की ।

(८) अब इनमें से पहले निकल गया एक नौकर प्रकाशानन्द नाम वाला ।

(९) एक वर्ष अन्य देश में घूमघामकर लौटकर, यह दूसरों से पूछने लगा—किस प्रकार आप मेरे जाने पर रहे (थे) ?

(१०) दूसरे बोले-जिस प्रकार एक मकान में रहने वाले पुरुषों में से एक के मरने पर दूसरे रहते हैं वैसे ।

(११) तब (एक) दूसरा सौरभ-नन्द नाम वाला चल पड़ा । उसके लौट आने पर स्पर्शानन्द, उसके बाद रसानन्द, उसके पीछे संल्लापानन्द, पश्चात् प्रधान (मन्त्री), इस प्रकार क्रम से सभी चले जाकर और लौट आकर अपने बिना दूसरों के सुख में अभेद भाव प्रत्यक्ष किया ।

(१२) बाद राजा आनन्द [illegible] चलने लगा । उसके उठते ही [illegible]

---

१२ अथ+एषु । १३ प्रकाशानन्दः+नाम । १४ वृत्तः+अयम् । [illegible]+अपि । १६ [illegible]+तथा । १७ तद्+उत्तरं । [illegible]+अपि ।

[19] एवं च अस्मिन् विकल-विकला इव अभवन् अन्ये ।

(१३) निःश्रीकतां च अवापुः [20] ऊचुश्च साञ्जलिबंधम्—भवान् एव [21] अस्मासु प्रधानः । तत् कृतं प्रयाणा-यासेन ।

(१४) भवन्त अन्तरा हि निश्चे-[22] तना इव संवृत्ता स्म इति ।

(१५) तद् आकर्ण्य प्रतिन्यवर्तत श्रीमान् आनन्दवर्मा भूपालः । आसीच्च यथापूर्वं सुव्यवस्थितं सर्वम् ।

(संस्कृत-चन्द्रिका)

गलित-अशक्त हो गये ।

(१३) और शोभा रहित हो गये । और बोलने लगे हाथ जोड़कर—

आप ही हमारे श्रेष्ठ (हैं)—बस, अब जाने के कष्ट से बस ।

(१४) आप के बिना हम अचेतन जैसे हो गये (हैं) ।

(१५) सो सुनकर वापस आ गये—श्रीमान् आनन्दवर्मा महाराज । और हो गया पूर्व के समान सब ठीक-ठाक ।

(संस्कृत-चन्द्रिका)

समास-विवरणम्

(१) प्रबोधकृत्—प्रबधं ज्ञानं करोतीति प्रबोधकृत्=ज्ञानकृत् ।

(२) नवद्वारम्—नव द्वाराणि यस्मिन् तत्—नवद्वारम्—नव-द्वारयुक्तम् ।

(३) सरलतममतिः—अतिशयेन सरला सरलतमा । सरलतमा मतिः यस्य सः=सरलतममतिः, सरलतमबुद्धिः ।

(४) विभवसहजः—विभवेन सह जायते इति=विभवसहजः !

(५) अनात्मज्ञभावः—आत्मानं जानाति इति आत्मज्ञः । न आत्मज्ञः=अनात्मज्ञः । अनात्मज्ञस्य अनात्मज्ञभावः=आत्मज्ञानहीनता ।

१९ मानः+एव । २० ऊचुः+च । २१ प्रयाण+आयास

(६) प्रसन्नान्तराः—प्रसन्नम् अन्तरम् येषां ते=प्रसन्नान्तराः—हृष्टमनस्काः ।

(७) अविच्छिन्नसुखशालिता—अविच्छिन्ना सुखशालिता=अविच्छिन्नसुखशालिता ।

पाठ उन्नीसवां

'एतद्' शब्द पुंल्लिगी

१	एषः	एतौ	एते
२	एतम्, (एनम्)	एतौ, (एनौ)	एतान्, (एनान्)
३	एतेन, (एनेन)	एताभ्याम्	एतैः
४	एतस्मै	,,	एतेभ्यः
५	एतस्मात्	,,	,,
६	एतस्य	एतयोः, (एनयोः)	एतेषाम्
७	एतस्मिन्	,,	एतेषु

'इदम्' शब्द पुंल्लिगी

१	अयम्	इमौ	इमे
२	इमम्, (एनम्)	इमौ, (एनौ)	इमान्, (एनान्)
३	अनेन, (एनेन)	आभ्याम्	एभिः
४	अस्मै	,,	एभ्यः
५	अस्मात्	,,	,,
६	अस्य	अनयोः (एनयोः)	एषाम्
७	अस्मिन्	,,	एषु

'प्रथम' शब्द पुंल्लिंगी

१	प्रथमः	प्रथमौ	प्रथमे, प्रथमाः
२	प्रथमम्	,,	प्रथमान्
३	प्रथमेन	प्रथमाभ्याम्	प्रथमैः

इसके शेष रूप देव शब्द के समान होते हैं, केवल प्रथमा विभक्ति के बहुवचन के दो रूप होते हैं। नियम ३० में इस बात का उल्लेख किया है। वही बात स्पष्ट करने के लिए यहां लिखी है। इसी प्रकार 'द्वितीय, तृतीय' इत्यादि नियम ३० में कहे हुए शब्दों के विषय में जानना चाहिए।

'द्वितीय' शब्द पुंल्लिंगी

१	द्वितीयः	द्वितीयौ	द्वितीये, द्वितीयाः
२	द्वितीयम्	,,	द्वितीयान्
३	द्वितीयेन	द्वितीयाभ्याम्	द्वितीयैः
४	द्वितीयस्मै, द्वितीयाय	,,	द्वितीयेभ्यः
५	द्वितीयस्मात्	,,	,,
६	द्वितीयस्य	द्वितीययोः	द्वितीयानाम्
७	द्वितीयस्मिन्, द्वितीये	,,	द्वितीयेषु

इसी प्रकार तृतीय शब्द के रूप होते हैं। पूर्वोक्त 'द्वितय, 'त्रितय' शब्द तथा यहां कहे हुए द्वितीय, 'तृतीय' शब्द भिन्न-भिन्न हैं। यह बात पाठकों को भूलनी नहीं चाहिए।

इस प्रकार सर्वनामों के रूपों का विचार हो गया। यहाँ तक नाम, तथा सर्वनाम का जो विचार हुआ है, तथा जो-जो रूप दिये हैं, वे सब पुल्लिग में समझने चाहियें। स्त्रीलिंग तथा नपुंसकलिंग के शब्दों के रूप भिन्न प्रकार से होते हैं। उनका आगे वर्णन होगा।

(३४) नियम—पदान्त के 'त्' के सामने 'श्' आने से 'च्' बनता है तथा शकार का विकल्प से 'छ्' बनता है।

(३५) नियम—पदान्त के 'न्' के सामने 'श्' आने से 'ञ्' बनता है तथा शकार का विकल्प से 'छ' बनता है। उदाहरण—

तत् + शस्त्रम् = तच्शस्त्रम्, तच्छस्त्रम्

तान् + शावकान् = ताञ्शावकान्, ताञ्छावकान्

(३६) नियम—'ञ औ श्' के बीच में, तथा 'ञ् और छ' के बीच में विकल्प से 'च्' लगाया जाता है। उदाहरण—

तान् + शत्रून् = ताञ्शत्रून्, ताञ्छत्रून्।

शब्द—पुंल्लिंगी

अभिषेक:—स्नान । राज्याभिषेक:—राजगद्दी पर बैठना। हार:—कण्ठा, माला। मुक्ताहार:—मोतियों का कण्ठा। आदेश:—आज्ञा। कलश:—लोटा। किरीट:—मुकुट, ताज। भ्रातृ:—भाई। पौर:—नागरिक। जनपद:—देश। मूर्धनि—शिर पर। चामर:—चँवर।

स्त्रीलिंगी

प्रभृति—मुख्य, प्रारम्भ। भार्या—स्त्री। मुक्ता—मोती। कोटि—कोटि (करोड़) संख्या, अवस्था।

नपुंसकलिंगी

पीठ—आंगन। रत्न—जेवर।

विशेषण

[illegible]—[illegible]। दिव्य—स्वर्गीय, उत्तम। वर—श्रेष्ठ। [illegible]—रत्नों से भरा हुआ। सत्यसन्ध—सत्य प्रतिज्ञा करने

वाला। विसृष्ट—भेजा हुआ। महार्ह—बहुमोल। पूजित—सत्कार किया हुआ। पूर्ण—भरा हुआ। श्वेत—सफेद। दीन—अनाथ। भूरि—बहुत। यथार्ह—योग्यता के अनुकूल।

क्रिया

प्रतिनिववृते—लौट आया (वह)। आनिन्युः, समानिन्युः—लाये (वे)। दधतुः—(दोनों ने) धारण किया। अधिजग्मुः—(वे) प्राप्त हुए। सन्निवेशांचकार—बिठलाया। प्रेषय—भेजो। निवेदयामास—निवेदन किया। अभिषिषिचुः—अभिषेक किया। निहत्य—मार कर। नियोजयामास—नियुक्त किया। जग्राह—पकड़ा। समर्पयांचकार—अर्पण किया।

(१६) श्रीरामचन्द्रस्य राज्याऽभिषेकः

(१) श्रीरामचन्द्रः दशरथस्य आदेशाद् वनं गत्वा तत्र लंकाधिपतिं रावणं निहत्य, चतुर्दश संवत्सरान्ते, भार्यया सीतया भ्रात्रा लक्ष्मणेन, हनूमत्प्रभृतिभिः वानरैः सह अयोध्यां राजधानीं प्रतिनिववृते। (२) तदा श्रीरामचन्द्रस्य मातरः, भरतः, शत्रुघ्नः, मन्त्रिणः, सकला पौराश्च[1] आनन्दस्य परां कोटिम् अधिजग्मु। ततो भरतः सुग्रीवम् उवाच—हे प्रभो! श्रीरामचन्द्रस्य अभिषेकार्थं शुभं सिन्धु जलमानेतुं[2] दूतान् आशु प्रेषय इति।

(१) (चतुर्दश-संवत्सरान्ते)—चौदह वर्षों के पश्चात्। (भ्रात्रा लक्ष्मणेन सह) भ्राता लक्ष्मण के साथ। (२) (श्रीरामचन्द्रस्ये मातरः)—श्रीरामचन्द्र की मातायें। (सकलाः पौराः) नगर के सब लोग। (आनन्दस्य परां कोटिं अधिजग्मुः) आनन्द की उच्चतम

१ पौराः+च। २ जलं+आनेतुं।

(४) तदनु सुग्रीवो[३] वानर श्रेष्ठान् तस्मिन् कर्मणि नियोजयामास। (५) ते जलपूर्णान् सुवर्णकलशान् सत्वरं समानिन्युः। (६) तत्पश्चाद् रामस्य अभिषेकार्थं शत्रुघ्नो वसिष्ठाय निवेदयामास। (७) ततो[४] वसिष्ठो[५] मुनिः सीतया सह रामं रत्नमये पीठे सन्निवेशयांचकार। (८) अनन्तरं सर्वे मुनयः श्रीरामचन्द्रं पावनजलैरभिषिषिचुः। (९) तत्पश्चाद् महार्हं रत्नकिरीटं वशी वसिष्ठः श्रीरामचन्द्रस्य मूर्धनि स्थापयामास। (१०) तदानीं रामस्य शीर्षोपरि पाण्डुरं छत्रं शत्रुघ्नो जग्राह। (११) सुग्रीवविभीषणौ दिव्ये श्वेतचामरे दधतुः। (१२) तस्मिन् काले इन्द्रः परमप्रीत्या धवलं मुक्ताहारं श्रीरामचन्द्राय समर्पयाँचकार। (१३) एवं प्रजावत्सले, सत्यसंधे, धर्मात्मनि रामचन्द्रे राज्ये अभिषिच्यमाने, सर्वेजपनदाः आनन्दस्य परां कोटिं गताः। (१४) तस्मिन् काले रामो[६] दीनेभ्यो[७] भूरिद्रव्यं

अवस्था को प्राप्त हुए। (३) (दूतानाशु प्रेपय) सेवकों को शीघ्र भेजो। (४) (तस्मिन्कर्मणि नियोजयामास) उस कार्य में लगाये (समानिन्युः) लाये। (८) (पावन जलैः अभिषिषिचुः) शुद्ध जलों से अभिषेक किया। (१३) इस प्रकार प्रजापालक, सत्यप्रतिज्ञ धर्मात्मा रामचन्द्र का राज्य-अभिषेक होने के समय लोग आनन्द की अन्तिम सीमा तक पहुँच गये।

---

३ सुग्रीवः + वानर०। ४ ततः + वसिष्ठ०। ५ वसिष्ठः + मुनिः। ६ रामः + दीने०। ७ दीनेभ्यः + भूरि।

[illegible]

[illegible] । [illegible]

समास-विग्रह

१—त्रिभुवनम्—त्रिलोक्याः जनं=त्रिभुवनम् ।

२—वानरश्रेष्ठान्— वानरेषु श्रेष्ठान्=वानरश्रेष्ठान् ।

३—बलदृप्तौ—बलेन दृप्तौ, बलदृप्तौ । तान् बलदृप्तान् ।

४—सुग्रीवविभीषणौ—सुग्रीवश्चविभीषणश्च=सुग्रीवविभीषणौ ।

५—पावनजलम्—पावनं जलं=पावनजलम् ।

६—मुक्ताहारः—मुक्तानां हारः=मुक्ताहारः ।

७—सुग्रीवादयः—सुग्रीवः आदि येषां ते=सुग्रीवादयः ।

८—सत्यसंधः—सत्यः (सत्यं) संधो यस्य सः सत्यसंधः,
सत्यप्रतिज्ञ ।

पाठ बीसवां

यहाँ तक पाठकों के १९ पाठ हो चुके हैं। अब नपुंसकलिंगी नामों के रूप बनाने का प्रकार बताना है। नपुंसकलिंगी शब्द तृतीया विभक्ति से सप्तमी विभक्ति तक प्रायः पुल्लिंगी शब्द की भांति ही चलते हैं, केवल प्रथमा, द्वितीया में पुल्लिंगी से भिन्न किन्तु प्रायः एक-से रूप होते हैं।

अकारान्त नपुंसकलिंगी 'ज्ञान' शब्द

१	ज्ञानम्	ज्ञाने	ज्ञानानि
सं०	(हे) ज्ञान	(हे) ,,	(हे) ,,
२	ज्ञानम्	,,	,,
३	ज्ञानेन	ज्ञानाभ्याम्	ज्ञानैः
४	ज्ञानाय	,,	ज्ञानेभ्यः
५	ज्ञानात्	,,	,,

६	ज्ञानस्य	ज्ञानयोः	ज्ञानानाम्
७	ज्ञाने	,,	ज्ञानेषु

ज्ञान शब्द के समान ही फल, धन, वन, कमल, गृह, नगर, भोजन, वस्त्र, भूषण, इत्यादि अकारान्त नपुंसकलिंगी शब्दों के रूप होते हैं।

इकारान्त नपुँसकलिंगी 'वारि' शब्द

१	वारि	वारिणी	वारीणि
सं० (हे)	वारे, वारि	,,	,,
२	वारि	,,	,,
३	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
४	वारिणे	,,	वारिभ्यः
५	वारिणः	,,	,,
६	,,	वारिणोः	वारीणाम्
७	वारिणि	,,	वारिषु

१	मधु	मधुनि	मधूनि
सं० (हे)	मधो, मधु	,,	,,
२	मधु	,,	,,
३	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
४	मधुने	,,	मधुभ्यः
५	मधुनः	,,	,,
६	,,	मधुनोः	मधूनाम्
७	मधुनि	मधुनोः	मधुषु

इसी प्रकार वस्तु, जन्तु, अश्रु, वसु इत्यादि उकारान्त नपुंसकलिंगी शब्द चलते हैं।

इकारान्त नपुंसकलिंगी 'शुचि' शब्द

	शुचि	शुचिनी	शुचीनि
	(हे) शुचे, शुचि	,,	,,

परिदेवतुम्=शोक करने के लिए। प्राक्रंस्त=प्रारम्भ किया। अदत्वा =न दे कर।

विशेषरण

राजत=चांदी का। लुनत्=काटने वाला। मुक्तकंठ=खुले गले से। कुटिल कपटी। बुद्धिपूर्वक=जान-बूझकर। श्रेयस्कर=कल्याण कारक।

(१७) श्रेयः सत्ये प्रतिष्ठितम्

(१) कस्यचित् पुरुषस्य एकं वृक्षं लुनतो हस्तात् सहसा निसृतः कुठारो[1] जलमभजत्। (२) ततः स शुशोच, मुक्तकण्ठं अरोदीत्। तस्य विलापं श्रुत्वा वरुणः[2] आविरासीत्। [illegible]) तं वरुणं स पुरुषः शोककारणम् अचकथत्। (५) तदा [illegible]गो जलान्तः प्रविश्य सुवर्णमयं कुठारं हस्तेन आदाय [illegible]। तस्मै पुरुषाय तं कुठारं दर्शयित्वा पृच्छति—रे! [illegible] परशुः ? इति। (६) स उवाच—नायं मदीय इति। [illegible]योऽपि[3] निमज्य राजतं कुठारं उददीधरत्। (७) तं [illegible]ा, नायम् अपि मम[4] इति स उवाच। (८) तृतीये उन्मज्जने

(१) (वृक्षं लुनतः) वृक्ष काटने वाले का (२) (मुक्त कण्ठं अरोदीत्)—खुले गले से रोया। (३) (वरुण आविरासीत्) वरुण प्रकट हुआ। (६) (नायं मदीयः) यह मेरा नहीं। (भूयोऽपि निमज्य) फिर डुबकी लगाकर। (६) (पारितोषिकत्वेन ददौ) [illegible] दिये। (१०) (कुठार-नाशं सत्यीकृत्य)—

१ कुठारः+जलं। २ वरुणः+आवि०। ३ भूयः+अपि। ४ मम+इति।

तस्य नष्टं कुठारं गृहीत्वोदगच्छत्[५]। तं स मुदा स्वीचकार। (९) तदा तस्य पुरुषस्य सरलतां दृष्ट्वा संतुष्टो वरुणः सुवर्ण-राजतौ द्वौ अपि कुठारौ तस्मै पारितोषिकत्वेन ददौ। (१०) वृत्तम् एतत् श्रुत्वा कश्चित् कुटिलो मनुष्यः सरितं गत्वा स्वकीय-कुठारं बुद्धिपूर्वं सलिले अपातयत्। कुठारनाशं सत्यीकृत्य परिदेवितुं प्राक्रंस्त। तच्छ्रुत्वा[६] यथापूर्वं वरुण आजगाम। (११) स सलिले निमज्य सौवर्णं परशुम् आदाय अपृच्छत्—किम् अयं ते परशुः इति। (१२) तं सुवर्णपरशुं दृष्ट्वा तस्य बुद्धि-भ्रंशो संजातः। (१३) स वरुणमुवाच। वाढम् अयमेव मम कुठार इति। (१४) एवमुक्त्वा लोभेन वरुणस्य हस्तात् तम् आदातुं प्रवृत्तः। (१५) तदा वरुणस्तं[७] निर्भर्त्स्य, सुवर्णं कुठारम् अदत्वा, तस्य कुठारमपि तस्मै न ददौ।

समासाः

१ शोककारणम्—शोकस्य कारणं=शोककारणम्। शोकप्रयोजनम्।
२ सरलताम्—सरलस्य भावः=सरलता (सरलत्वम्), ताम्।
३ बुद्धेः भ्रंशः=बुद्धिभ्रंशः।

कुल्हाड़े का नाश सत्य करके। (१३) (वाढं निश्चय से (१४) (आदातुं प्रवृत्तः) लेने के लिए

५ गृहीत्वा+उद्ग०। ६ तत्+श्रुत्वा। ७ वरुणः×

पाठ इक्कीसवां

उकारान्त नपुंसकलिंगी 'लघु' शब्द

१	लघु	लघुनी	लघूनि
सं० (हे)	लघो, लघु	,,	,,
२	लघु	,,	,,
३	लघुना, लघ्वा	लघुभ्याम्	लघुभिः
४	लघवे, लघुने	,,	लघुभ्यः
५	लघोः, लघुनः	,,	,,
६	,, ,,	लघ्वोः, लघुवोः	लघूनाम्
७	लघौ , लघुनि	,, ,,	लघुषु

वास्तव में लघु अथवा शुचि ये विशेषण हैं। विशेषणों का कोई अपना खास लिंग नहीं होता है। जिस समय ये विशेषण पुल्लिगी शब्द का गुण वर्णन करते हैं, उस समय ये पुल्लिगी शब्द के समान चलते हैं। तथा जिस समय ये नपुंसकलिंगी शब्द के गुणों का वर्णन करते हैं, उस समय ये ही नपुंसकलिंगी शब्दों के समान चलते हैं पुल्लिगी में शुचि शब्द के हरि शब्द के समान रूप होते हैं। तथा लघु शब्द के भानु शब्द के समान रूप होते हैं।

पाठ २० में शुचि शब्द का तथा इस पाठ में नपुंसकलिंगी लघु शब्द का चलाने का प्रकार बताया है।

लघु शब्द की तरह नपुंसकलिंगी, 'पृथु, गुरु, ऋजु' इत्यादि शब्दों के रूप बनते हैं। 'कति' शब्द तीनों लिंगों में एक जैसा ही चलता है तथा वह हमेशा बहुवचन में चलता है।

४	धात्रे, धातृणे	,,	धातृभ्यः
५	धातुः, धातृणः	,,	,,
६	,, ,,	धात्रोः, धातृणोः	धातृणाम्
७	धातरि, धातृणि	,, ,,	धातृषु

इस प्रकार 'कर्तृ, नेतृ, ज्ञातृ' इत्यादि ऋकारान्त नपुंसकलिंगी शब्दों के रूप होते हैं।

शब्द—पुंल्लिंगी

जलाशयः=तालाब। मत्स्यः=मछली। प्रत्युत्पन्नमतिः=स्थिति उत्पन्न होने पर समझने वाला। विधाता=करने वाला।

अनागत-विधाता=भविष्य को लक्ष्य में रखकर करने वाला। यद्भविष्यः=जो हो—दैववादी। मत्स्यजीविन्=धीवर।

नपुंसकलिंगी

प्रभात=सवेरा। अभीष्ट=इच्छित।

विशेषण

अन्वेषित=ढूंढा हुआ। अतिक्रान्त=गया हुआ।

क्रिया

प्रतिभाति=मालूम होता है। विहस्य=हँसकर।

(१८) यद्भविष्यो विनश्यति

(१) कस्मिंश्चित्[1] जलाशये, अनागतविधाता, प्रत्युत्पन्नमतिः, यद्भविष्यश्चेति[2] त्रयो[3] मत्स्याः सन्ति। (२) अथ कदाचित् तं

---

(१) किसी एक तालाब में अनागतविधाता, प्रत्युत्पन्नमति तथा यद्भविष्य इन नाम के तीन मत्स्य थे! (२) (आगच्छद्भि-

१ कस्मिन्+चित्। २ भविष्यः+च। ३ त्रयः+मत्स्याः।

जलाशयं दृष्ट्वा आगच्छद्भिः मत्स्यजीविभिः उक्तम् । (३) यद् अहो, बहुमत्स्योऽयं[4] ह्रदः ! कदाचित् अपि नाऽस्माभिरन्वेषितः[5][6] । तद् अद्य आहारवृत्तिः संजाता । सन्ध्यासमयश्च[7] संभूतः । ततः प्रभातेऽत्र[8] आगन्तव्यमिति निश्चयः । (४) अतस्तेषां[9], तद् बज्रपातोपमं वचः समाकर्ण्य अनागतविधाता सर्वान् मत्स्यान् आहूय इदं ऊचे--(५) अहो, श्रुतं भवद्भिर्यत्[10] मत्स्यजीविभिः अभिहितम् । तद् रात्रौ एव किञ्चित् गम्यतां समीपवर्त्ति सरः । (६) तत् नूनं प्रभातसमये मत्स्यजीविनोऽत्र समागत्य मत्स्यसंक्षयं करिष्यन्ति । (७) एतत् मम मनसि वर्तते । तत् न युक्तं सांप्रतं क्षणम् अपि अत्राऽवस्थातुम्[11] । (८) तद् आकर्ण्य प्रत्युत्पन्नमतिः प्राह-- अहो सत्यमभिहितं भवता । ममाऽपि[12] अभीष्टम् एतत् । तद्

मत्स्य-जीविभिःउक्तं) आने वाले धीवरों ने कहा । (३) (बहु-मत्स्यः अयं ह्रदः) यह तालाव बहुत मछलियों वाला है । (आहार-वृत्तिः संजाता)—भोजन का प्रबन्ध हो गया । (प्रभाते अत्र आग-न्तव्यम्) सवेरे यहाँ आना चाहिये । (४) (वज्रपातोपमं वचः) वज्र के आघात के समान भाषण । (५) (गम्यतां समीपवर्त्ति-सरः)—जाइये पास के तालाव के पास (८) (ममापि अभीष्ट-

---

४ मत्स्यः+अयं । ५ न+अस्माभिः । ६ अस्माभिः+अन्वेषितः । ७ समयः+च । ८ प्रभाते+अत्र । ९ अतः+तेषां । १० भवद्भिः+यत् । ११ अत्र+अवस्था० । १२ मम+अपि ।

अन्यत्र गम्यताम् । (९) अथ तत् समाकर्ण्य, प्रोच्चैः[१३] विहस्य यद्भविष्यः प्रोवाच (१०) अहो न भवद्भ्यां मन्त्रितं सम्यगेतत् । यतः किं तेषां वाङ्मात्रेणापि पितृपैतामहिकं सर एतत् त्यक्तुं युज्यते । (११) तद् यद् आयुःक्षयोऽस्ति[१४] तद् अन्यत्र गतानामपि मृत्युर्भविष्यति एव । तदहं न यास्यामि । भवद्भ्यां यत् प्रतिभाति तत् कार्यम् । (१२) अथ तस्य तं निश्चयं ज्ञात्वा अनागतविधाता, प्रत्युपन्नमतिश्च निष्क्रान्तौ सह परिजनेन । (१२) अथ प्रभाते तैर्मत्स्यजीविभिर्जालैस्तैः[१५][१६][१७] जलाशयम् आलोड्य यद्भविष्येण (१३) सह स जलाशयो निर्मत्स्यतां नीतः ।

समासः

१ जलाशयः—जलस्य आशयः=जलाशयः ।

२ मत्स्यजीविभिः—मत्स्यैः जीवन्ति इति मत्स्यजीविनः । तैः मत्स्यजीविभिः ।

मेतत्)—मुझे भी यही इष्ट है । (तत्समाकर्ण्य प्रोच्चैः विहस्य प्रोवाच)—वह सुनकर ऊँचा हँसकर बोला । (१०) (सम्यगेतत्) यही ठीक है । (किं तेषां वाङ्मात्रेणापि पितृपैतामहिकं सरः एतत् त्यक्तुं युज्यते) क्या उनके बड़बड़ाने से हमारे बापदादा के सम्बन्ध का यह तालाब छोड़ना अच्छा है । (११) (भवद्भ्यां च यत्प्रतिभाति तत्कार्यं) आप जैसा चाहते हैं वैसा कीजिये (१२) (सह परिजनेन) परिवार के साथ । (१३) (स जलाशयः निर्मत्स्यतां नीतः) वह तालाब मछलीहीन किया ।

१३ प्र + उच्चैः + विहस्य । १४ आयुः + अस्ति । १५ तैः + मत्स्य । [illegible] + जालैः । १७ जालैः + तैः ।

३ बहुमत्स्यः—बहवः मत्स्यः यस्मिन् सः=बहुमत्स्यः ।
४ समीपवर्त्ति—समीपं वर्त्तते इति समीपवर्त्ति ।
५ प्रत्युत्पन्नमतिः—प्रत्युत्पन्ना मतिः यस्य सः=प्रत्युत्पन्नमतिः
६—निर्मत्स्यता—निर्गताः मत्स्याः यस्मात् स=निर्मत्स्यः ।
निर्मत्स्यस्य भावः निर्मत्स्यता ।

पाठ बाईसवां

सकारान्त नपुंसकलिंगी 'धनुष्' शब्द

१, सं०, २	धनुः	धनुषी	धनूंषी
३	धनुषा	धनुर्भ्याम्	धनुर्भिः
४	धनुषे	,,	धनुर्भ्यः

आगे 'चन्द्रमस्' शब्द के समान इसके रूप होते हैं । इसी प्रकार 'चक्षुस्, हविस्' इत्यादि शब्दों के रूप बनाने चाहियें ।

नकारान्त नपुंसकलिंगी 'नामन्' शब्द

१, सं०, २	नाम	नाम्नी, नामनी	नामानी
३	नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः
४	नाम्ने	,,	नामभ्यः
५	नाम्नः	,,	,,
६	नाम्नः	नामनोः,	नाम्नाम्
७	नाम्नि, नामनि	नाम्नोः,	नामसु

इसी प्रकार 'लोमन्, सामन्, व्योमन्, प्रेमन्' इत्यादि चलते हैं ।

नकारान्त नपुंसकलिंगी 'अहन्' शब्द

१, सं०, २	अहः	अहनी	अहानी
३	अहना	अहोभ्याम्	अहोभिः
४	अहने	,,	अहोभ्यः
५	अहनः	,,	,,
६	,,	अहनोः	अहनाम्
७	अहनि	,,	अहस्सु

तकारान्त नपुंसकलिंगी 'जगत्' शब्द

१, सं०, २	जगत्	जगती	जगन्ति
३	जगता	जगद्भ्याम्	जगद्भिः

इसी प्रकार बृहत्, पृषत् इत्यादि शब्द चलते हैं।

इकारान्त नपुंसकलिंगी 'अक्षि' शब्द

१	अक्षि	अक्षिणी	अक्षीणि
सं०	,, अक्षे	,,	,,
२	,,	,,	,,
३	अक्ष्णा	अक्षिभ्याम्	अक्षिभिः
४	अक्ष्णे	,,	अक्षिभ्यः
५	अक्ष्णः	,,	,,
६	,,	अक्ष्णोः	अक्ष्णाम्
७	अक्ष्णि, अक्षणि	,,	अक्षिषु

इसी प्रकार 'अस्थि, सक्थि' आदि शब्दों के रूप होते हैं।

२	अस्थि	अस्थिनी	अस्थीनि
	अस्थ्ना	अस्थिभ्याम्	अस्थिभिः

४	अस्थ्ने	अस्थिभ्याम्	अस्थिभ्यः
५	अस्थ्नः	"	"
६	"	अस्थ्नोः	अस्थ्नाम्
७	अस्थिनि, अस्थनि	"	अस्थिषु

सकारान्त नपुंसक लिंगी 'आयुस्' शब्दः

१	आयुः	आयुषी	आयूंषि
सं०	"	"	"
२	"	"	"
३	आयुषा	आयुर्भ्याम्	आयुर्भिः
४	आयुषे	"	आयुर्भ्यः
५	आयुषः	"	"
६	"	आयुषोः	आयुषाम्
७	आयुषि	"	आयुष्षु

इसी प्रकार 'अर्चिस्' शब्द के रूप होते हैं। पाठकों को चाहिये कि वे इनके साथ पुलिंगी शब्दों के रूपों की तुलना करें, और परस्पर विशेष बातों का ध्यान रखें।

शब्द—क्रियाएँ

क्रीत्वा—खरीद के। उपदेक्ष्यामि—उपदेश करूंगी। निष्पाद्य—तैयार करके। प्राभातिकं—सवेरे सम्बन्धी। अवज्ञातुम्—धिक्कार करने के लिए। अर्हसि—(तू) योग्य है। प्रयतिष्ये—प्रयत्न करूंगा। श्रामयामि—कष्ट दूंगी (गा)। विलोक्यताम्—देखिये। निविश्यताम्—घुस जाइये। निषेधति—प्रतिबन्ध करता है। अर्जयति—कमाता है। विलोक्य—देखकर। प्रतिपद्यते—मानती है। उत्सहे—मुझे उत्साह होता है। हीयते—न्यून होता है। निर्मातुम्—उत्पन्न करने के लिये। प्रभवेत्—समर्थ हो।

बाँटकर । अंगीकृत्य—स्वीकार करके। विस्मापयन्ति—आश्चर्य युक्त करते हैं ।

शब्द—पुंल्लिंगी

शिल्पी—कारीगर । श्रमः—कष्ट, मेहनत । पाणिः—हाथ। विभागः—हिस्सा, बाँट । पादः—पांव । सर्वात्मना—तन-मन से। विपश्चित्—विद्वान् ।

स्त्रीलिंगी

दृष्टि—नज़र। यात्रा—गमन। चिन्ता—फिक्र । गृहिणी—गृहपत्नी। संसारयात्रा—दुनिया का जीवन-व्यवहार । श्रुति—श्रवण, सुनना ।

नपुंसकलिंगी

तल—ऊपरला हिस्सा । मूल—जड़ । प्रभात—सवेरा । वस्तुजात—वस्तुओं का समूह । आत्मबल—अपनी शक्ति। निदर्शन—उदाहरण। बीज—बीज। शिरः—शिर । साहाय्य—मदद । लोकाराधन—लोकसेवा । उदर—पेट । नैपुण्य—निपुणता ।

विशेषण

प्राभातिक—सवेरे का । सुगम—आसान । साध्य—सिद्ध करने योग्य । आकुल—कष्टमय। सुजात—अच्छा पैदा हुआ। निवृत्त—हो गया । सुसंस्कृत—उत्तम बनाया हुआ। सम्यक्—ठीक । आत्मशक्त्यतिग—अपनी शक्ति से बाहर के। अद्भुत—आश्चर्यजनक । बहुमत—बहुतों का मान्य। इयत्—इतना । विभक्त—बांटा हुआ। सुसह—सहने योग्य। प्रीत—संतुष्ट।

(१६) श्रम-विभाग

(१) **रुक्मिणी**—सखि कमले ! श्वः प्रभाते मे बहु करणीयम् । तत् कथं निवर्तये इति चिन्ताकुलं मे मनः ।

(२) **कमला**—काऽत्र चिन्ता । अहं तव साहाय्यं करिष्यामि, नर्मदामपि तत्कर्तुमुपदेक्ष्यामि[1] । इत्यावयोः[2] साहाय्येन सुलभा कार्यसिद्धिः ।

(३) **रुक्मिणी**—अपि नर्मदा प्रतिपद्यते तत्कर्तुम् । यावत्ता[3]मेव पृच्छामि—अयि नर्मदे, प्रभाते मम बहु करणीयम्, कच्चिदल्प[4] साहाय्यं करिष्यसि ।

(४) **नर्मदा**—ततः को मे लाभः ? तन्न कर्तुमुत्सहे[5] ! पुनर्ममापि प्राभातिकम् अस्त्येव[6] । तत् का करिष्यति ?

(५) **कमला**—सखि नर्मदे ! मैवं[7] रुक्मिणी वचः अवज्ञातुम् अर्हसि । अन्योऽन्यसाहाय्यं मनुष्यधर्मः । तत् साहाय्यं कुर्वत्याः तव

---

(१) (मे वहु करणीयं)—मुझे वहुत कार्य है । (कथं निवर्तये) कैसा किया जाय । (२) (कात्र चिंता)—कौन-सी यहाँ चिन्ता । (इत्यावयोः साहाय्येन सुलभा कार्यसिद्धिः)—इस प्रकार हम दोनों के सहाय्य से कार्य की सिद्धि सुगम होगी । (३) (अपि नर्मदा प्रतिपद्यते) क्या नर्मदा मानेगी । (कच्चिदल्प) कुछ थोड़ा । (४) (तन्न कर्तुमुत्सहे) वह करने के लिये (मैं) उत्साहित नहीं हूँ । (प्राभातिक) सवेरे का कार्य । (५) (अवज्ञातुं-अर्हसि) अपमान करने के ...

---

१ कर्तुं+उपदे० । इति+आवयोः । ३ यावत्+ताम्+एव । ४ कच्चिद्+अल्पं । ५ कर्तुं+उत्सहे । ६ अस्ति+एव । ७ मा+।

किं हीयते। तव गृहकृत्यं च अल्पम्। ततः पश्चादपि एकाकिन्या सुकरम्। तत्रापि चेद् अन्यापेक्षा अहं साहाय्यं करिष्यामि।

(६) नर्मदा—न श्रामयामि त्वाम्। अहम् एव एकाकिनी तल्लघु-लघु समाप्य विश्रांतिसुखं कथं न अनुभवेयम्।

(७) कमला—सुखं निर्विश्यतां विश्रांतिसुखम्। तथा कर्तुं का निषेधति। परं एतावदेव[८] पृच्छामि तव गृहकृत्यं त्वं एकाकिनी लघुतरं करिष्यसे किम्!

(८) नर्मदा—असंशयं त्वद्द्वितीया[९] एव।

(९) कमला—तर्हि, साहाय्यं किमिति नानुमन्यसे[१०]?

(१०) नर्मदा—स्वावलम्वम् एव अहं वहु मन्ये, न परसाहाय्यम् आत्मवलेनैव[११] सर्वाः क्रिया निर्वर्तयामि।

(११) रुक्मिणी—आर्ये नर्मदे! स्वावलंवः ममापि[१२] वहुमतः।

योग्य हो। (अन्योन्य-साहाय्यं) परस्पर मदद करनी। (साहाय्यं कुर्वत्यास्तव किं हीयते) मदद करने से तुम्हारी क्या हानि है। (एकाकिन्या सुकरं) अकेली से भी किया जा सकता है। (चेद् अन्यापेक्षा) अगर दूसरे की जरूरत है। (६) (न श्रामयामि त्वां) तुमको कष्ट नहीं दूँगी। (तल्लघु-लघु समाप्य) वह जल्दी-जल्दी समाप्त करके। (७) (सुखं निर्विश्यतां विश्रांति-सुखं) आराम से लीजिये विश्राम का आनन्द। (लघुतरं करिष्यसे) अधिक जल्दी करेगी। (८) (असंशयं त्वद्द्वितीया एव) निस्संशय अकेली ही। (९) (किमिति नानुमन्यसे) क्यों नहीं मानती। (११) (सकलं

८ एतावत्+एव। ९ तु+अद्वितीया। १० न+अनु। ११ बलेन+ [illegible]
१२ मम+अपि।

किंतु आत्मबलातिगे कार्ये परसाहाय्यप्रार्थनम् आवश्यकं भवति । नहि एकपुरुष-साध्याः सकलाः क्रियाः । कोऽपि[13] गृहवस्त्रादिकं स्वयमेको[14] निर्मातुं न प्रभवेत् । किमुत च तत्तत् शिल्पिसंघनिर्मितम् एवसुभगम् ! अतः विपश्चिताः परस्परं श्रमान् विभज्य एकैकमेव विपयम् अंगीकृत्य, तं सर्वात्मना परिशीलयन्ति । तस्मिन् नैपुण्यं उपगताः च, लोकाऽराधनाय प्रवर्तन्ते । एवं श्रमविभागेन संसार-यात्रा सुखकरी भवति ।

(१२) कमला—परिचिन्त्यतां परराष्ट्राणां उद्योगपद्धतिः । आफलोदयकर्माण उद्यमशीला यूरोपीयाः निजाद्भुतकृत्यैः लोकान् विस्मापयन्ति । सुसंस्कृतं सुजातं च वस्तुजातं निर्मितता तेषाम् श्रमविभाग[15] एव बीजम् ।

वस्तुजातं स्वावलंबनम्)—अपने ऊपर ही निर्भर रहना—मुझे बहुत पसन्द है। (एक पुरुषसाध्याः सकलाः क्रियाः)—एक मनुष्य से सिद्ध होने वाले सब कार्य । (निर्मातुं न प्रभवेत्)—उत्पन्न करने के लिये समर्थ नहीं होगा । (अतः विपश्चिताः—परिशोलयन्ति)—इसलिये विद्वान् परस्पर में श्रमों को बांटकर एक-एक बात को ही अपनी-सी करके उसी को सब तन-मन से विचारते हैं। (तस्मिन्—सुखकरी भवति)—उसी में प्रवीणता संपादन करके लोक-सेवा के लिये प्रवृत्त होते हैं। इस प्रकार श्रम-विभाग से संसार-यात्रा सुखमय होती है। (पर-राष्ट्राणां) दूसरे देशों की। (१२) (आ-फलोदयकर्माणः) फल प्राप्त होने तक काम करने वाले। (निजाद्भुतकृत्यैर्लोकान् विस्मापयन्ति)—अपने अद्भुत

---

१३ कः+अपि । १४ स्वयं+एकः । १५ विभागः+एव ।

(१३) रुक्मिणी—पाणितलस्थे निदर्शने, कुत इयद्दू
अस्माकं गृहव्यवस्था एव सूक्ष्मदृष्ट्या विलोक्यताम् । गृहपतिः स
रम्भमूलं धनम् अर्जयति । तेन च धान्यादि वस्तुजातं क्रीत्वा गृ
समर्पयति । सा तत्साधु व्यवस्थाप्य, पाकादि च निष्पाद्य
कुटुम्बं सुखयति । सोऽयं जीवनक्रमः श्रमविभागेन एव सुख
भवति नान्यथा । विभक्तः खलु श्रमोऽतीव सुसहो भूत्वा,
फलोदयाय कल्पते ।

(१४) नर्मदा—स्फुटतरं अज्ञासिषं श्रमविभागतत्वम् । युव
विवृतं च तत्, सम्यक् प्रविष्टं मे हृदयम् । अधुना शि
धारयामि युवयोः वचः । यावच्छक्यं, तव अर्थसाधने प्रयतिष्ये ।

(१५) रुक्मिणी—प्रीतास्मि युवयोः परमादरेण ।

कामों से दूसरों को आश्चर्य युक्त करते हैं । (१३) (पाणित
निदर्शने कुत इयद्दूरम्)—हाथ के तले पर का पदार्थ देख
लिये इतना दूर क्यों (जाना है) । (सकलारम्भमूलं)
कार्यों के प्रारम्भ में उपयोगी—जिससे सकल कार्य बन, सकते
(पाकादि निष्पाद्य) अन्न पकाकर । (विभक्तः श्रमः सुसहोभव
बांटा हुआ श्रम सहा जा सकता है । (महते फलो
कल्पते)—महान् फल प्राप्ति के लिये होता है । (१४) (स्फु
अज्ञासिषं) अधिक स्पष्टता से जान लिया । (युवाभ्यां विवृ
तुम दोनों से समझाया हुआ । (शिरसा धारयामि युवयोः
सिर से धरती हूँ तुम दोनों का भाषण । (तव अर्थ साधने प्रय
तुम्हारा कार्य सिद्ध करने में प्रयत्न करूंगी । (१५) (प्रीत
युवयोः परमादरेण) खुश हो गई हूँ तुम दोनों के बड़े आदर से

समासाः

(१) चिन्ताकुलं—चिन्तया आकुलं=चिन्ताकुलम् ।
(२) कार्यसिद्धिः—कार्यस्य सिद्धिः=कार्यसिद्धिः ।
(३) रुक्मिणीवचः—रुक्मिण्याः वचः=रुक्मिणीवचः ।
(४) अन्यापेक्षा—अन्यस्य अपेक्षा=अन्यापेक्षा ।
(५) लघुतरम्—अतिशयेन् लघु=लघुतरम् ।
(६) आत्मबलातिगे—आत्मनः बलम्=आत्मबलम् । आत्मबलम् अतिक्रम्य गच्छति तत्=आत्मबलातिगम् ।
(७) शिल्पिसंघनिर्मितं—शिल्पिनाम् संघः=शिल्पिसंघ । शिल्पिसंघेन निर्मितं=शिल्पिसंघनिर्मितम् ।
(८) आफलोदयकर्माणः=फलस्य उदयः=फलोदयः । फलोदयपर्यन्त कर्म कुर्वन्ति इति=आफलोदय-कर्माणः ।
(९) पाणितलस्थः—पाणेः तलः=पाणितलः । पाणितले तिष्ठ-तीति=पाणितलस्थः ।
(१०) सूक्ष्मदृष्टिः—सूक्ष्मा चासौ दृष्टिश्च=सूक्ष्मदृष्टिः ।

पाठ तेईसवां

सर्वनामों के नपुंसकलिंग में कैसे रूप होते हैं, इसका ज्ञान इस पाठ में देना है । सर्वनामों के तृतीया से सप्तमी पर्यन्त विभक्तियों के रूप पूर्वोक्त पुल्लिगी सर्वनामों के समान ही होते हैं । केवल प्रथमा, द्वितीया के रूपों की विशेषता ही पाठकों को ध्यान में रखनी होगी ।

'सर्व' शब्द (नपुंसकलिंग)

१	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
सं०	सर्व	"	"
२	सर्वम्	"	"

शेष रूप 'सर्व' शब्द के पुल्लिंगी रूपों के समान ही होते हैं। इसी प्रकार 'विश्व, एक, उभ, उभय' इनके रूप होते हैं। 'उभ' शब्द द्विवचन में ही चलता है तथा 'उभय' के लिये द्विवचन नहीं है। यह विशेष ध्यान में रखना चाहिए।

इसी प्रकार 'पूर्व, पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर, स्व, अन्तर, नेम' इत्यादि शब्द चलते हैं। 'स्व' 'अन्तर' के विषय में जो कुछ पूर्व लिखा है, वह ध्यान में रखना चाहिये।

'प्रथम' शब्द 'ज्ञान' शब्द के समान ही नपुंसक में चलता है। इसी प्रकार 'चरम, द्वितीय, त्रितय, चतुष्टय, पञ्चतय, अल्प, अर्ध, कतिपय' इत्यादि शब्द चलते हैं।

'द्वितीय, तृतीय' भी सर्वनाम 'सर्व' शब्द के समान ही नपुंसकलिंग में चलते हैं।

'यत्' शब्द (नपुंसकलिंग)

१	यत्	ये	यानि
२	"	"	"

शेष रूप पुल्लिंगी 'यद्' शब्द के समान होते हैं।

इसी प्रकार 'अन्य, अन्यतर, इतर, कतर, कतम, त्व' इत्यादि सर्वनामों के नपुंसकलिंग में रूप होते हैं। 'अन्यतम्' शब्द नपुंसक-लिंग में 'ज्ञान' के समान चलता है।

'पञ्चन्, षट्' सप्तन्, दशन्' इनके रूप पुल्लिग के समान ही नपुंसकलिंग में भी होतें हैं। केवल 'अष्ट' शब्द के नपुंसकलिंग में पुल्लिग से भिन्न रूप होते हैं।

१	अष्ट	४-५	अष्टभ्यः
२	अष्ट	६	अष्टानाम्
३	अष्टभिः	७	अष्टसु

'शत, सहस्र, आयुत, लक्ष, प्रयुत' ये नपुंसकलिंग में 'ज्ञान' शब्द के समान चलते हैं।

शब्द—पुल्लिगी

सन्धिः—सुलह, मैत्री। यशस्विन्—यशवाला, कीर्त्तिमान्। व्याघ्र—शेर। पुरुषव्याघ्रः—पुरुषों में श्रेष्ठ। पित्र्यंशः—पैतृक (धन) का हिस्सा। विग्रहः—युद्ध। भरतर्षभः—भरत (वंश में) श्रेष्ठ। पुरोचनः—एक पुरुष का नाम। वज्रभृतः—वज्र उठाने वाला अर्थात् इन्द्र।

नपुंसकलिंगी

पैतृक—पिता सम्बन्धी। किल्विष—पाप। अफल—निष्फल। क्षेम—कल्याण।

क्रिया

रोचते—पसन्द है। क्रियते—किया जाता है। प्रदीयताम्—दीजिये। ध्रियन्ते—धारण किये जाते हैं। आतिष्ठ—रहो।

विशेषण

मधुर—मीठा। निरस्त—अलग किया। सम्मन्तव्यम्—सम्मान योग्य। तुल्य—समान।

अन्य

विशेषतः—खासकर। असंशयम्—निःसंशय। कथंचन—किसी प्रकार। दिष्ट्या—सुदैव से।

(२०) भीष्मो धृतराष्ट्रादीन् सन्धिमुपदिशति

न रोचते विग्रहो मे पाण्डुपुत्रैः कथंचन।
यथैव[1] धृतराष्ट्रो मे तथा पांडुरसंशयम्[2] ॥१॥
गान्धार्याश्च[3] यथा पुत्रास्तथा[4] कुन्तीसुता मम।
यथा च मम ते रक्ष्या धृतराष्ट्र तथा तव ॥२॥
दुर्योधन, यथा राज्यं त्वमिदं[5] तात् पश्यसि।
मम पैतृकमित्येवं[6] तेऽपि पश्यन्ति पांडवाः ॥३॥

---

(२०) भीष्मपितामह धृतराष्ट्रादिकों को सुलह का उपदेश करता है

(पाण्डु-पुत्रैःसह) पाण्डवों के साथ। (विग्रहः) युद्ध, झगड़ा। (कथंचन) किसी प्रकार भी। (मे न रोचते) मुझे पसन्द नहीं। (यथा एव मे धृतराष्ट्रः) जैसा मेरे लिये धृतराष्ट्र है। (तथा असंशयं पाण्डुः) वैसा ही निश्चय से पाण्डु है ॥१॥

(यथा च गांधार्याः पुत्रा) और जैसे गांधारी के पुत्र। (तथा मम कुन्ती-सुताः) वैसे ही मेरे लिये कुन्ती के लड़के हैं। (यथा च मम ते रक्ष्याः) और, जैसे मुझे वे रक्षणीय हैं। (धृतराष्ट्र, तथा तव) हे धृतराष्ट्र! वैसे ही तुम्हारे हैं ॥२॥

(दुर्योधन) हे दुर्योधन! (हे तात) हे प्रिय (यथा त्वं इदं राज्यं) जैसा तुम यह राज्य (मम पैतृकं इति) मेरे पिता

---

१ यथा+एव। २ पाण्डुः+असं०। ३ गांधार्याः+च। ४ ...। ५ त्वं+इदं। ६ पैतृकं+इति एवं।

यदि राज्यं न ते प्राप्तम् पांडवेया यशस्विनः ।

कुतः तव तवापीदं भारतस्यापि कस्यचित् ॥४॥

अधर्मेण च राज्यं त्वं प्राप्तवान् भरतर्षभ ।

तेऽपि राज्यमनुप्राप्ताः पूर्वमेवेति मे मतिः ॥५॥

मधुरेणैव राज्यस्य तेषामर्धं प्रदीयताम् ।

एतद्धि पुरुषव्याघ्र, हितं सर्वजनस्य च ॥६॥

ऐसा, (पश्यसि) देखते हो (एवं ते पाण्डवाः अपि) इस प्रकार वे पांडव भी देखते हैं ॥३॥

(ते यशस्विनः पांडवेयाः) वे कीर्त्तिमान् पांडव (यदि राज्यं न प्राप्तं) अगर राज्य को प्राप्त न हुए (कुत तव अपि इदं एव) तुमको भी यह कैसे प्राप्त होगा (भारतस्य अपि कस्यचित्) किसी भारत के लिये भी कैसे मिलेगा ॥४॥

(भरतर्षभ) हे भरत-श्रेष्ठ ! (त्वं अधर्मेण राज्यं प्राप्तवान्) तुम अधर्म से राज्य को प्राप्त हो गये हो । (ते अपि पूर्व एव) वे भी पहिले ही (राज्यमनुप्राप्ताः) राज्य को प्राप्त हुए (इति मे मतिः) ऐसा मेरा मत है ॥५॥

(मधुरेण एव) मीठेपन से ही (राज्यस्य अर्ध) राज्य का आधा भाग (तेषां प्रदीयतां) उनको दीजिये । (पुरुषव्याघ्र) हे पुरुष-श्रेष्ठ ! (हि एतत् सर्व जनस्य हितं) कारण कि यही सब लोगों का हितकारी है ॥६॥

---

७ तव + अपि + इदम् । ८ ते + अपि । ९ पूर्वं + एव + इति ।
१० मधुरेण + एव ।

अतोऽन्यथा चेत् क्रियते, न हितं नो भविष्यति ।

तवाप्यकीर्तिः[11] सकला भविष्यति न संशयः ॥७॥

कीर्तिरक्षणमातिष्ठ कीर्त्तिर्हि परमं बलम् ।

नष्टकीर्त्तेर्मनुष्यस्य[12] जीवितं ह्यफलं[13] स्मृतम् ॥८॥

दिष्ट्या ध्रियन्ते पार्था[14] हि, दिष्ट्या जीवति सा पृथा ।

दिष्ट्या पुरोचनः पापो, न सकामोऽत्ययं[15] गतः ॥९॥

(चेत अन्यथा क्रियते) अगर इससे भिन्न किया जाय (नः हितं न भविष्यति) हमारा हित नहीं होगा । (तव अपि सकला अकीर्त्तिः) तेरी भी दुष्कीर्ति (भविश्यति न संशयः) होगी इसमें कोई संदेह नहीं ॥७॥

(कीर्ति रक्षणं आतिष्ठ) कीर्ति की रक्षा करो । (कीर्त्तिः हि परमं वलं) कारण कि कीर्ति ही बड़ा बल है । (हि नष्टकीर्त्तेः मनुष्यस्य) कारण कि जिसकी कीर्ति नाश हुई है, ऐसे मनुष्य का (जीवितं अफलं स्मृतम्) जीवन निष्फल है, ऐसा कहते हैं ॥८॥

(दिष्ट्या हि पार्था ध्रियन्ते) सुदैव से पांडव जिंदा रहे हैं (सा पृथा दिष्टया जीवति) वह कुन्ती सुदैव से जिंदा है । (पापः पुरोचनः) पापी पुरोचन राजा (दिष्ट्या स कामः) सुदैव से कृत-कार्य होकर (अत्ययं न गतः) सिद्धि को प्राप्त न हुआ ॥९॥

---

११ तव+अपि+अकीर्त्तिः । १२ कीर्त्तेः+मनुष्य० । १३
१४ पार्थाः+हि । १५ सकामः+अत्ययं ।

न मन्येत तथा लोको दोषेणात्र[१६] पुरोचनम् ।
यथा त्वां पुरुषव्याघ्र लोको दोषेण गच्छति ॥१०॥
तदिदं जीवितं तेषां तव किल्विषनाशनम् ।
समन्तव्यं महाराज पांडवानां सुदर्शनम् ॥११॥
न चापि तेषां वीराणां जीवतां, कुरुनन्दन ।
पित्र्यंशः शक्य आदातुमपि वज्रभृता स्वयम् ॥१२॥
ते सर्वेऽवस्थिता धर्मे, सर्वे चैवैकचेतसः ।
अधर्मेण निरस्ताश्च तुल्ये राज्ये विशेषतः ॥१३॥

(लोकः अत्र तथा) जब यहां वैसा (पुरोचनं दोषेण न मन्येत) पुरोचन को दोष से (युक्त) नहीं मानते (पुरुषव्याघ्र ! यथा त्वां) हे मनुष्य-श्रेष्ठ ! जिस प्रकार तुमको (लोकः दोषेण गच्छति) लोक दोष से (युक्त) समझते हैं ॥१०॥

(तत् इदं तेषां जीवितं) वह यह उनका जीवन है । (तव किल्विषनाशनं) तुम्हारे पाप का नाशक है । इसलिये (महाराज) हे महाराज ! (पाण्डवानां सुदर्शनं समन्तव्यं) पाण्डवों का उत्तर दर्शन मानिये ॥११॥

(कुरुनन्दन) हे कुरुपुत्र ! तेषां वीराणां जीवतां) उन वीरों की जिन्दगी तक (स्वयं वज्रभृता अपि) स्वयं इन्द्र ने भी (पित्र्यंशः आदातुं अपि च न शक्यः) पैतृक धन लेना भी शक्य नहीं ॥१२॥

(ते सर्वे धर्मे अवस्थिताः) वे सब धर्म में ठहरे हैं । (सर्वे च एकचेतसः) और सब एक दिल वाले हैं । (विशेषतः तुल्ये राज्ये) विशेष कर समान राज्य में (अधर्मेण निरस्ताः च) अधर्म से [illegible] हैं ॥१३॥

---

१६ [illegible]

यदि धर्मस्त्वया कार्यो यदि कार्यं प्रियं च मे ।

क्षेमं च यदि कर्त्तव्यं तेषामर्धं प्रदीयताम् ॥१४॥ महाभारतम्

पाठकों को उचित है कि वे श्लोकों में शब्दों का क्रम तथा अर्थ में अन्वय के शब्दों का क्रम देख लें और अन्वय बनाना सीखें। बोलने के समय जैसी शब्दों की पूर्वापर रचना होती है, उस प्रकार शब्दों की रचना को अन्वय कहते हैं। श्लोकों में छन्द के अनुसार इधर-उधर शब्द रखे जाते हैं।

पाठ चौबीसवां

शब्द—पुंल्लिंगी

आश्रयः=निवास, आधार। बकः=बगला, सारस। कुलीरः=केंकड़ा। प्रदेशः=स्थान। शोषः=खुश्की। जलचरः=पानी में चलने वाला प्राणी। वत्सः=पुत्र। वियोगः=अलग होना। क्षुत्क्षामः=भूख से थका हुआ। दैवज्ञः=ज्योतिषी। क्रमः=क्रम, सिलसिला। तातः=पिता। मातुलः=मामा। मिथ्यावादिन्=झूठ बोलने वाला। अभिप्रायः=मतलब। पर्वतः=पहाड़। मन्दधीः=मन्दबुद्धि।

स्त्रीलिंगी

वृद्धिः=बधाई। क्षुधा=भूख। इच्छा=चाहना। स्वेच्छा=अपनी इच्छा। ग्रीवा=गर्दन। वृष्टिः=वर्षा। अनावृष्टिः=अवर्षण,

---

(यदि त्वया धर्मः कार्यः) अगर तूने धर्म करना है। (यदि मे प्रियं च कार्यं) अगर मेरे लिये प्रिय करना है। (च यदि क्षेमं कर्त्तव्यम्) और अगर कल्याण करना है। (तेषां अर्धं प्रदीयताम्) उनको आधा भाग दीजिये ॥१४॥

वर्षा न होना। शिला=पत्थर। आहारवृत्तिः=भोजन का गुजर।

नपुंसकलिंगी

प्रायोपवेशनं=उपोषण (करके मरने का निश्चय करना।) पृष्ठः=पीठ। व्यञ्जन=चटनी। तोय=जल। त्राण=रक्षा। पादत्राण=जूता। प्राणत्राण=प्राणों की रक्षा। अस्थिन्=हड्डी।

विशेषण

समेत=युक्त। क्रीडित=खेला। त्रस्त=दुःखी। कुपित=गुस्से हुआ-हुआ। लग्न=लगा हुआ। उपलक्षित=देखा। द्वादश=बारह। निर्विण्ण=दुःखी।

क्रिया

समेत्य=आकर। ऊचे=बोला। संपद्यते=बनाता है। रुरोद=रोया। आससाद=प्राप्त हुआ। वञ्चयित्वा=फँसाकर। चिरयति=देरी करता है। प्रक्षिप्य=फेंककर। व्यापादयितुम्=मारने के लिये। अनुष्ठीयते=की जाती है। यास्यन्ति=जाएंगे, प्राप्त होंगे। अनुष्ठीय=करके। आरोप्य=चढ़ाकर। समासाद्य=प्राप्त करके। प्रक्षिप्य=फेंककर।

अन्य

नाना=अनेक। सादरम्=आदर के साथ। जातु=किसी समय, कदाचित्। अलम्=पर्याप्त, काफी।

(२१) वक-कुलीरकयोः कथा

(१) अस्ति कस्मिंश्चित् प्रदेशे नानाजलचरसनाथं सरः। तत्र च कृताश्रयः एकः वकः वृद्धभावम् उपागतः, मत्स्यान्

---

(१) (नाना-जलचर-सनाथं) बहुत प्राणी जिसमें हैं ऐसा। (तत्र कृताश्रयः) वहां रहने वाला। (क्षुत्क्षामकंठः⋯रुरोद) जिसका गला थका हुआ है, ऐसा तालाब के किनारे

व्यापादयितुम् असमर्थः। ततश्च क्षुत्क्षामकंठः, सरस्तीरे उपविष्टो रुरोद। एकः कुलीरको नानाजलचरसमेतः समेत्य, तस्य दुःखेन दुःखितः सादरम् इदं ऊचे (२) किमद्य त्वया आहार-वृत्तिर्न अनुष्ठीयते? स बक आह—वत्स, सत्यम् उपलक्षितं भवता। मया हि मत्स्यादनं प्रति परमवैराग्यतया, सांप्रतं प्रायोपवेशनं कृतम्। तेन अहं समीपागतानपि मत्स्यान् न भक्षयामि। (३) कुलीरकस्तच्छ्रुत्वा[1] प्राह—किं तद् वैराग्य-कारणम्। स प्राह—अहम् अस्मिन् सरसि जातो वृद्धिं गतश्च। तन्मया एतच्छ्रुतं[2] यद् द्वादशवार्षिकी अनावृष्टिः लग्ना संपद्यते। (४) कुलीरक आह—कस्मात् तच्छ्रुतम्। बक आह—दैवज्ञ मुखात्। वत्स, पश्य—एतत् सरः स्वल्पतोयं वर्त्तते। शीघ्र शोषं यास्यति। अस्मिन् शुष्के यैः सह अहं वृद्धिं गतः सदैव

पर बैठकर रोने लगा। (नानाजलचरसमेतः) बहुत जल में विचरने वाले प्राणियों के साथ। (२) (सत्यमुपलक्षितं भवता) ठीक आपने देखा। (मया हि......न भक्षयामि) मैंने तो मत्स्यभक्षण के विषय में उपवेशन व्रत किया है, उससे मैं पास आने वाली मछलियों को भी नहीं खाता। (३) (जातावृद्धिंगतश्च) उत्पन्न होकर बड़ा हो गया। (तन्मया......लग्ना) तो मैंने यह सुना है कि बारह साल की अनावृष्टि लगी है। (४) (शीघ्रं शोषं यास्यति) शीघ्र ही शुष्क होगा। (अस्मिन्......नाशं यास्यन्ति) यह शुष्क होने पर जिनके साथ मैं बड़ा हुआ और हमेशा खेला ये सब जल के अभाव से नाश को प्राप्त

---

१ कुलीरकः+तत्+श्रुत्वा। २ एतत्+श्रुतं।

क्रीडितश्च, ते सर्वे तोयाभावात् नाशं यास्यन्ति । तत् तेषां वियोगं द्रष्टुम् अहम् असमर्थः, तेन—एतत् प्रयोपवेशनं कृतम् । (५) ततः स कुलीरकस्तदाकर्ण्य, अन्येषामपि जलचराणां तत्तस्य वचनं निवेदयामास । अथ ते सर्वे भयत्रस्तमनसस्तम्[3] अभ्युपेत्य पप्रच्छुः—तात, अस्ति कश्चिदुपायः, येन अस्माकं रक्षा भवति ? (६) बक आह—अस्ति अस्य जलाशयस्य नातिदूरे प्रभूतजलसनाथं सरः । तद्, यदि मम पृष्ठं कश्चिदारोहति, तम् अहं तत्र नयामि । (७) अथ ते तत्र विश्वासमापन्नास्तात[4], मातुल इति ब्रुवाणा अहं[5] पूर्वम्, अहं पूर्वम् इति समन्तात् परितस्थुः । (८) सोऽपि दुष्टाशयः, क्रमेण, तान् पृष्ठम् आरोप्य जलाशयस्य नातिदूरे, शिलां समासाद्य तस्याम् आक्षिप्य स्वेच्छया तान् भक्षयित्वा स्वकीयां नित्याम् आहार-

---

(५) (ततः स······निवेदयामास)—पश्चात् उस केंकड़े ने यह सुनकर अन्य जल-निवासियों को भी उसका भाषण निवेदन किया । (अथ···पप्रच्छुः) अनन्तर वे सब भय से डरे हुए मन वाले उसके पास जाकर पूछने लगे । (६) (अस्ति अस्य······ नयामि)—इस तालाब के पास ही बहुत जल से युक्त एक तालाब है । अगर कोई मेरी पीठ पर बैठेगा तो मैं उसको वहाँ ले जाऊँगा । (७) (अथ ते······परितस्थुः)—पश्चाद् वे वहाँ विश्वास करने वाले पिता, मामा ऐसा बोलने वाले, मैं पहिले, मैं पहले, ऐसा कहते हुए उसके इधर-उधर ठहरे । (८) (शिलां·········· अकरोत्)—पत्थर प्राप्त करके, उसके ऊपर फेंककर अपनी इच्छा के अनुसार उनको भक्षण करके अपना नित्य का भोजन का कार्य

---

३ मनसः+तं । ४ मापन्नाः+तात । ५ ब्रुवाणाः+अहं ।

वृत्तिमकरोत्[6] । (९) अन्यस्मिन् दिने तं कुलीरकं आह—तात ! मया सह ते प्रथमः स्नेहः संजातः। तत् किं मां परित्यज्य अन्यान् नयसि। तस्माद् अद्य मे प्राणत्राणं कुरु, (१०) तदाकर्ण्य सोऽपि दुष्टश्चिन्तितवान्[7] । निर्विण्णोऽहं[8] मत्स्यमांसभक्षणेन । तदद्य एनं कुलीरकं व्यञ्जनस्थाने करोमि—(११) इति विचिन्त्य, तं पृष्ठमारोप्य[9], तां बध्यशिलाम् उद्दिश्य प्रस्थितः। कुलीरकोऽपि[10] दूरादेव[11] अस्थिपर्वतं अवलोक्य मत्स्यास्थीनि परिज्ञाय तम् अप्रच्छत्—तात ! कियद्दूरे तत् जलाशयः (१२) सोऽपि मन्दधीः, जलचरोऽयम्[12] इति मत्वा, स्थले न प्रभवति इति, सस्मितम् इदं आह—कुलीरक ! कुतोन्यो[13] जलाशयः

करता था। (९) (मां परित्यज्य) मुझे छोड़कर। (१०) (सोऽपि दुष्टश्चिंतितवान्)—उस दुष्ट ने सोचा। (निर्विण्णो·····स्थाने करोमि) मत्स्य मांस भक्षण से घृणा हुई है, तो आज इस केंकड़े को मैं चटनी बनाऊँगा। (११) (वध्यशिलां उद्दिश्य प्रस्थितः) वध करने के पत्थर की दिशा से चला। (मत्स्यास्थीनिपरिज्ञाय) मछलियों की हड्डियाँ जानकर। (१२) (सस्मितमिदमाह)—हँसता हुआ ऐसा बोला। (कुतोऽन्यो जलाशयः) कहाँ दूसरा तालाब

६ वृत्ति+अकरोत्। ७ दुष्टः+चिंतितवान्। ८ निर्विण्णः+अहं। ९ पृष्ठं+आरोप्य। १० कुलीरकः+अपि। ११ दूरात्+एव। १२ चरः+अयं। १३ कुतः+अन्यः।

शयः । मम प्राणयात्रा इयम् । त्वाम् अस्यां शिलायां निक्षिप्य भक्षयामि । (१३) इत्युक्तवति तस्मिन्, कुपितेन कुलीरकेन स्ववदनेन ग्रीवायां गृहीतो मृतश्च । अथ स तां बकग्रीवां समादाय शनैस्तज्जलाशयम्[14] आससाद । (१४) ततः सर्वैरेव जलचरैः पृष्टः— भोः कुलीरक ! किं निमित्तं त्वं पश्चादायातः ? कुशलकारणं तिष्ठति । स मातुलोऽपि नायातः । तत्किं चिरयति । (१५) एवं तैः अभिहिते कुलीरकोऽपि विहस्य उवाच—मूर्खाः सर्वे जलचरास्तेन[15] मिथ्यावादिना वञ्चयित्वा, नातिदूरे शिलातले प्रक्षिप्ताः भक्षिताश्च । तत्, मया तस्य अभिप्रायं ज्ञात्वा, ग्रीवा इयं आनीता । (१६) तदलं संभ्रमेण । अधुना सर्वजलचराणां क्षेमं भविष्यति ।—पञ्चतन्त्रम् ।

(मम प्राणयात्रा इयं)—मेरी प्राणों की रक्षा यह । (१३) (इति उक्तवति···मृतश्च)—ऐसा उसने बोला, इस क्रोधित केंकड़े ने अपने मुख से उसे गले से पकड़ा और मार दिया । (शनैः······ आससाद) धीरे-धीरे उस तालाब के पास पहुँचा । (१४) (कुशल-कारणं तिष्ठति) कुशल है न । (१५) (तैः अभिहिते) उनके कहने पर । (मूर्खाः······आनीताः) मूर्ख सब जल निवासी प्राणी उस असत्य-भाषी ने ठगकर पास के पत्थर पर फेंककर खाये । इसलिये मैंने उसका मतलब जान यह गला लाया । (१६) (तदलं······भविष्यति) तो बस है अब घबराना । अब सब जल-निवासियों का कल्याण होगा ।

---

१४ शनैः+तत्+जला० १५ चराः+तेन ।

पाठ पच्चीसवां

अब स्त्रीलिंगी शब्दों के रूप बनाने का प्रकार लिखते हैं। संस्कृत में कोई अकारान्त शब्द स्त्रीलिंगी नहीं है। आकारान्त शब्द प्रायः स्त्रीलिंगी हुआ करते हैं। थोड़े ऐसे शब्द हैं जो आकारान्त होने पर भी पुल्लिंगी हैं। परन्तु उनको छोड़ दिया जाय तो बाकी के सब आकारान्त शब्द स्त्रीलिंगी हैं।

आकारान्त स्त्रीलिंगी 'विद्या' शब्द

१	विद्या	विद्ये	विद्याः
सं०	(हे) विद्ये	,,	,,
२	विद्याम्	,,	,,
३	विद्यया	विद्याभ्याम्	विद्याभिः
४	विद्यायै	,,	विद्याभ्यः
५	विद्यायाः	,,	,,
६	,,	विद्ययोः	विद्यानाम्
७	विद्यायाम्	,,	विद्यासु

इस प्रकार 'गङ्गा, रमा, कृपा, मज्जा, जिह्वा, भार्या, माला, गुहा, शाला, वाला, पत्रिका' इत्यादि शब्दों के रूप होते हैं।

'अम्बा, अक्का, अल्ला' इत्यादि शब्दों के सम्बोधन के एकवचन के 'अम्ब, अक्क, अल्ल' ऐसे रूप होते हैं। शेष रूप उक्त 'विद्या' के समान ही होते हैं।

ईकारान्त स्त्रीलिंगी 'लक्ष्मी' शब्द

१	लक्ष्मीः	लक्ष्म्यौ	लक्ष्म्यः
सं०	(हे) लक्ष्मि	,,	,,
२	लक्ष्मीम्	,,	लक्ष्मीः
३	लक्ष्म्या	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभिः
४	लक्ष्म्यै	,,	लक्ष्मीभ्यः

५	लक्ष्म्याः	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभ्यः
६	,,	लक्ष्म्योः	लक्ष्मीणाम्
७	लक्ष्म्याम्	,,	लक्ष्मीषु

इसी प्रकार 'नदी' शब्द के रूप होते हैं। परन्तु प्रथमा क एकवचन 'नदी', अर्थात् विसर्ग रहित होता है, इतनी बात ध्यान रखनी चाहिये। बाकी के रूपों में कोई भेद नहीं। नदी शब्द समान ही 'श्रेयसी, कुमारी, बुद्धिमती, वाणी, सखी, गौरी, तरी तन्त्री, अवी, स्तरी, इत्यादि स्त्रीलिंगी शब्दों के प्रथमैकवचन विसर्ग रहित रूप होकर, शेष रूप लक्ष्मीवत् होते हैं।

(३७) नियम—'च्, छ्, ट्, श्' इनको छोड़कर अन्य कठोर व्यञ्जन के पूर्व आने वाला 'त्' वैसा ही रहता है। जैसे—

गृहात्+पतति=गृहात्पतति

तत्+कुरु=तत्कुरु

यत् +फलम्=यत्फलम्

(३८) नियम—'ज्, झ्, ड्, ढ्, ल्' इनको छोड़कर अन्य मृ व्यञ्जन तथा स्वर के पूर्व के 'त्' का 'द्' होता है। जैसे—

नगरात्+ वनम् =नगराद्वनम्

तत् + गृहम् =तद्गृहम्

एतत् + अस्ति =एतदस्ति,

तत् + आसीत्=तदासीत्

पाठ छब्बीसवां

ऊकारान्त स्त्रीलिंगी 'चमू' शब्द

१	चमूः	चम्वौ	चम्वः
सं०	(हे) चमु	"	"
२	चमूम्	"	चमूः
३	चम्वा	चमूभ्याम्	चमूभिः
४	चम्वै	"	चमूभ्यः
५	चम्वः	"	"
६	"	चम्वोः	चमूनाम्
७	चम्वाम्	"	चमुषु

इसी प्रकार 'वधू, श्वश्रू, जम्बू, कर्कन्धू, दिधिपू, यवागू, चम्पू', इत्यादि ऊकारान्त स्त्रीलिंगी शब्द चलते हैं।

ईकारान्त स्त्रीलिंगी 'स्त्री' शब्द

१	स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः
सं०	(हे) स्त्रि	"	"
२	स्त्रियम्, स्त्रीम्	"	स्त्रीः
३	स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रिभिः
४	स्त्रियै	"	स्त्रीभ्यः
५	स्त्रियाः	"	"
६	"	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्
७	स्त्रियाम्	"	स्त्रीषु

इसी प्रकार एक स्वर वाले ईकारान्त स्त्रीलिंगी शब्द चलते हैं।

पाठ सत्ताईसवां

इकारान्त स्त्रीलिंगी 'रुचि' शब्द

१	रुचिः	रुची	रुचयः
स०	(हे) रुचे	,,	,,
२	रुचिम्	,,	रुचीः
३	रुच्या	रुचिभ्याम्	रुचिभिः
४	रुच्यै, रुचये	,,	रुचिभ्यः
५	रुच्याः, रुचेः	,,	,,
६	,, ,,	रुच्योः	रुचीनाम्
७	रुच्याम्, रुचौ	,,	रुचिषु

इस शब्द के चतुर्थी से सप्तमी-पर्यन्त एकवचन के दो-दो रूप होते हैं—एक 'लक्ष्मी' शब्द के समान तथा दूसरा 'हरि' के समान। इसी प्रकार 'स्तुति, मति, बुद्धि, शुचि' आदि शब्द चलते हैं।

उकारान्त स्त्रीलिंगी 'धेनु' शब्द

१	धेनुः	धेनू	धेनवः
स०	(हे) धेनोः	,,	,,
२	धेनुम्	,,	धेनूः
३	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
४	धेन्वैः, धेनवे	,,	धेनुभ्यः
५	धेन्वाः, धेनोः	,,	,,
६	,, ,,	धेन्वोः	धेनुनाम्
७	धेन्वाम्	,,	धेनुषु

इसी प्रकार रज्जु, हनु, तनु, तन्तु, इत्यादि स्त्रीलिंगी श[illegible] [illegible]लते हैं।

इस शब्द के भी चतुर्थी से सप्तमी-पर्यन्त एकवचन के दो-[illegible] होते हैं एक 'नदी' शब्द के समान तथा दूसरा 'भानु' शब्द

समान होता है। इकारान्त स्त्रीलिंगी शब्दों से ईकारान्त स्त्रीलिंगी शब्दों में कौन-सा भेद है, तथा उकारान्त और ऊकारान्त स्त्रीलिंगी शब्दों में कौन-सी भिन्नता है, इसका विचार पूर्वोक्त रूप देखकर पाठकों को करना चाहिये।

धकारान्त स्त्रीलिंगी 'समिध्' शब्द

१	समित्	समिधौ	समिधः
स०	हे ,,	,,	,,
२	समिधम्	,,	,,
३	समिधा	समिद्भ्याम्	समिद्भिः
४	समिधे	,,	समिद्भ्यः
५	समिधः	,,	,,
६	,,	समिधोः	समिधाम्
७	समिधि	,,	समित्सु

इसी प्रकार 'सरित्, हरित्, भूभृत्, शरद्, तमोनुद्, बेभिद्, क्षुद्, चैच्छिद्, युयुध्, गुप्, ककुभ्, अग्निमथ्, चित्रलिख्, सर्वशक्' आदि शब्द चलते हैं। इनके पुल्लिग स्त्रीलिंग के रूप समान होते हैं। उक्त शब्दों में 'सरित्, शरद्, क्षुध्, ककुभ्' ये शब्द स्त्रीलिंगी हैं। इनके थोड़े-से रूप नीचे देते हैं। जिनको देखकर पाठक अन्य रूप बना सकेंगे—

देखकर पाठक अन्य रूप बना सकेंगे :—

प्रथमा एकवचन	तृतीया एकवचन	तृतीया द्विवचन	सप्तमी बहुवचन
सरित्	सरिता	सरिद्भ्याम्	सरित्सु
शरद्	शरदा	शरद्भ्याम्	शरत्सु
क्षुध्	क्षुधा	क्षुद्भ्याम्	क्षुत्सु
ककुभ्	ककुभा	ककुब्भ्याम्	ककुत्सु
हरित्	हरिता	हरिद्भ्याम्	हरित्सु
भूभृत्	भूभृता	भूभृद्भ्याम्	भूभृत्सु
तमोनुत्	तमोनुदा	तमोनुद्भ्याम्	तमोनुत्सु
वेभिद्	वेभिदा	वेभिद्भ्याम्	वेभित्सु
चेच्छिद्	चेच्छिदा	चेच्छिद्भ्याम्	चेच्छित्सु
युयुत्	युयुधा	युयुद्भ्याम्	युयुत्सु
गुप्	गुपा	गुब्भ्याम्	गुप्सु
चित्रलिख्	चित्रलिखा	चित्रलिग्भ्याम्	चित्रलिक्षु
सर्वशक्	सर्वशका	सर्वशक्भ्याम्	सर्वशक्षु

पाठ अट्ठाईसवां

चकारान्त स्त्रीलिंगी 'वाच्' शब्द

	वाक्, वाग्	वाचौ	वाचः
(हे)	,,	,,	,,
	वाचम्	,,	,,

४	वाचे	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
५	वाचः	,,	,,
६	,,	वाचोः	वाचाम्
७	वाचि	,,	वाक्षु

इसी प्रकार 'स्रज्, दिश्, उष्णिह्, दृश्, त्विष्, प्रवृष' इत्यादि शब्द चलते हैं। इनके थोड़े-से रूप नीचे देते हैं :—

प्रथमा एकवचन	द्वितीया एकवचन	तृतीया द्विवचन	सप्तमी बहुवचन
स्रक्	स्रजम्	स्रग्भ्याम्	स्रक्षु
दिक्	दिशम्	दिग्भ्याम्	दिक्षु
उष्णिक्	उष्णिहम्	उष्णिग्भ्याम्	उष्णिक्षु
दृक्	दृशम्	दृग्भ्याम्	दृक्षु
त्विट्	त्विषम्	त्विड्भ्याम्	त्विड्सु
प्रावृट्	प्रावृषम्	प्रावृड्भ्याम्	प्रावृट्सु

ऋकारान्त स्त्रीलिंगी 'मातृ' शब्द

१	माता	मातरौ	मातरः
सं०	(हे) मातः	,,	,,
२	मातरम्	,,	मातॄः
३	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
४	मात्रे	,,	मातृभ्यः
५	मातुः	,,	,,
६	,,	मात्रोः	मातॄणाम्
७	मातरि	,,	मातृषु

इसी प्रकार 'दुहितृ, ननान्दृ, यातृ' शब्द चलते हैं।

ऋकारान्त स्त्रीलिंगी 'स्वसृ' शब्द

१	स्वसा	स्वसारौ	स्वसारः
सं०	(हे) स्वसः	"	"
२	स्वसारम्	"	स्वसॄः
३	स्वस्रा	स्वसृभ्याम्	स्वसृभिः

शेष रूप 'मातृ' शब्द के समान होते हैं। प्रथमा, द्वितीया, सम्बोधन के रूपों में 'स्वसृ' शब्द के सकार में अकार दीर्घ होता है वैसा 'मातृ' शब्द के तकार में अकार दीर्घ नहीं होता। इतना ही इन दोनों शब्दों में भेद है।

ओकारान्त स्त्रीलिंगी 'द्यो' शब्द

१	द्यौः	द्यावौ	द्यावः
सं०	(हे) "	"	"
२	द्याम्	"	द्याः
३	द्यवा	द्योभ्याम्	द्योभि;
४	द्यवे	"	द्योभ्यः
५	द्योः	"	"
६	"	द्यवोः	द्यवाम्
७	द्यवि	"	द्योषु

इसी प्रकार 'गो' शब्द चलता है :—

१	गौः	गावौ	गावः
सं०	(हे) "	"	"
२	गाम्	"	गाः इत्यादि

पाठ उनतीसवां

ईकारान्त स्त्रीलिंगी 'धी' शब्द

१	धीः	धियौ	धियौः
सं०	(हे) ,,	,,	,,
२	धियम्	,,	,,
३	धिया	धीभ्याम्	धीभिः
४	धियैः, धिये	,,	धीभ्यः
५	धियाः, धियः	,,	,,
६	,, ,,	धियोः	धियाम्, धीनाम्
७	धियाम्, धियी	,,	धीषु

इसी प्रकार 'सुधी, दुधी' शुद्धधी, ह्री, श्री, सुश्री, भी, इत्यादि शब्द चलते हैं।

ऊकारान्त स्त्रीलिंगी 'भू' शब्द

१	भू	भुवौ	भुवः
सं०	(हे) ,,	,,	,,
२	भुवम्	,,	,,
३	भुवा	भूभ्याम्	भूभिः
४	भुवैं, भुवे	,,	भूभ्यः
५	भुवाः, भुवः	,,	,,
६	भुवाः, भुवः	भुवोः	भुवाम्, भूनाम्
७	भुवाम्, भुवि	,,	भूषु

इसी प्रकार 'सुभू, भ्रू, सुभ्रू' इत्यादि शब्द चलते हैं।

वकारान्त स्त्रीलिंगी 'दिव्' शब्द

१	द्यु, द्यौः	दिवौ	दिवः
सं०	(हे) ,,	,,	,,
२	दिवम्	,,	,,

३	दिवा	द्युभ्याम्	द्युभिः
४	दिवे	,,	द्युभ्यः
५	दिवः	,,	,,
६	,,	दिवोः	दिवाम्
७	दिवि	,,	द्युषु

पाठकों को इस शब्द के रूपों के साथ 'द्यो' शब्द के रूपों की तुलना करनी चाहिए, और दोनों के रूप विशेष ध्यान में रखने चाहिएं।

सकारान्त स्त्रीलिंगी 'भास्' शब्द

१	भाः	भासौ	भासः
सं (हे)	,,	,,	,,
२	भासम्	,,	,,
३	भासा	भाभ्याम्	भाभिः
४	भासे	,,	भाभ्यः
५	भासः	,,	भाभ्यः
६	भासः	भासोः	भासाम्
७	भासि	,,	भास्सु

इसी प्रकार सब सकारान्त स्त्रीलिंगी शब्द चलते हैं।

पाठ तीसवां

ऐकारान्त स्त्रीलिंगी 'रै' शब्द

१	राः	रायौ	रायः
सं० (हे)	,,	,,	,,
२	रायम्	,,	,,
३	राया	राभ्याम्	राभिः

४	राये	,,	राभ्यः
५	रायः	,,	,,
६	,,	रायोः	रायाम्
७	रायि	,,	रासु

पुंलिग में 'रै' शब्द इसी प्रकार चलता है। कोई भेद नहीं होता।

पकारान्त स्त्रीलिंगी 'अप्' शब्द

'अप्' शब्द सदैव बहुवचन में ही चलता है। इसलिये इसके एकवचन, द्विवचन के रूप नहीं होते हैं।

१	आपः	४	अद्भ्यः
सं	(हे) आपः	५	अद्भ्यः
२	अपः	६	अपाम्
३	अद्भिः	७	अप्सु

आकारान्त स्त्रीलिंगी 'जरा' शब्द

प्रथमा, सम्बोधन के एकवचन में, तथा 'भ्यां, भिः, भ्यस्' प्रत्यय आगे आने पर, 'जरा' शब्द में कोई भेद नहीं होता परन्तु अन्य वचनों में 'जर' शब्द के लिए 'जरस्' ऐसा आदेश विकल्प से होता है।

१	जरा,	जरे	जरसौ	जराः,	जरसः
सं०	(हे)जरे,	,,	,,	,,	,,
२	जराम्,	जरसम्	,,	,,	,,
३	जरया,	जरसा	जराभ्याम्,	जराभिः	
४	जरायै,	जरसे	,,	जराभ्यः	
५	जरायाः,	जरसः	,,	,,	
६	,,	,,	जरयोः, जरसोः	जराणाम्, जरासाम्	
७	जरायाम्,	जरसि	,, ,,	जरासु	

'जरा' शब्द 'विद्या' के समान ही चलता है; परन्तु जिस समय उसके स्थान में 'जरस्' आदेश होता है, उस समय सकारान्त शब्द के समान उसके रूप बनते हैं।

'अजर, निर्जर' शब्द पुल्लिंग में होने से 'देव' शब्द के समान चलते हैं। परन्तु उक्त विभक्तियों के वचनों में उनको भी 'अजरस्, निर्जरस्' ऐसे आदेश होते हैं। अर्थात् इनके भी 'जरा' शब्द के समान दो-दो रूप बनते हैं।

पाठ इकतीसवां

अब पाठकों को बताना है कि स्त्रीलिंगी सर्वनामों के रूप किस प्रकार होते हैं।

आकारान्त स्त्रीलिंगी 'सर्वा' शब्द

१	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
सं० (हे)	सर्वे	,,	,,
२	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
३	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
४	सर्वस्यै	,,	सर्वाभ्यः
५	सर्वस्याः	,,	,,
६	,,	सर्वयोः	सर्वासाम्
७	सर्वस्याम्	,,	सर्वासु

इसी प्रकार 'पूर्वा, परा, दक्षिणा, उत्तरा, अपरा, अधरा, नेमा' इत्यादि सर्वनामों के रूप होते हैं।

'प्रथमा, चरमा, द्वितया, त्रितया, अल्पा, अर्धा, कतिपया' आदि सर्वनाम स्त्रीलिंगी होते हुए भी 'विद्या' के समान चलते

हैं। इनके पुलिंगी रूप 'देव' के समान चलते हैं।

'द्वितीया, तृतीया' के रूप दो-दो प्रकार के होते हैं। जैसे—

आकारान्त स्त्रीलिंगी 'द्वितीया' शब्द

१	द्वितीया	द्वितीया	द्वितीयाः
सं० (हे)	द्वितीये	,,	,,
२	द्वितीयाम्		
३	द्वितीयया	द्वितीयाभ्याम्	द्वितीयाभिः
४	द्वितीयस्यै, द्वितीयायै	,,	द्वितीयाभ्यः
५	द्वितीयस्याः, द्वितीयायाः	,,	,,
६	,, ,,	द्वितीययोः	द्वितीयानाम्, द्वितीयासाम्
७	द्वितीयस्याम्, द्वितीयायाम्	,,	द्वितीयासु

इसी प्रकार तृतीया शब्द चलता है

'यत्' शब्द स्त्रीलिंगी

१	या	ये	याः
२	याम्	,,	,,
३	यया	याभ्याम्	याभिः
४	यस्यै	,,	याभ्यः
५	यस्याः	,,	,,
६	,,	ययोः	यासाम्
७	यस्याम्	,,	यासु

इसी प्रकार 'अन्या, अन्यतरा, इतरा, कतरा कतमा, त्वा,' इत्यादि सर्वनामों के रूप होते हैं।

'अन्यतमा' शब्द के, सर्वनाम होते हुए भी, विद्या के समान रूप बनते हैं, यह बात ध्यान में रखनी चाहिए।

पाठ बत्तीसवां

स्त्रीलिंगी 'किम्' शब्द

१	का	के	काः
२	काम्	"	"
३	कया	काभ्याम्	काभिः
४	कस्यै	"	काभ्यः
५	कस्याः	"	"
६	"	कयोः	कासाम्
७	कस्याम्	"	कासु

स्त्री० 'तद्' शब्दः

१	सा	ते	ताः
२	ताम्	ते	ताः
३	तया	ताभ्याम्	ताभिः
४	तस्यै	"	ताभ्यः
५	तस्याः	"	"
६	"	तयोः	तासाम्
७	तस्याम्	"	तासु

इसी प्रकार 'त्यत्' सर्वनाम् के स्त्रीलिंग में रूप होते हैं। यथा—

१	त्या	त्ये	त्या
२	त्याम्	त्ये	त्याः

इत्यादि 'तद्' शब्द के समान रूप होते हैं।

'एतत्' शब्द (स्त्री०)

१	एषा	एते	एता
२	एताम्, एनाम्	एते, एने	एताः, एनाः
	एतया, एनया	एताभ्याम्	एताभिः

४	एतस्यै	"	एताभ्यः
५	एतस्याः	"	"
६	"	एतयोः, एनयोः	एतासाम्
७	एतस्याम्	"	एतासु

पाठ तैंतीसवां

'इदम्' शब्द (स्त्री०)

१	इयम्	इमे	इमाः
२	इमाम्, एनाम्	इमे, एने	इमाः, एनाः
३	अनया, एनया	आभ्याम्	आभिः
४	अस्यै	"	आभ्यः
५	अस्याः	"	"
६	अस्याः	अनयोः, एनयोः	आसाम्
७	अस्याम्	" "	आसु

'अदस्' शब्द (स्त्री०)

१	असौ	अमू	अमूः
२	अमुम्	"	"
३	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
४	अमुष्यै	"	अमूभ्यः
५	अमुष्याः	"	"
६	"	अमुयोः	अमूषाम्
७	अमुष्याम्	"	अमूषु

'द्वि' शब्द स्त्रीलिंग में नपुंसकलिंगी 'द्वि' शब्द के समान ही चलता है।

'त्रि' शब्द का बहुवचन में ही प्रयोग होता है। इसके स्त्रीलिंग के रूप नीचे दिये हैं :—

'त्रि' शब्द (स्त्री०)

१	तिस्रः	५	तिसृभ्यः
२	तिस्रः	६	तिसृणाम्
३	तिसृभिः	७	त्रिसृषु
४	तिसृभ्यः		

(यहाँ 'तिसृणाम्' ऐसा रूप नहीं होता है। स्मरण रहे)।

'चतुर' शब्द (स्त्री०)

१	चतस्रः	५	चतसृभ्यः
२	,,	६	चतसृणाम्
३	चतसृभिः	७	चतसृषु
४	चतसृभ्यः		

यहाँ भी सृ दीर्घ नहीं होता है।

'विंशति' शब्द स्त्रीलिंगी है। इसके रूप 'रुचि' शब्द के समान होते हैं। प्रायः इसका प्रयोग एकवचन में ही हुआ करता है। परन्तु प्रकरणानुसार अन्य वचनों में भी होता है। जैसा :—

पुस्तकानां विंशतिः—बीस किताबें।

विंशतिः पुस्तकानि— ,, ,,

पडितानां द्वे विंशती—चालीस पण्डित (दो बीस पण्डित)।

विद्यार्थिनां त्रयः विंशतयः—विद्यार्थियों के तीन बीस (६० विद्यार्थी)।

इस प्रकार प्रकरण के अनुसार, सब वचनों में प्रयोग हो सकता है।

त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत्—ये शब्द स्त्रीलिंगी हैं। इनके 'सरित्' शब्द के समान होते हैं।

'षष्ठि, सप्तति, अशीति, नवति—ये शब्द स्त्रीलिंगी हैं। इन के रूप 'रुचि' शब्द के समान होते हैं।

(देखिये पाठ २७)

'कोटि' शब्द स्त्रीलिंगी है। इसके रूप 'रुचि' शब्द के समान ही होते हैं।

पञ्चन्, षष्टन्, सप्तन्, अष्टन्, नवन्, इनके स्त्रीलिंगी रूप पुंल्लिंग के समान ही होते हैं। (देखिये पाठ १७)

पाठ चौतीसवां

क्रिया-पद-विचार

प्रिय पाठकगण ! इस समय आप संस्कृत में साधारण व्यवहार की बातचीत भी कर सकते हैं। इस संस्कृत-स्वयं-शिक्षक की प्रणाली से आपके अन्दर 'आत्म-विश्वास' अवश्य उत्पन्न हुआ होगा। संस्कृत-स्वयं-शिक्षक उत्तम मार्ग-दर्शक है। जो इसके अनुसार अपने मार्ग का अनुसरण करेंगे वे निस्सन्देह संस्कृत-मन्दिर के अन्दर प्रविष्ट होकर, वहां के अमूल्य उपदेश के रत्नों को पाकर उन रत्नों से अपने आपको सुशोभित करेंगे।

संस्कृत स्वयं-शिक्षक के पिछले पाठों में आपने नामों का विचार सीखा। वाक्य में जैसे नाम होते हैं वैसे क्रियापद भी हुआ करते हैं, जिनका विचार इस भाग में कराना है।

राम: आम्रं भक्षयति = राम आम खाता है।

इस वाक्य में 'राम: आम्रं' ये नाम हैं और

यह क्रिया है। क्रिया के बिना वाक्य पूर्ण नहीं हो सकता। इसलिये पूर्ण वाक्य बनाने की योग्यता प्राप्त करने के लिये आपको क्रियापदों का विचार करना चाहिए। वाक्य में निम्न बातें हुआ करती हैं :—

(१) नाम—रामः, कृष्णः, ईश्वरः, देवता, फलं इत्यादि प्रकार के नाम होते हैं।

(२) सर्वनाम—सः, सा, तत्, सर्व, विश्व, किं, का आदि सर्वनाम हैं।

(३) विशेषण—शुभ, सुन्दर, श्वेत, मधुर आदि गुण बताने वाले शब्द विशेषण होते हैं।

(४) क्रियापद—गच्छति, वदति, करोति, जानाति आदि क्रियादर्शक शब्द क्रियापद होते हैं।

(५) अव्यय—च, परन्तु, किन्तु, यदि, अपि, चेत् इत्यादि शब्द अव्यय होते हैं।

इन पांच अवयवों को निम्न वाक्य में पाठक देख सकते हैं :—

सुविद्या भूपतो रामः पतिव्रतया सीतया सह, इदानीं वनं गच्छति। तं कुमारं रामं, भार्यया सीतया, भ्रात्रा लक्ष्मणेन च सह, वनं गच्छन्तं अवलोक्य, नागरिको जनस्, तं एव अनुगच्छति। भो मित्र ! पश्य।

इस वाक्य में 'सुविद्या भूपितः' 'पतिव्रतया' आदि विशेषण हैं। राम, सीता, लक्ष्मण, वन, आदि नाम हैं। गच्छति, पश्य आदि क्रियापद हैं। 'सह, च भोः' आदि [illegible] हैं। इसी प्रकार आप प्रत्येक वाक्य में देखिए, तथा [illegible] से कौन-सा प्रयोजन सिद्ध होता है, इसका भी

विचार कीजिए। जिससे आपको वाक्य में शब्दों के महत्व का पता लग जायगा! अस्तु।

अब क्रिया के रूप देते हैं, जिनको आप कण्ठ कीजिये।

परस्मैपद *

भू—सत्तायाम्। (गण* १ ला)

भू (धातु) अर्थ होना, अस्तित्व रखना

इस 'भू' धातु के वर्तमान काल का रूप

वर्तमान काल

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवति	भवतः	भवन्ति
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथः	भवथ
उत्तम पुरुष	भवामि	भवावः	भवामः

'१ वह, २ तू, ३ मैं' इन तीन को क्रमशः '१ प्रथम, २ मध्यम और ३ उत्तम पुरुष' कहते हैं।

मैं और हम—उत्तम पुरुष।

तू और तुम—मध्यम पुरुष।

वह और वे—प्रथम पुरुष।

एकवचन से एक का, द्विवचन से दो का और बहुवचन से तीन अथवा तीन से अधिक का बोध होता है। इनकी बातें

* परस्मैपद और गण आदि के विषय में आगे स्पष्टीकरण किया।

होने के पश्चात् निम्न रूप स्मरण कीजिये:—

वद्=(व्यक्तायां वाचि)

वद्=बोलना, स्पष्ट बोलना।

पुरुष:	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुव
प्रथम पुरुष:	वदति	वदत:	वदन्ति
मध्यम पुरुष:	वदसि	वदथ:	वदथ
उत्तम पुरुष:	वदामि	वदाव:	वदाम

अब इन क्रियाओं का उपयोग देखिये:—

उत्तम पुरुष—

(१) अहं वदामि। मैं बोलता हूँ।

(२) आवां वदाव:। हम दोनों बोलते हैं।

(३) वयं वदाम:। हम सब बोलते हैं।

मध्यम पुरुष—

(१) त्वं वदसि। तू बोलता है।

(२) युवां वदथ:। तुम दोनों बोलते हो।

(३) यूयं वदथ। तुम सब बोलते हो।

प्रथम पुरुष—

(१) स वदति। वह बोलता है।

(२) तौ वदत:। वे दोनों बोलते हैं।

(३) ते वदन्ति। वे सब बोलते हैं।

संस्कृत में 'अहं, त्वं, स:' आदि सर्वनाम वाक्यों में रख कोई आवश्यकता नहीं। यदि आप चाहें रख सकते हैं। यदि चाहें न रखिए। क्रियापदों में स्वयं 'एक, दो, बहुत' संख्या की शक्ति रहती है। जैसे:—

वदाव:—हम दोनों बोलते हैं।

वदसि—तू एक बोलता है।

वदन्ति—वे सब बोलते हैं।

इस प्रकार केवल क्रियाओं से ही स्वयं अर्थ निष्पन्न होता है। अस्तु, निम्न धातुओं के रूप पूर्व के समान ही होते हैं :—

गण १ला। परस्मैपद।

१ अट् (गतौ)=जाना—अटति।

२ अत् (सातत्य गमने)=हमेशा जाते रहना, गमन करना—अतति।

३ अर्घ् (मूल्ये)=मूल्य—कीमत होना—अर्घति।

४ अर्च् (पूजायाम्)=पूजा करना—अर्चति।

५ अर्ज् (अर्जने)=कमाना—अर्जति।

६ अर्ह् (पूजायाम्)=योग्य होना—अर्हति।

७ अव् (रक्षणे)=संरक्षण करना—अवति।

इनके रूप 'वद्' धातु के समान ही हुआ करते हैं।

(१) रामो अटति—राम घूमता है।

(२) राम लक्ष्मणौ अटतः—राम और लक्ष्मण (ये दोनों) घूमते हैं।

(३) जनाः अटन्ति—सब लोक भ्रमण करते हैं।

(४) त्वं अतसि—तू जाता है।

(५) यूयं अतथ—तुम सब चल रहे हैं।

(६) युवां अवथः—तुम दोनों रक्षण कर रहे हो।

(७) सुवर्णं अर्घति—सोने का मूल्य होता है।

(८) देवदत्तः अर्चति—देवदत्त पूजा करता है।

पाठ पैंतीसवाँ

कोसलः—देश का नाम
स्फीतः—उन्नत, बड़ा, शुद्ध
मुदितः—आनन्दित
जनपदः—राष्ट्र
निर्मिता—बनाई हुई
अमरावती—देवों की नगरी
मंत्रज्ञाः—गुप्त बातें जानने वाले उत्तम सलाहकार
प्रशान्त—शांतियुक्त
तप्यमान—तपने वाला
वंशकर—वंश करने वाला
अन्तःपुरः—स्त्रियों का स्थान
पुत्रीय—पुत्र उत्पन्न करने वाला
अर्ध—आधा
अवशिष्ट—बाकी, शेष
दारक्रिया—विवाह
निवसति—रहता है
पौरप्रिय—जनों का प्यारा
वशी—इन्द्रियों को स्वाधीन रखने वाला
सत्याभिसन्धः—सत्य प्रतिज्ञा करने वाला

यजामि—यज्ञ करता हूँ
समानयत्—रोने वाला, चिल्लाने वाला
अनुज्ञात—आज्ञा किया हुआ
पावक—अग्निः
भूत—प्रकट हुआ हुआ तेज
पायस—खीर
पात्री—बरतन
तथेति—ठीक ऐसा कहकर
प्रीतः—संतुष्ट हुआ
अभिवाद्य—नमस्कार करके
हयमेधः—, वाजिमेधः— } अश्वमेध
इष्टिः—यज्ञ
प्रादुर्भूत्—प्रकट हुआ
दिनकरः—सूर्य्य
प्रयच्छ—दो
प्राप्स्यसे—प्राप्त करोगे
धारयांचक्रू—धारण किये
नावमिके—नवमी
बाल्यात्प्रभृति—बचपन से लेकर
सुस्निग्ध—मित्र

इङ्गितज्ञः—गुप्त विचार जानने वाला

मन्त्रिणः—वज़ीर, प्रधान

मृषावादी—झूठ बोलने वाला

बभूव—हुआ ।

चिंतमान—चिंता करने वाला

बुद्धि—विचार

श्लक्ष्णं—नरम, मीठा

अब्रवीत—बोला

हयः—घोड़ा

अनुजः—छोटा भाई

हृष्टः—संतुष्ट

अनुगृहीत—कृपा की

परिवृद्धिः—उन्नति

व्रतस्थः—व्रत करने वाला

विघ्नकरौ—विघ्न करने वाले

विमर्शन—कष्ट, दुःख

कामरूपिणौ—मनमाने रूप धारण करने वाले

भवतः—आपका

समास

१ मन्त्रज्ञः—मन्त्रान् जानाति इति मन्त्रज्ञः ।

२ पौरप्रियः—पौराणां नागरिकाणां जनानां प्रियः इति पौरप्रियः ।

३ मृषावादी— मृषा असत्यं वदतीति मृषावादी ।

४ व्रतस्थः—व्रते तिष्ठतीति व्रतस्थः ।

५ विघ्नकरः—विघ्नं करोतीति विघ्नकरः ।

६ राजश्रेष्ठः—राज्ञां श्रेष्ठः राजश्रेष्ठः ।

७ परदाररतः—परेषां दारा परदाराः । परदारासु रतः परदाररतः ।

८ दिनकरः—दिनं दिवसं करोतीति दिनकरः ।

९ पायसपूर्णा—पायसेन पूर्णा पायसपूर्णा ।

१० देवनिर्मितं—देवैः निर्मितं देवनिर्मितम् ।

११ प्रजाकरं—प्रजां करोतीति प्रजाकरः, तम् ।

१२ दिव्यलक्षणा—दिव्यं लक्षणं यस्य स दिव्यलक्षणः,

संक्षिप्त वाल्मीकि रामायणे बालकाण्डम् ।

प्रथमः खण्डः

सरयूतीरे कोशलो नाम स्फीतो मुदितो जनपद आसीत्। तस्मिन् स्वयं मनुना अयोध्या नाम नगरी निर्मिता। तत्र तु दशरथो नाम राजा निवसति स्म। स च राजश्रेष्ठः पौरप्रियो वशी सत्याभिसन्धः पुरीं पालितवान्। इन्द्रो यथा अमरावतीम्। तस्य मन्त्रज्ञा इङ्गितज्ञाश्च अष्टौ मन्त्रिणो बभूवुः। पुरे वा राष्ट्रे वा क्वचिदपि मृषावादी नरो नासीत्। न कोऽपि दुष्टः परदाररतश्च। सर्वं राष्ट्रं प्रशांतमासीत्।

तस्य तु धर्मज्ञस्य सुतार्थं तप्यमानस्य वंशकरः सुतो न बभूव। सुतार्थं चिन्तयमानस्य तस्य बुद्धिरासीत्। अश्वमेधेन यजामि इति। ततो धर्मात्मा पुरोहितान् अमानयत् तान् पूजयित्वा च श्लक्ष्णं वचनम् अब्रवीत्। मम वै सुतार्थं लालप्यमानस्य सुखं नास्ति। तदर्थं हयमेधेन यक्ष्यामि इति। अनुज्ञातश्च पुरोहितैः स यज्ञमारभत। पुत्रकारणाद् इष्टिं च प्राक्रमत। ततः पावकाद् अद्भुतं भूतं प्रादुरभूत्। दिनकरसदृशं प्रदीप्तं तद्भूतं हस्ते पायसपूर्णपात्रीं धारयन्नब्रवीत्। राजन्! इदं देवेभ्यः प्राप्तम्। तदिदं देवनिर्मितं प्रजाकरं पायसं गृहाण। भार्याभ्यः प्रयच्छ च। तासु प्राप्स्यसि पुत्रान् इति।

तथेति नृपतिः प्रीतः अभिवाद्य तं, प्रविश्य चान्तःपुरं कौशल्यामुवाच। पात्रीयं पायसं गृहाण इति अर्धं ततः कौशल्यायै ददौ। अर्धस्यार्धं सुमित्रायै। अवशिष्टं च कैकेय्यै ददौ। [illegible]र्वा प्राश्य तेजस्विनो गर्भान् धारयाञ्चक्रुः।

[illegible]तो द्वादशे चैत्रे मासि नावमिके तिथौ कौशल्या दिव्य लक्षणं [illegible] अजनयत्। कैकेय्या सत्यपराक्रमो भरतो जज्ञे। सुमित्रा च

लक्ष्मणशत्रुघ्नौ जनयामास । तदा अयोध्यायां महानुत्सव आसीत् ।

बाल्यात्प्रभृति लक्ष्मणो प्रियकरः सुस्निग्धश्च बभूव । तेन विना रामो निद्रां न लभते, यदा हि रामोहयमारूढो मृगयां याति तदैनं पृष्ठतो लक्ष्मणो धनुः परिपालयन् याति । तथैव लक्ष्मणानुजः शत्रुघ्नो भरतस्य पृष्ठतो याति । यदा च ते सर्वे ज्ञानिनो गुणसंपन्नाः कीर्तिमन्तः सर्वज्ञा अभवन्, तदा पितादशरथोऽतीव हृष्टः ।

अथ राजा तेषां दारक्रियां प्रति चिन्तयामास । मन्त्रिमध्ये चिन्तमानस्य तस्य महातेजो विश्वामित्रो मुनिः प्राप्तः । तं पूजयित्वा राजोवाच । अनुग्रहीतोऽहम् । परिवृद्धिमिच्छामि ते कार्यस्य । न विमर्शनमर्हति भवान् । कथयतु भवान् । करिष्यामि तदशेषेण । भवानेव ममदैवतम् । इति श्रुत्वा विश्वामित्रोवाच । राजश्रेष्ठ ! व्रतस्थोऽस्मि । तस्य तु व्रतस्य मारीचसुबाहू नाम द्वौ राक्षसौ कामरूपिणौ विघ्नकरौ । तस्माद् व्रतसम्पादनार्थं ज्येष्ठ-पुत्रो रामो भवतो मे सहायो भवतु । इति ।

पाठ छत्तीसवां

निम्न धातुओं के रूप वद् धातु के समान ही कीजिये ।

गण १ ला । परस्मैपद ।

(१) एजृ (कंपने)=कांपना—एजति ।

(२) कण (आर्तस्वरे)=दुःख के साथ रोना—कणति ।

(३) कील् (बंधने)=बांधना—कीलति ।

(४) कुण्ठ् (वैकल्ये)=लूला होना—कुंठति ।

(५) गुज् (अव्यक्ते शब्दे)=अस्पष्ट—गुजति ।

(६) क्रन्द् (रोदने आह्वाने च)=रोना अथवा आह्वान करना—क्रन्दति ।

(७) क्रीड् (विहारे)=खेलना--क्रीडति ।
(८) क्वथ् (निष्पाके)=कषाय करना, काढ़ा करना—क्वथति ।
(९) क्षर् (संचलने)=पिघलना--क्षरति ।
(१०) खन् (अवदारणे)=ज़मीन खोदना--खनति ।
(११) खाद् (भक्षणे)=खाना--खादति ।
(१२) खेल् (क्रीडायाम्)=खेलना--खेलति ।
(१३) गद् (व्यक्तायाँ वाचि)=बोलना--गदति ।
(१४) गम् (गच्छ) (गतौ)=जाना--गच्छति ।

वाक्य

१ वृक्षः एजति ।	वृक्ष कांपता है ।
२ वृक्षौ एजतः ।	दो वृक्ष हिलते हैं ।
३ वने वृक्षा एजन्ति ।	वन में बहुत वृक्ष हिल रहे हैं ।
४ त्वं क्रणसि ।	तू रोता है ।
५ युवां क्रणथः ।	तुम दोनों रोते हो ।
६ भित्तिः संकुचति ।	दिवार सिकुड़ती है ।
७ ते कुंठन्ति ।	वे सब लूले होते हैं ।
८ काकौ कूजतः ।	दो कौवे शब्द करते हैं ।
९ पक्षिणः कूजन्ति ।	वहुत पक्षी शब्द कर रहे हैं ।
१० बालकाः क्रन्दन्ति ।	लड़के रोते हैं ।
११ स्त्रीपुरुषौ क्रन्दतः ।	स्त्री और पुरुष दोनों चिल्लाते हैं ।
१२ मनुष्यः क्रन्दति ।	एक मनुष्य रोता है ।
१३ स कुत्र क्रीडति ?	वह कहां खेलता है ?
१४ युवां कुत्र क्रीडथः ?	तुम दोनों कहाँ खेलते हो ?
१५ आवां अत्र क्रीडावः ।	हम दोनों यहाँ खेलते हैं ।
१६ वयं तत्र क्रीडामः ।	हम सब वहाँ खेलते हैं ।

१७ तैलं क्षरति ।	तेल पिघल रहा है ।
१८ अश्वः शष्पं खादति ।	घोड़ा घास खाता है ।
१९ अश्वौ तृणं खादतः ।	दो घोड़े घास खा रहे हैं ।
२० अश्वाः तृणं खादन्ति ।	बहुत घोड़े घास खा रहे हैं ।
२१ धनदासः खनति ।	धनदास खोदता है ।
२२ ते खनन्ति ।	वे सब खोदते हैं ।
२३ धनदास-विष्णुमित्रौ खनतः ।	धनदास और विष्णुमित्र दोनों खोदते हैं ।
२४ तत्र सर्वे जनाः खनन्ति ।	वहाँ सब लोग खोदते हैं ।
२५ बालको मोदकं खादति ।	लड़का लड्डू खाता है ।
२६ बालकौ मोदकौ खादतः ।	दो बालक लड्डू खाते हैं ।
२७ बालकाः मोदकान् खादन्ति ।	बहुत बालक बहुत लड्डू खाते हैं ।
२८ अश्वाश्च गर्दभाश्च तृणं खादन्ति ।	बहुत घोड़े और बहुत गधे घास खाते हैं ।
२९ अहं खेलामि ।	मैं खेलता हूँ ।
३० रामश्च अहं च खेलावः ।	राम और मैं दोनों खेलते हैं ।
३१ सर्वे वयं खेलामः ।	हम सब खेलते हैं ।
३२ वयं गच्छामः ।	हम सब जाते हैं ।

पाठकों को उचित है कि उक्त वाक्यों में क्रियाओं के रूप किस प्रकार बनाये जाते हैं, और उपयोग में लाए जाते हैं, इसका ठीक ठीक निरीक्षण करें । यहाँ अशुद्ध वाक्य होना सम्भव है । कर्ता का एकवचन हुआ तो क्रिया का भी एकवचन होना चाहिये । कर्ता का बहुवचन हुआ तो क्रिया का भी बहुवचन होना चाहिये । देखिए—

गम् गतौ

सः गच्छति ।	तौ गच्छतः ।	ते गच्छन्ति ।
त्वं गच्छसि ।	युवां गच्छथः ।	यूयं गच्छथ ।
अहं गच्छामि ।	आवां गच्छावः ।	वयं गच्छामः ।

खेल् क्रीडायाम्

अहं खेलामि ।	आवां खेलावः ।	वयं खेलामः ।
त्वं खेलसि ।	युवां खेलथः ।	यूयं खेलथ ।
स खेलति ।	तौ खेलतः ।	ते खेलन्ति ।

खाद् भक्षणे

त्वं खादसि ।	युवां खादथः ।	यूयं खादथ ।
अहं खादामि ।	आवां खादावः	वयं खादामः ।
स खादति ।	तौ खादतः ।	ते खादन्ति ।

खन् अवदारणे

अहं खनामि ।	आवां खनावः ।	वयं खनामः ।
त्वं खनसि ।	युवां खनथः ।	यूयं खनथ ।
रामः खनति ।	रामलक्ष्मणौ खनतः ।	रामलक्ष्मणशत्रुघ्ना खनन्ति ।

क्रिया के रूपों की तैयारी इस प्रकार करनी चाहिए ताकि कभी भूल न हो । पाठकों को उचित है कि वे सब क्रियाओं के सब रूप बनाकर इस प्रकार लिखें ।

उत्तम पुरुष

अहं — (मैं एक) — वदामि — (बोलता हूँ)
आवां — (हम दो) — वदावः — (बोलते हैं)

मध्यम पुरुष

त्वं — (तू एक) — वदसि — (बोलता है)
युवां — (तुम दो) — वदथः — (बोलते हो)
यूयं — (तुम सब) — वदथ — (बोलते हो)

प्रथम पुरुष

सः — (वह एक) — वदति — (बोलता है)
तौ — (वे दो) — वदतः — (बोलते हैं)
ते — (वे सब) — वदन्ति — (बोलते हैं)

इन रूपों को देखने से पता लगेगा कि इन रूपों का किस प्रकार उपयोग करना चाहिए। इस प्रकार को पाठक विशेष प्रकार स्मरण रखें, कभी न भूलें। इनके उपयोग को स्मरण रखने से ही पाठक शुद्ध वाक्य बना सकते हैं, नहीं तो सर्वत्र अशुद्धि हो जायगी। 'कर्ता, और क्रिया' का पुरुष और वचन एक जैसा होना चाहिए, जैसा भाषा में भी हुआ करता है। इसमें थोड़ी गलती होने से सब वाक्य अशुद्ध हो जाता है। इसलिए इस विषय में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है

पाठ सैंतीसवां

धर्मः—कर्तव्य कर्म
अक्रोधः—शांति
संविभागः—कार्य के उत्तम विभाग
याचेत—भीख मांगे
यजेत—यज्ञ करे
साधूनाम्—साधुओं का मार्ग
आर्जवं—सरल स्वभाव
भृत्य-भरणं—नौकरों का पोषण
समाप्यते—समाप्त होता है
दद्यात्—दान करे
[illegible]—[illegible]
[illegible]—[illegible]
[illegible]—[illegible]

शौच—शुद्धता
परिचरेत्—सेवा करे
कथंचन्—किसी प्रकार भी
उच्यते—कहा जाता है
छत्र—छाता
वेष्टनं—साफा
यातयाम—बासी, पुराना
भर्तव्य—पोषरण के लिए योग्य
पाक-यज्ञ—अन्न का यज्ञ
अव्रतवान्—नियम हीन
क्षमा—सहनशीलता
प्रजनः—सन्तान उत्पन्न करना
अद्रोहः—द्रोह न करना
सार्ववर्णिकः—सब वर्णों के सम्बन्ध के

अधीयीत—सीखे
परिचालयेत्—पालन करे
रणं—युद्ध
अनुपूर्वशः—क्रम से
संचयः—संग्रह
जातु—कभी भी
औशीर—बिछौना
उपानह—जूता
व्यजनं—पंखा
पिंडः—चावल का गोला
अनपत्यः—जिसके सन्तान नहीं है
स्वाहा, वषट्—यज्ञविशेष
स्वयं—खुद

समास

१ अनपत्यः—न विद्यते अपत्यं यस्य सः ।
२ स्वाध्यायस्य अभ्यसनं स्वाध्यायाभ्यसनम् ।
३ पाकस्य पक्वान्नस्य यज्ञः पाक-यज्ञः ।

वचन पाठ । महाभारतम्

प्रश्न—के धर्माः सर्ववर्णानां चातुर्वर्ण्यस्य के पृथक् ।
चातुर्वर्ण्याश्रमाणां च राजधर्माश्च के मताः ॥१॥
उत्तर—अक्रोधः सत्यवचनंसंविभागः क्षमा तथा ।

आर्जवं भृत्यभरणं तत्रैते सार्ववर्णिकाः ।
ब्राह्मणस्य तु यो धर्मस्तं ते वक्ष्यामि केवलं ॥३॥
दममेव महाराज धर्ममाहुः पुरातनं ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव तत्र कर्म समाप्यते ॥४॥
क्षत्रियस्यापि यो धर्मस्तं ते वक्ष्यामि भारत ।
दद्याद्राजन्न याचेत् यजेत न च याजयेत् ॥५॥
नाध्यापयेदधीयीत प्रजाश्च परिपालयेत् ।
नित्योद्युक्तो दस्युवधे रणे कुर्यात्पराक्रमम् ॥६॥
दानमध्ययनं यज्ञः शौचेन धनसंचयः ।
पितृवत्पालयेद्वैश्यो युक्तः सर्वान्पशूनिः ॥७॥
शूद्र एतान्परिचरेत् त्रीन्वर्णाननुपूर्वशः ।
संचयांश्च न कुर्वीत जातु शूद्रः कथंचन ॥८॥

---

(१) सर्व-वर्णानां के-के धर्माः ? चातुर्वर्ण्यस्य च के-के पृथक् धर्माः ? चातुर्वर्ण्याश्रमाणां च के धर्माः । राजधर्माः च के मताः ? (२) अक्रोधः—न क्रोधः । स्वेषु दारेषु स्वकीयासु स्त्रीषु । प्रजनः संतानोत्पत्तिः । शौचं शुद्धता । (३) यो ब्राह्मणस्य धर्मः अस्ति । तं धर्मं ते तुभ्यं वक्ष्यामि कथयिष्यामि वदिष्यामि वा । (४) दमः इन्द्रियदमनम् । पुरातनं सनातनम् । स्वाध्यायस्य वेदस्य अभ्यसनं अध्ययनम् । (५) दद्यात् दानं कर्तव्यम् । न याचेत, याचना न कर्तव्या ।

दस्यूनां चौरादीनां दुष्टानां वधः दस्युवधः । (७) धनस्य संचयः संग्रहः धनसंचयः । वैश्यः सर्वान् पशून् सह युक्तः स्वकीयान् निजान् पशून् यथा पिता स्वपुत्रान् पालयति तथा पालयेत् । (८) एतान् त्रिवर्णान् शूद्रः विनयेन परिचरेत् । संचयान् धनस्य संचयान् कदापि शूद्रः न कुर्वीत ।

अवश्य भरणीयो हि वर्णानां शूद्र उच्यते ।
छात्र वेष्टनमौशीरमुपानद्व्यजनानि च ॥९॥
यातयामानि देयानि शूद्राय परिचारिणे ।
देयः पिण्डोऽनपत्याय भर्तव्यौ वृद्धदुर्बलौ ॥१०॥
स्वाहाकार वषट्कारौ मन्त्रः शूद्रे न विद्यते ।
तस्माच्छूद्रः पाकयज्ञैर्यजेताव्रतवान्स्वयम् ॥११॥

पाठ अठतीसवां

गण १ ला । परस्मैपद ।

(१) गल् (भक्षणे स्रावे च)=खाना और गलना—गलति ।
(२) गुञ्ज् (अव्यक्ते शब्दे)=अस्पष्ट शब्द करना—गुञ्जति ।
(३) गुह (संवरणे)=गुप्त रखना, ढाँपना—गूहति ।
(४) चन्द् (आल्हादे दीप्तौ च)=खुश होना, प्रकाशना—चन्दति ।
(५) चम् (अदने)=भक्षण करना—चमति ।
(६) चर् (गतौ)=जाना—चरति ।
(७) चर्च् (परिभाषणे)=शास्त्रार्थ करना—चलति ।
(८) चर्व् (अदने)=चबाना—चर्वति ।
(९) चल् (कम्पने)=कांपना, हिलना—चलति ।
(१०) चप् (भक्षणे)=खाना—चपति ।
(११) चिल्ल्(शैथिल्ये)=ढीला होना—चिल्लति ।
(१२) चुम्ब् (वक्त्र संयोगे)=चुम्बन करना, चूमना—चुम्बति ।
(१३) चूष् (पाने)=पीना—चूषति ।

(१४) जप् (व्यक्तायां वाचि मानसे च)=जपना,—ध्यान से जपना—जपति ।

(१५) जम् (अदने)=खाना—जमति ।

(१६) जल्प् (व्यक्तायाँ वाचि)=बोलना—जल्पति ।

(१७) जिन्व् (प्रीणने)=खुश होना—जिन्वति ।

उक्त धातुओं के कुछ रूप

सः गलति ।	तौ गलतः ।	ते गलन्ति ।
त्वं गुंजसि ।	युवां गुन्जथः	यूयं गुजथ ।
अहं चन्दामि ।	आवां चन्दावः ।	वयं चन्दामः ।
अहं जमामि ।	आवां जमावः ।	वयं जमामः ।
त्वं चरसि ।	युवां चरथः ।	यूयं चरथः ।
सः चर्चति	तौ चर्चतः ।	ते चर्चन्ति ।
सः चर्वति ।	तो चर्वतः ।	ते चर्वन्ति ।
त्वं चलसि ।	युवां चलथः ।	यूयं चलथः ।
अहं चपामि ।	आवां चपावः ।	वयं चपामः ।
अहं चिल्लामि ।	आवां चिल्लावः ।	वयं चिल्लामः ।
त्वं चुम्बसि ।	युवां चुम्बथः ।	यूयं चुम्बथ ।
सः चूपति ।	तौ चूपतः ।	ते चूपन्ति ।
अहं जपामि ।	आवां जपावः ।	वयं जपामः ।
त्वं जमसि ।	युवां जमथः ।	यूयं जमथ ।
सः जल्पति ।	तो जल्पतः ।	ते जल्पन्ति ।
त्वं जिन्वसि ।	युवां जिन्वथः ।	यूयं जिन्वथ ।

कोकिलः मधुरं गुंजति । शृणु ।

तत्र वृक्षे द्वौ कोकिलौ गुंजतः ।

अत्र द्वौ ब्राह्मणौ जपतः ।

त्वं किमर्थं जल्पसि।

स सर्वं गूहति

संस्कृत में परस्मैपद और आत्मनेपद इस नाम के दो पद हैं। इनका विशेष विचार आगे किया जायगा। इस समय तक धातु परस्मैपद के ही दिये हैं।

परस्मैपद—गच्छति, वदति, करोति, भवति।

आत्मनेपद—एधते, ईक्षते, वदते, भाषते।

आत्मनेपद के धातुओं के लिये 'ते' अन्त में प्रत्यय लगता है और परस्मैपद के अन्त में 'ति' लगता है। सामान्यत: आप इस समय इतना ही फर्क समझ लीजिए। आगे जाकर आपको विशेष मालूम हो जायगा।

वर्तमान काल

परस्मैपद के लिये प्रत्यय।

		एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	...	ति	त:	न्ति
मध्यम पुरुष	...	सि	थ:	थ
उत्तम पुरुष	...	मि	व:	म:

ये प्रत्यय किस प्रकार लगते हैं, इसका ज्ञान निम्न रूप देखने से हो सकता है:—

गच्छ–ति	गच्छ–त:	गच्छ–न्ति
गच्छ–सि	गच्छ–थ:	गच्छ–थ
गच्छा–मि	गच्छा–व:	गच्छा–म:

वद–ति	वद–त:	वद–न्ति
वद–सि	वद–थ:	वद–थ

उत्तम पुरुष के प्रत्ययों से पहिले अ के स्थान पर आ होता है। जैसे—गच्छामि, वदामि, जल्पामि, जपामि, तपामि इत्यादि।

उक्त प्रत्यय लगाकर सब धातुओं के रूप कीजिए। प्रत्येक धातु के सब रूप लिखकर रखने चाहिएँ। लिखने में आप भूल करेंगे तो सुधारने में कठिनता होगी इसलिये बड़ी सावधानी के साथ रूप लिखने चाहिएँ। रूप लिखने का प्रकार नीचे दिया है :—

जीव—(प्राण धारणे)।=जीता रहना, जीना

परस्मैपद। वर्तमान काल, गण १ला।

उत्तम पुरुष

१ अहं जीवामि—मैं जीता हूँ।
२ आवां जीवावः—हम दोनों जीते हैं।
३ वयं जीवामः—हम सब जीते हैं।

मध्यम पुरुष

१ त्वं जीवसि—तू जीता है।
२ युवां जीवथः—तुम दोनों जीते
३ यूयं जीवथ—तुम सब जीते हो।

प्रथम पुरुष

१ सः जीवति—वह जीता है।
२ तौ जीवतः—वे दोनों जीते हैं।
३ ते जीवन्ति—वे सब जीते हैं।

इस प्रकार सब धातुओं के रूप लिखकर [illegible] चाहिएँ। [illegible] का अभ्यास करने के लिए [illegible]

होगी । आप पिछला न भूलेंगे तो अच्छा होगा, नहीं तो आगे का अभ्यास होना असम्भव हो जाएगा ।

जैसा कि पहिले कहा जा चुका है कि काल तीन होते हैं। (१) वर्तमान काल, (२) भूतकाल, (३) भविष्य काल। गत समय को भूतकाल कहते हैं, जो चल रहा है वह वर्तमान काल है और जो आने वाला है वह भविष्य काल है ।

वर्तमानकाल—स जप-ति=वह जप करता है ।

भूतकाल—स अजप-त्=उसने जप किया।

भविष्यकाल—स: जपिष्यति=वह जप करेगा ।

इससे तीनों कालों की कल्पना आपको हो सकती है। वर्तमान काल के प्रत्ययों के पूर्व 'ष्य' लगाने से भविष्य काल बनता है। जैसे देखिए :—

जपिष्यति	जपिष्यत:	जपिष्यन्ति
जपिष्यसि	जपिष्यथ:	जपिष्यथ
जपिष्यामि	जपिष्याव:	जपिष्याम:
*गमिष्यति	गमिष्यत:	गमिष्यन्ति
गमिष्यसि	गमिष्यथ:	गमिष्यथ
गमिष्यामि	गमिष्याव:	गमिष्याम:
चलिष्यति	चलिष्यत:	चलिष्यन्ति
चलिष्यसि	चलिष्यथ:	चलिष्यथ
चलिष्यामि	चलिष्याव:	चलिष्याम:

इसी प्रकार सब धातुओं के रूप आप आसानी से कर सकते हैं। इस भविष्य काल के रूप बनाना कोई कठिन नहीं है ।

*भविष्य काल में गम धातु के लिये गच्छ आदेश नहीं होता।

वदनं—मुँह
अनुजग्मतुः—पीछे से जाते रहे
सलिलं—जल
ददामि—देता हूँ
क्षुत्पिपासे—भूख और प्यास
संपन्न—युक्त
शरत्कालीन—शरद् ऋतु का
दिवाकर—सूर्य्य
इक्ष्वाकु—कुल का नाम
दारुण—भयानक
नाग—हाथी, सांप
शक्रः—इन्द्र
आवृत्य—घेर कर
निष्कंटकं—निरुपद्रव
नृशंस—बुरा, निंद्य
अनृशंस—स्तुत्य
बबंध—बांध ली
ज्या-घोष—धनुष की डोरी की ध्वनि
क्रोधान्धा—क्रोध से अन्धा
अशनि—बिजली
पतन्ती—गिरने वाली
शर—बाण
पपात—गिर पड़ी
ममार—मर गई
नादयन्—गर्जना करता हुआ
अकरोत्—किया
रजोमेघ—धूलि का बादल
विमोहित—भ्रमित किया
विक्रान्ता—भयानक
उरसि—छाती में
विदारयांचकार—तोड़ लिया

समास

१ विगतचेतनः—विगता चेतना यस्य सः ।
२ प्रहृष्टवदनः—प्रहृष्टं वदनं यस्य सः ।
३ विद्यासम्पन्नः—विद्यया संपन्नः ।
४ रजोमेघः—रजसः मेघः ।
५ प्रजारक्षणकारणात्—प्रजायाः रक्षणं प्रजारक्षणम् तस्य कारणात् ।

संक्षिप्त-वाल्मीकि-रामायणे बालकाण्डम्

द्वितीयः खण्डः

पुत्रं रामचन्द्रं मुनिना याच्यमानं श्रुत्वा राजा दशरथस्तावद् विगतचेतन इव मुहूर्तं बभूव। विश्वामित्रः पुनरुवाच। पुनः पुनरपि व्रतं सम्पाद्य समाप्तिसमय एवैतौ राक्षसौ वेदिं मांसरुधिरेण अभिवर्षतः। रामस्तु स्वेन दिव्येन तेजसा राक्षसानां विनाशने शक्तः। अस्मै श्रेयश्च बहुरूपं प्रदास्यामि। यज्ञस्य दशरात्रं हि राजीवलोचनं रामं दातुमर्हसि इति। दशरथस्तु प्रत्युवाच। ऊनषोडशवर्षो मे रामः। न योग्यो राजीवलोचनो राक्षसाम्। राक्षसा हि कूटयुद्धाः। अपि च नैव जीवामि रामस्य वियोगे मुहूर्तमपि। कालोपमौ च मारीच-सुबाहू। अतो न दास्यामि पुत्रकम् इति। कौशिकस्तु प्रत्युवाच सक्रोधम्। अर्थं प्रतिश्रुत्यापि संप्रति प्रतिज्ञां हातुमिच्छसि। अयुक्तोऽयं विपर्ययो राघवाणां कुलस्य इति। एवं विश्वामित्रस्य क्रोधेन भीतो दशरथः, वसिष्ठेन च संमन्त्र्य प्रोत्साहितः। ततः प्रहृष्टवदनः सलक्ष्मणं राममाह्वयत् कुशिकपुत्राय तौ ददौ च। तावपि रामलक्ष्मणौ धनुषी गृहीत्वा पितामहसदृशं विश्वामित्रमश्विनोपमौ कुमारावनुजग्मतुः।

अर्धयोजनं गत्वा सरयूनदीतीरे विश्वामित्रो राममुवाच—वत्स, सलिलं गृहाण। नानाविधान् मंत्रान् विद्ये च बलातिबले नाम तुभ्यं ददामि। आभ्यां विद्याभ्यां ते क्षुत्पिपासे अपि न भविष्यतः इति। रामोऽपि जलं स्पृष्ट्वा प्रहृष्टवदनः प्रतिगृहीतवान् एतान् मन्त्रान्। एवं विद्यासंपन्नो रामः शोभितो यथा शरत्कालीनो [illegible] [illegible] न तौ वीरौ राजपुत्रौ। ततो गङ्गा-सरयू-संगमे पुण्यमाश्रमपदमेकं ददृशाते। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] विश्वामित्रं [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible]

भवतु इति। विश्वामित्रश्च तान् ऋषीन् पूजयामास। पश्चाच्च स राजपुत्राभ्यां सहितः गङ्गां ततार। अतिधार्मिकौ च तौ राजपुत्रौ दक्षिणं तीरमासाद्य नदीभ्यां प्रणामं कृतवन्तौ। ततो घोर सङ्काशं वनं दृष्ट्वा स इक्ष्वाकु-नन्दनो रामो मुनिश्रेष्ठं विश्वामित्रं पप्रच्छ। अहो सश्रीकं वनम्। किं परम् अतिदारुणम्।

विश्वामित्र उवाच। वीरश्रेष्ठ अत्र खलु पुरा धनधान्य संपन्नौ स्फीतौ जनपदावेव सुचिरम् आस्ताम्। कालान्तरे तु ताड़का नाम नागसहस्रबलं धारयन्ती कामरूपिणी राक्षसी बभूव। सा च सुन्दस्य भार्या। पराक्रमेण शक्रसदृशो मारीचस्तु तस्याः पुत्रः। एवंविधा तु साऽधुना पन्थानम् अत्यर्धयोजनम् आवृत्य तिष्ठति। अतएव च वनमेतद् गन्तव्यमस्माभिः बाहुबलेन, त्वम् इमां दुष्टचारिणीं हन्तुम् अर्हसि। ममाज्ञया निष्कण्टकम् इमं देशं कुरु। तस्या हि कारणाद् ईदृशमपि देशं न कश्चिद् आगच्छति। अतः स्त्रीवधेऽपि मैव घृणां कुरु। चतुर्वर्ण्यस्य हितार्थं हि प्रजारक्षण-कारणाद् राजसूनुना नृशंसं वा अनृशंसं वा कर्म कर्तव्यम् इति। एवमुक्तो रामचन्द्रो धनुर्धरो धनुर्मध्ये मुष्टिं बबन्ध। शब्देन दिशो नादयन् तीव्र ज्याघोषं चाकरोत्। राक्षसाः तु तदा क्रोधान्धा तत्र प्राप्ताः। राघवौ चोभौ तथा मुहूर्तं रजोमेघेन विमोहितौ। किंतु ताम् अशनीमिव वेगेन पतन्तीमपि विक्रान्तां शरेण रामः उरसि विदारयांचकार। सा पपात ममार च।

पाठ चालीसवां

अब आप परस्मैपदी प्रथम गण के धातुओं के वर्तमान और भविष्य के रूप स्वयं बना सकते हैं। संस्कृत में धातुओं के दस गण हैं। जिनमें से पहले गण के कई धातु दिए जा चुके हैं। अतः अन्य गणों के धातुओं के साथ आपका परिचय करा दिया

३ तप (संतापे)=तपना—तपति, तप्स्यति। (इस धातु का 'तपिष्यति' नहीं होता। स्मरण रखिए।)

४ तर्ज (भर्त्सने)=निंदा करना, धमकाना—तर्जति, तर्जिष्यति।

५ तुद् (व्यथने)=दुःख होना—तुदति, तोत्स्यति। (इस का भविष्यकाल का रूप स्मरण रखने योग्य है।)

६ तूड् (तोड़ने अनादरे च)=तोड़ना, अनादर करना—तूडति, तूडिष्यति।

७ तूष् (तुष्टौ)=संतुष्ट होना—तूषति, तूषिष्यति।

८ तृ (तर्) (प्लवण तरणयोः)=तैरना, पार होना—तरति, तरिष्यति। तरिष्यामि।

९ तेज् (निशाने पालने च)=तेज करना, पालन करना—तेजति, तेजिष्यति।

१० तोड् (अनादर)=निरादर करना—तोडति, तोडिष्यति।

११ त्यज् (हानौ)=त्यागना—त्यजति, त्यक्ष्यति। (इस धातु का भविष्य का रूप स्मरण रखने योग्य है)।

१२ त्वक्ष् (तनूकरणे)=छीलना—त्वक्षति, त्वक्षिष्यति।

१३ दल् (विदारणे)=तोड़ना, फटना—दलति, दलिष्यति।

१४ दह् (भस्मीकरणे)=जलाना—दहति, धक्षति। (इस धातु का भविष्य का रूप स्मरण रहे)।

१५ दा (लवने)=काटना—दाति, दास्यति।

१६ दृश् (पश्य) (प्रेक्षणे)=देखना—पश्यति, पश्यतः, पश्यन्ति। द्रक्ष्यति, द्रक्ष्यतः, द्रक्ष्यन्ति। (इस धातु के रूप स्मरण रखने योग्य हैं।)

१७ दृह् (वृद्धौ)=बढ़ना—दृंहति, दृंहिष्यति ।

१८ दृ (दर्) (भय)=डरना—दरति, दरिष्यति ।

१९ धुर्वी (हिंसायाम्)=हिंसा करना—धुर्वति, धूर्विष्यति ।

२० धृ (धर्) (धारणे)=धारण करना—धरति, धरिष्यति ।

२१ ध्वन् (शब्दे)=शब्द करना—ध्वनति, ध्वनिष्यति ।

२२ नट् (नृतौ)=नाचना, नाटक करना—नटति, नटिष्यति ।

२३ नद् (अव्यक्ते शब्दे)=अस्पष्ट शब्द करना—नदति,

२४ नन्द् (समृद्धौ)=सुखी होना—नन्दति, नन्दिष्यति ।

२५ नम् (प्रह्वत्वे शब्दे च)=नमन करना, शब्द करना—नमति:
नम्स्यति । (इस धातु का
भविष्य का रूप स्मरण
रखना चाहिए ।)

२६ निन्द (कुत्सायाम्)=निन्दा करना—निन्दिष्यति ।

२७ नी (नय्) (प्रापणे)=ले जाना—नयति, नेष्यति ।

२८ पच् (पाके)=पकाना—पचति, पक्ष्यति, पक्ष्यसि, पक्ष्यामि ।
(इसके भविष्य के रूप
देखने योग्य हैं ।

२९ पठ् (वाचने)=पढ़ना—पठति, पठिष्यति ।

३० पत् (गतौ)=गिरना—पतति, पतिष्यति ।

३१ पा (पाने)=पीना—पिबति, पिबसि, पिबामि ।
पास्यति, पास्यसि, पास्यामि ।
(इन रूप स्मरण रखिये ।)

वाक्य

१ [illegible] । [illegible] है ।

२ [illegible] । [illegible] है ।

३	वानरौ तरतः ।	दो बन्दर तैरते हैं ।
४	महिषास्तरन्ति ।	भैंसें तैरती हैं ।
५	स शस्त्रं तेजिष्यति ।	वह शस्त्र तेज़ करेगा ।
६	तौ त्यजतः ।	वे दोनों छोड़ते हैं ।
७	अग्निः दहति ।	आग जलाती है ।
८	बालकाः पश्यन्ति ।	लड़के देखते हैं ।
९	वयं द्रक्ष्यामः ।	हम सब देखेंगे ।
१०	सूर्यः एकाकी चरति ।	सूर्य अकेला चलता है ।
११	शृणु ! कथं जलं नदति ।	सुन ! किस प्रकार जल शब्द करता है
१२	परमेश्वरं नमामि ।	परमेश्वर को नमन करता हूँ ।
१३	स तत्र नेष्यति ।	वह वहाँ ले जायगा ।
१४	देवदत्तः पचति ।	देवदत्त पकाता है ।
१५	बालकः पठति ।	लड़का पढ़ता है ।
१६	मम पुत्रौ पठतः ।	मेरे दो बालक पढ़ते हैं ।

मनुष्यौ वने वृक्षं तक्षतः । कः तत्र प्रातःकाले सन्ध्योपासनां करोति ? अहं नित्यं, नदीतीरं गत्वा तत्र सन्ध्योपासनां करोमि । इदानीं को नदीं तरिष्यति ? विश्वामित्र-यज्ञदत्तौ तरिष्यतः । नहि । सर्वे मनुष्यास्तरिष्यन्ति । त्वं तं किमर्थं त्यजसि ? गृहे अग्निर्ज्वलति । गृहाद् बहिः अग्निः न ज्वलिष्यति । इदानीं त्वां को द्रक्ष्यति । सर्वेऽपि अत्रत्याः द्रक्ष्यन्ति । मनुष्याः पश्यन्ति ।

मनुष्यौ पश्यतः । यूयं पश्यथ । यः जागर्ति स एव गच्छतु । यज्ञमित्रो धर्मं त्यक्त्वा अधर्म्यं कर्म करोति । सः चलति । अहं त्वया सह चलिष्यामि । नटो नटति । इदानीं नाटकस्य समयः । त्वं आगच्छ इक्षुदण्डरसं पिब । स्व नगरं याहि । स कन्दान् पचति । तौ कन्दान् पचतः । ते सर्वेऽपि कन्दान् पचन्ति ।

पाठ इकतालीसवां

शब्द

भैक्ष्यचर्यं—भिक्षा मांग कर भोजन करना
गार्हस्थ्यं—गृहस्थाश्रम
स-दार—स्त्री समेत
अ-दार—स्त्री रहित
समधीत्य—उत्तम प्रकार से अध्ययन करके
धर्मवित्—धर्म जानने वाला
अक्षर—अविनाशी ब्रह्म
प्रशस्त—स्तुत्य
मोक्षिणः—मोक्ष को जाननेवाले
प्रधान—मुख्य
त्याग—दान
पुराण—सनातन
महाश्रम—महान् आश्रम
प्राहुः—कहते हैं
द्विजातित्वं—द्विजपन
संयत—संयमी
कृतकृत्य—जिसके कृत्य परिपूर्ण हो चुके हैं
ऊर्ध्वरेताः—जिसके वीर्य का पतन नहीं होता
प्रव्रजित्वा—संन्यास लेकर
स्वधाकारः—अन्नयज्ञः
रति—रमना
सेवितव्य—सेवन करने योग्य
पाल्यमान—पालने योग्य
अग्र्यं—मुख्य

समास

१ सदारः—दारैः सहितः
२ अदारः—न विद्यन्ते दाराः यस्य स अदारः ।
३ संयतेन्द्रियः—संयतानि इन्द्रियाणि यस्य सः ।
४ कृतकृत्यः—कृतं कृत्यं येन सः ।
५ राजधर्मप्रधानाः—राज्ञः धर्मः राजधर्मः, राजधर्मः प्रधानः यस्य ते राजधर्मप्रधानाः ।

वाचनपाठः । महाभारतम्

वानप्रस्थं वैक्ष्यचर्यं गार्हस्थ्यं च महाश्रमम् ।
ब्रह्मचर्याश्रमं प्राहुश्चतुर्थं ब्रह्मणैर्वृतम् ॥१॥
जटा-धर-संस्कारं द्विजातित्वं मयाप्य च ।
आधानादीनि कर्माणि प्राप्य वेदमधीत्य च ॥२॥
सदारोवाऽप्यदारोवा आत्मवान्संयतेन्द्रियः ।
वानप्रस्थाश्रमं गच्छेत्कृतकृत्यो गृहाश्रमात् ॥३॥
तत्रारण्यक शास्त्राणि समधीत्य स धर्मवित् ।
ऊर्ध्वरेताःप्रव्रजित्वा गच्छत्यक्षरसात्मताम् ॥४॥
सत्यार्जवं चातिथिपूजनं च ।
धर्मस्तथाऽर्थश्च रतिः स्वदारैः ॥
निषेवितव्यानि सुखानि लोके ।
ह्यस्मिन्परेचैव मतं ममैतत् ॥५॥
सर्वे धर्माः राजधर्म प्रधानाः ।
सर्ववर्णा पाल्यमानाः भवन्ति ॥

---

(२) जटाधारण संस्कारं ब्रह्मचर्या रूपं कृत्वा द्विजातित्वं आवाप्य प्राप्य च आधानादीनि यज्ञ कर्माणि प्राप्य कृत्वा वेदं च अधीत्य, वेदस्य अध्ययनं कृत्वा (३) सदारः स्त्री युक्तः वा अदारः स्त्री रहितः वा आत्मवान् आत्मज्ञानवान् संयतेन्द्रियः वशी वानप्रस्थाश्रमं गच्छेत् । गृहस्थाश्रमात् कृतकृत्यः भूत्वा, गृहस्थाश्रमस्य सर्व कर्म यथायोग्यं कृत्वा (४) तत्र वानप्रस्थाश्रमे आरण्यक शास्त्राणि समधीत्य सम्यक् अधीत्य धर्मवित् धर्मज्ञः स पुरुषः ऊर्ध्वरेताः भूत्वा प्रव्रजित्वा अक्षरसात्मतां परमात्मसायुज्यतां गच्छति ।

(५) हे किमात्मने ! हे राजन् ! चरित ब्रह्मचर्यस्य मांक्षिणः

धातु गण १ला। परस्मैपद

१ फल् (निष्पत्तौ)=फल उत्पन्न होना—फलति, फलामि। फलिष्यति, फलिष्यामि।

२ फुल्ल् (विकसने)=खुलना, फूलना—फुल्लति, फुल्लामि। फुल्लिष्यति, फुल्लिष्यामि।

३ बुक्क् (भाषणे)=भौंकना बोलना—बुक्कति, बुक्कामि। बुक्किष्यति, बुक्किष्यामि।

४ बुध् (बोध) (बोधने)=जानना—बोधति, बोधामि। बोधिष्यति, बोधिष्यामि।

५ बृह् (बर्ह्) (वृद्धौ)=बढ़ना—बर्हति, बर्हामि। बर्हिष्यति, बर्हिष्यामि।

६ बृंह् (वृद्धौ शब्दे च)=बढ़ना, शब्द करना—बृंहति, बृंहामि। बृंहिष्यति, बृंहिष्यामि।

७ भक्ष् (अदने)=खाना—भक्षति, भक्षामि। भक्षिष्यति, भक्षिष्यामि।

८ भज् (सेवायां)=सेवा करना—भजति, भजामि। भक्ष्यति। भक्ष्यामि।

९ भण् (शब्दे)=बोलना—भणति, भणामि। भणिष्यति, भणिष्यामि।

१० भष् (भाषणे, श्व रवे)=अपमान करना, कुत्ते का भौंकना—भषति, भषामि। भषिष्यति, भषिष्यामि॥

११ भू (सत्तायाम्)=होना—भवति, भविष्यति॥

१२ भूष् (अलंकारे)=सजाना, अलंकार डालना—भूषति भूषामि। भूषिष्यति, भूषिष्यामि॥

१३ भृ (भर) (भरणे)=भरना—भरति, भरामि। भरिष्यति, भरिष्यामि।

१४ भ्रम् (चलने)=चलना—भ्रमति, भ्रमामि। भ्रमिष्यति, भ्रमिष्यामि।

१५ मण्ड् (भूषायाम्)=सुशोभित करना—मण्डति, मण्डामि। मण्डिष्यति, मण्डिष्यामि।

१६ मथ् (विलोडना)=मथना, विलोना—मथति मथामि॥ मथिष्यति, मथिष्यामि।

१७ मन्थ् (विलोडने)=मन्थन करना—मन्थति, मन्थामि। मन्थिष्यति, मन्थिष्यामि।

१८ मह् (पूजायाम्)=सम्मान करना—महति महामि। महिष्यति, महिष्यामि।

१९ मार्ग् (अन्वेषणे)=ढूंढना—मार्गति, मार्गामि। मार्गिष्यति, मार्गिष्यामि।

२० मुड् (मोड) (मर्दने)=मोड़ना तोड़ना—मोडति मोडामि। मोडिष्यति, मोडिष्यामि।

२१ मुण्ड् (खण्डने)=हजामत करना—मुण्डति, मुण्डामि। मुण्डिष्यति, मुण्डिष्यामि।

२२ मूर्छ् (मोहे)=बेहोश होना—मूर्छति मूर्छामि। मूर्छिष्यति, मूर्छिष्यामि।

२३ मुष् (स्तेये)=चोरी करना—मुषति, मुषामि। मुषिष्यति, मुषिष्यामि।

२४ म्लेच्छ् (अव्यक्ते शब्दे)=अशुद्ध [illegible] बोलना—म्लेच्छति, म्लेच्छामि। म्लेच्छिष्यति, म्लेच्छिष्यामि।

२५ यज् (पूजायाम्)=यज्ञ करना—यजति, यजामि
यक्ष्यति यक्ष्यामि ॥ (इसका भविष्य काल
स्मरण रखने योग्य है ।

वाक्य

१ स म्लेक्षति ।	वह अशुद्ध बोलता है ।
२ त्वं न म्लेक्षसि ।	तू अशुद्ध नहीं बोलता है ।
३ तौ मूषतः	वे दोनों चोरी करते हैं ।
४ युवां न मूषथः ।	तुम दोनों चोरी नहीं करते ।
५ आवां यजाव ।	हम दोनों यज्ञ करते हैं ।
६ रामलक्ष्मणौ यजतः	राम और लक्ष्मण हवन करते हैं ।
७ तत्र स्तेना मूषन्ति ।	वहां बहुत चोर चोरी करते हैं ।
८ स मूर्च्छति ।	वह बेहोश होता है ।
९ युवां न मूर्च्छथः	तुम दोनों बेहोश नहीं होते ।
१० रात्रौ ते मूर्च्छन्ति	रात्रि में वे बेहोश होते हैं ।
११ अहं त्वां मुण्डामि ।	मैं तुझे मूंडता हूँ ।
१२ तौ नापितौ मुण्डतः ।	वे दोनों नाई हजामत बना रहे हैं ।
१३ तत्र त्रयोऽपि नापिताः मुण्डन्ति ।	वहां तीनों नाई हजामत बना रहे हैं ।
१४ स तत्र काष्ठं मोडति	वह वहां लकड़ी तोड़ता है ।
१५ अहमश्वं मार्गामि ।	मैं घोड़े को ढूंढ़ता हूँ ।
१६ स महिष्यति ।	वह सम्मानित होगा ।
१७ त्वं दधि मथसि किम् ?	क्या तू दही मथता है ?
१८ नहि, अहं जलमेव मथामि ।	नहीं, मैं जल ही मथता हूं ।
१९ स स्वीकीयं शरीरं मण्डति ।	वह अपना शरीर सुशोभित करता है ।

२० तौ अश्वं मण्डतः — वे दोनों घोड़े को सुशोभित करते हैं।

वाक्य

अहं भ्रमामि। जलं कुम्भेन भरति। त्वं शरीरं भूषसि। तौ भ्रमतः। ते सर्वेपि शिष्याः गुरवश्च तत्र पर्वते भ्रमन्ति। अहं इदानीं नैव भ्रमामि। सूर्यस्य प्रकाशः भवति। स किं भणति। त्वं किं न भक्षति? तौ ईश्वरं भजतः। आवां न भजावः। ते सर्वे ईश्वरं भजन्ति किम्? त्वं गां कदा भूषयिष्यसि? आवां अश्वौ भूषयिष्यावः। त्वं तं एवं भणसि। स वृक्ष इदानीं फलति। ते वृक्षा इदानीं—किमर्थं न फलन्ति? तौ वृक्षौ इदानीमेव फलतः। वृक्षः फुल्लति। वृक्षौ फुल्लतः। उद्याने सायंकाले सर्वे वृक्षाः फुल्लन्ति। अहं बोधामि। त्वं बोधसि किम्? कथं स न बोधति? वृक्षः वर्हति। अश्वौ वर्हतः। काकः फलं भक्षति। काकौ फले भक्षतः। काकाः फलानि भक्षन्ति। अश्वाः जलं पिबन्ति। तव पुत्राः बोधन्ति किम्? तौ बोधतः। ते सर्वे न बोधन्ति। अहं श्वः यक्ष्यामि। ते परश्वो यक्ष्यन्ति। युवां कदा यक्ष्यथः

पाठ तैंतालीसवां

गण १ला। परस्मैपद

प्रथम गण परस्मैपद के धातुओं के वर्तमान और भविष्य के रूप सब पाठक स्वयं बना सकते हैं। वर्तमान और भविष्य के प्रत्यय नीचे दिये हैं।

वर्तमान काल के लिये प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	ति	तः	[illegible]

म० पु०……सि थः थ ।
उ० पु०……मि वः मः ।

भविष्यकाल के लिये प्रत्यय

प्र० पु०……स्यति स्यतः स्यन्ति ।
म० पु०……स्यसि स्यथः स्यथ ।
उ० पु०……स्यामि स्यावः त्वामः ।

याच् (यांचायाम्)—मांगना—प्रथम गण

याचति याचतः याचन्ति ।
याचसि याचथः याचथ ।
याचामि याचावः याचामः ।

परस्मैपद । भविष्यकाल

याचिष्यति याचिष्यतः याचिष्यन्ति ।
याचिष्यसि याचिष्यथः याचिष्यथ ।
याचिष्यामि याचिष्यावः याचिष्यामः ।

भविष्यकाल के प्रत्यय लगने के पूर्व धातु के अन्त में 'इ' आती है। 'इ' के पश्चात् आने वाले 'स' का 'ष' होता है। इसलिए 'याचिष्यामि' रूप बनता है। 'पा' धातु का 'पास्यामि' रूप होता है क्योंकि वहाँ 'इ' नहीं है, इसलिए 'स्यामि' का 'ष्यामि' नहीं हुआ।

जिन प्रत्ययों के प्रारम्भ में 'म अथवा व' होता है, उन प्रत्ययों के पूर्व का 'अ' दीर्घ होता है। अर्थात् उसका 'आ' बनता है। जैसा—याचामि, याचावः, याचिष्यामि।

प्रथम गण वर्तमान काल के प्रत्यय लगने के पूर्व धातु के और प्रत्यय के बीच में प्रथम गण का चिन्ह 'अ' लगता है।

—

रक्ष् (पालने)—पालना—गण १ला । परस्मैपद ।

रक्ष्+अ+ति=रक्षति }
रक्ष्+अ+तः=रक्षतः } प्रथम पुरुष ।
रक्ष्+अ+न्ति=रक्षन्ति }

रक्ष्+अ+सि=रक्षसि }
रक्ष्+अ+थः=रक्षथः } मध्यम पुरुष
रक्ष्+अ+थ=रक्षथ }

रक्ष्+आ+मि=रक्षामि }
रक्ष्+आ+वः=रक्षावः } उत्तम पुरुष
रक्ष्+आ+मः=रक्षामः }

'मि, वः, मः' ये प्रत्यय लगने से पूर्व 'अ' का 'आ' हुआ है, इसी प्रकार :

रक्ष्+इ+स्यति=रक्षिष्यति ।

रक्ष्+इ+स्यसि=रक्षिष्यसि ।

रक्ष्+इ+स्यामि=रक्षिष्यामि ।

इनमें 'स्य' को 'ष्य' इकार के कारण हुआ है । 'मि' के पूर्व अकार का आकार उक्त नियम के अनुसार ही हुआ है ।

अब अगले पाठ में भूतकाल के प्रत्यय देने हैं, इसलिये पाठकों को उचित है, कि वे इन रूपों को ठीक स्मरण करें ।

धातु । गण १ला । परस्मैपद ।

१ रट् (परिभाषणे)=पुकारना—रटति, रटिष्यति ।

२ रस् (शब्दे)=बोलना—रसति, रसिष्यति ।

३ रद् (विलेखने)=कुरेदना—रदति, रदिष्यति ।

४ रप् (व्यक्तायां वाचि)=बोलना—रपति, रपिष्यति ।

५ [illegible]

६ [illegible]

७ रुह् (रोह्) (बीजजन्मनि)=बीज से वृक्ष होना—रोहति, रोहामि। रोक्ष्यति। रोक्ष्यामि। इस धातु के भविष्यकाल में स्य के पूर्व 'इ' नहीं होती।

८ लग् (संगे)=लगना—लगति, लगिष्यति।

९ लज् (भर्जने)=भूनना—लजति, लजिष्यति।

१० लड् (विलासे)=खेलना—लडति, लडिष्यति।

११ लप् (व्यक्तायां वाचि)—बोलना—लपति, लपिष्यति।

१२ लल् (विलासे)=खेलना—ललति, ललिष्यति॥

१३ लस् (क्रीडने)=खेलना—लसति, लसिष्यति।

१४ लाज् (भर्त्सने भर्जने च)=दोष देना, भूनना—लाजति।

१५ लुट् (लोट्) (विलोडने)=लुटकना—लोटति, लोटिष्यति।

१६ लुण्ठ् (स्तेये)=चोरना, डाका मारना—लुण्ठति, लुण्ठिष्यति।

१७ लुभ् (लोभ्) (गार्ध्ये)=लोभ करना—लोभति, लोभिष्यति।

१८ वच् (परिभाषे)=बोलना—वचति, वक्ष्यति। (इस धातु में भविष्य में 'इ' नहीं लगती)

१९ वञ्च् (गतौ)=जाना—वञ्चति, वञ्चिष्यति।

२० वद् (व्यक्तायां वाचि)=बोलना—वदति, वदिष्यति।

२१ वन् (शब्दे संभक्तौ च)=बोलना—सम्मान करना, सहाय करना। वनति, वनिष्यति।

२२ वप् (बीजसंताने)=बीज बोना—वपति, वप्स्यति। (इस धातु के लिये 'इ' नहीं लगती।)

२३ वम् (उद्गिरणे)=वमन-कय—करना—वमति, वमिष्यति।

२४ वस् (निवासे)=रहना—वसति, वत्स्यति, वत्स्यामि। वत्स्यसि (इस धातु के भविष्य में स्य इकार के बिना होकर 'स' के स्थान पर 'त' होता है)

२५ वह् (प्रापणे)=ले जाना—वहति, वहसि, वहामि ।
वक्ष्यति, वक्ष्यसि, वक्ष्यामि । (इस धातु के भविष्यकाल के रूप स्मरण रखिए ।)

२६ वाञ्छ् (वांछायाम्)= इच्छा करना—वांछति, वांछसि, वांछामि ।
वांछिष्यति, वांछिष्यसि, वांछिष्यामि ।

२७ वृष् (वर्ष) (सेचने)=बरसना—वर्षति, वर्षिष्यति ।

२८ व्रज् (गतौ)=जाना—व्रजति, व्रजिष्यति ।

वाक्य

१ आवां व्रजावः ।	हम दोनों जाते हैं ।
२ मेघो वर्षति ।	बादल बरसता है ।
३ त्वं किं वांछसि ?	तू क्या चाहता है ?
४ बलीवर्दो रथं वहति ।	बैल गाड़ी ले जाता है ।
५ युवां कुत्र वसथः ?	तुम दोनों कहां रहते हो ?

[illegible] अन्नं वमति । तौ वपतः । ते वहन्ति । वयं वांछामः । तौ [illegible] । ते वदन्ति । त्वं किं वदसि ? स अतीव लोभति । वृक्षा [illegible] । किम् उद्याने वृक्षा न रोहन्ति ? पर्वते बहवो वृक्षा [illegible] । ते सर्वेऽपि पाटलिपुत्र नामके नगरे वत्स्यन्ति । यूयं [illegible] ? वयं वाराणसी क्षेत्रे वत्स्यामः । बलीवर्दा रथान् [illegible] । बलीवर्दौ रथौ वहतः । पुत्राः वदन्ति । पुत्रौ वदतः । [illegible] । तौ वांछतः । अन्नं सर्वे जना वाञ्छन्ति । इदानीं [illegible] अन्नं वांछतः । अहं वदिष्यामि । आवां [illegible] । [illegible] । सर्वे वदिष्यन्ति । यूयं किमर्थं न [illegible] ?

पाठ चौवालीसवां

भूतकाल

प्रथम गण । परस्मैपद

धातु के पूर्व 'अ' लगाकर भूतकाल के प्रत्यय लगाने से भूतकाल बनता है । जैसा :—बुध—जानना । के रूप:—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	अबोधत्	अबोधताम्	अबोधन्
म० पु०	अबोधः	अबोधतम्	अबोधत
उ० पु०	अबोधम्	अबोधाव	अबोधाम

नी—ले जाना

प्र० पु०	अनयत्	अनयताम्	अनयन्
म० पु०	अनयः	अनयतम्	अनयत
उ० पु०	अनयम्	अनयाव	अनयाम

भू—होना

प्र० पु०	अभवत्	अभवताम्	अभवन्
म० पु०	अभवः	अभवतम्	अभवत
उ० पु०	अभवम्	अभवाव	अभवाम

पच—पकाना

प्र० पु०	अपचत्	अपचताम्	अपचन्
म० पु०	अपचः	अपचतम्	अपचत
उ० पु०	अपचम्	अपचाव	अपचाम

पत्—गिरना

पु०	अपतत्	अपतताम्	अपतन्

म० पु०	अपतः	अपततम्	अपतत
उ० पु०	अपतम्	अपताव	अपताम

इन रूपों को देखने से भूतकाल के रूप आप बना सकते हैं।

धातु । प्रथम गण । परस्मैपद

१ सृ (सर्) गतौ—(हिलना)—सरति, सरिष्यति असरत्, असरम्।

२ स्खल्—संचलन।—(ठोकर लगना)—स्खलति, स्खलिष्यति।

३ स्तन्—शब्दे।—(गड़गड़ाना)—स्तनति, स्तनिष्यति, अस्तनत् अस्तनम्।

४ स्था (तिष्ठ्)—गतिनिवृत्तौ।—(ठहरना) तिष्ठति, तिष्ठसि, स्थास्यति, स्थास्यसि, स्थास्यामि। अतिष्ठत्, अतिष्ठः, अतिष्ठम्।

५ स्मृ (स्मर्)—चिन्तायाम्।—(स्मरण करना)—स्मरति स्मरामि। स्मरिष्यति, स्मरिष्यामि। अस्मरत्, अस्मरः, अस्मरम्।

६ हस्—हसने।—(हँसना) हसति। हसिष्यति। अहसत्, अहसः, अहसम्।

७ हृ (हर्)—हरणे।—(हरण करना) हरति, हरसि, हरामि। हरिष्यति, हरिष्यामि। अहरत्, अहरः, अहरम्।

८ [illegible]—शब्दे।—(बोलना)—[illegible], [illegible], [illegible]।

वाक्य

१ [illegible]। [illegible]।

२ [illegible]। [illegible]।

३ मेघः स्तनिष्यति । बादल गरजेगा ।
४ अहं तत्राऽतिष्ठम् । मैं वहां खड़ा था ।
५ तौ तत्राऽतिष्ठताम् । वे दो वहां खड़े थे ।
६ वयं अत्र अतिष्ठामः । हम यहां खड़े रहते हैं ।
७ त्वं तत्काव्यं स्मरसि किम् ? क्या तू उस काव्य को याद करता है ?
८ अहं न स्मरामि । मुझे याद तक नहीं ।
९ तौ स्मरतः । वे दोनों याद करते हैं ।
१० स किमर्थं हसति वह किस लिये हसता है ?
११ चोरो धनं हरति । चोर धन हरता है ।

विष्णुशर्मा अभणत् । विष्णुशर्मा बलीवर्दं तत्राऽनयत् । वृक्षे पक्षिणोऽकूजन् । अकूजन् पक्षिणस्तत्र । स बालः किमर्थं क्रन्दति । बालाः अक्रीडन् । सर्वे विद्यार्थिनोऽवधनगराद्बहिः अक्रीडन् । अहं तदन्नं नाऽखादम् । अहं नाभक्षम् । कस्तत्र खेलति । सोऽगदत् । अहमगदम् । स बालोऽखनत् । कोऽखनत् तत्र ? मम पुस्तकं राम कुत्र अगूहत् । मृगः चरति । चरति तत्र मृगः । अचरत् तत्र मृगः । अचलत् स वृक्षः । स मंत्रमजपत् । अहं नाऽजपं मंत्रम् । स जल्पिष्यति । त्वं अजल्पः ।

आत्मनेपद

कई धातु परस्मैपद में होते हैं, कई आत्मनेपद में होते हैं और कई ऐसे होते हैं कि जिनके दोनों प्रकार के रूप होते हैं, उनको उभयपद कहते हैं । परस्मैपद वाले प्रथम गण के धातुओं के साथ आपका परिचय हुआ है, अब आत्मनेपद वाले धातुओं के परिचय करना है ।

४ ऊह् (वितर्के)—तर्क करना–ऊहते, ऊहसे, ऊहे ।
५ एज् (दीप्तौ)—प्रकाशना–एजते, एजसे, एजे ।
६ कम्प् (कम्पने)—काँपना–कम्पते, कम्पसे, कम्पे ।
७ कव् (वर्णने)—वर्णन करना–कवते, कवसे, कवे ।
८ काश् (दीप्तौ)—प्रकाशना–काशते, काशसे, काशे ।
९ कु (कव्)—शब्दे—बोलना–कवते, कवसे, कवे ।
१० क्रन्द् (रोदने)—रोना–क्रन्दते, क्रन्दसे, क्रन्दे ।

प्रथम, मध्यम, उत्तम पुरुषों के एकवचन के रूप यहाँ सूचनार्थ दिये हैं । पाठक अन्य रूप बना सकते हैं ।

वाक्य

१ स बोधते परं त्वं न बोधसे ।	वह समझता है परन्तु तू नहीं समझता ।
२ सः वृक्षः एधते ।	वह वृक्ष बढ़ता है ।
३ अहं पचे ।	मैं पकाता हूँ ।
४ आवां पचावहे ।	हम दोनों पका रहे हैं ।
५ वयं पचामहे ।	हम सब पकाते हैं ।
६ तौ अंकेते ।	वे दोनों चिह्न करते है ।
७ ते ईक्षन्ते ।	वे सब देखते हैं ।
८ वृक्षाः कम्पन्ते ।	सब वृक्ष हिलते हैं ।
९ बालाः क्रन्दन्ते ।	सब लड़के चिल्लाते हैं, रोते हैं ।
१० दीपाः प्रकाशन्ते ।	सब दीप प्रकाशते हैं ।

पाठ पैंतालीसवां

प्रथम गण। आत्मनेपद

प्रत्यय

	एक वचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथम पुरुष	ते	इते	अन्ते
मध्यम पुरुष	से	इथे	ध्वे
उत्तम पुरुष	इ	वहे	महे

क्लीव् अधाष्ट्यर्थे। (डरपोक होना)

क्लीव्+अ+ते=क्लीवते

क्लीव्+अ+से=क्लीवसे

क्लीव्+अ+इ=क्लीवे

धातु+प्रथमगण का चिन्ह अ+प्रत्यय–मिलकर क्रियापद वनता है। पाठकगण अब सब आत्मनेपद के धातुओं के वर्तमान काल के रूप कर सकते हैं।

धातु। प्रथमगण। आत्मनेपद

१ क्षमू (सहने)=सहन करना—क्षमते, क्षमसे, क्षमे।

२ क्षुभ् (क्षोभे) (संचलने)=हलचल मचना—क्षोभते, क्षोभसे, क्षोभे

३ खण्ड् (भेदने)=तोड़ना—खण्डते, खण्डसे, खण्डे।

४ कूर्द् (क्रीडायां)=खेलना—कूर्दते, कूर्दसे, कूर्दे।

५ खुर्द् (क्रीडायाम्)=खेलना—खुर्दते, खुर्दसे, खुर्दे।

६ गर्ह् (कुत्सायाम्)=निन्दा करना—गर्हते, गर्हसे, गर्हे।

७ [illegible] ([illegible])=धैर्यवान् होना—[illegible]। [illegible]

प्रथम गण । आत्मनेपद । भविष्यकाल ।

परस्मैपद के समान ही आत्मनेपद वर्तमानकाल के रूपों में (स्य) लगाने से उनका भविष्यकाल बनता है :—

आत्मनेपद भविष्यकाल के प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	स्यते	स्येते	स्यन्ते
म० पु०	स्यसे	स्येथे	स्यध्वे
उ० पु०	स्ये	स्यावहे	स्यामहे

प्रत्यय लगाने के पूर्व बहुत धातुओं को 'इ' लगती है और इकार के कारण सकार का षकार बनता है।

एध् (वृद्धौ)—बढ़ना

एधि-ष्यते	एधि-ष्येते	एधि-ष्यन्ते
एधि-ष्यसे	एधि-ष्येथे	एधि-ष्यध्वे
एधि-ष्ये	एधि-ष्यावहे	एधि-ष्यामहे

जिन धातुओं को 'इ' नहीं लगती, उनके रूप निम्न प्रकार होते हैं :—

पच् (पाके) पकाना

पक्ष्यते	पक्ष्येते	पक्ष्यन्ते
पक्ष्यसे	पक्ष्येथे	पक्ष्यध्वे
पक्ष्ये	पक्ष्यावहे	पक्ष्यामहे

त्रप् (लज्जायाम्)—लज्जित होना

त्रपिष्यते	त्रपिष्येते	त्रपिष्यन्ते
त्रपिष्यसे	त्रपिष्येथे	त्रपिष्यध्वे
त्रपिष्ये	त्रपिष्यावहे	त्रपिष्यामहे

त्रप्स्यते	त्रप्स्येते	त्रप्स्यन्ते
त्रप्स्यसे	त्रप्स्येथे	त्रप्स्यध्वे
त्रप्स्ये	त्रप्स्यावहे	त्रप्स्यामहे

कई धातुओं को 'इ' लगती है, कइयों को नहीं लगती। परन्तु कई ऐसे हैं कि जिनके दोनों प्रकार से रूप होते हैं। 'एध्' धातु को 'इ' लगती है। 'पच्' को नहीं लगती, परन्तु त्रप् के दोनों प्रकार से रूप होते हैं। पाठक गण धातुओं के रूपों को देखकर इसका भेद जान सकते हैं।

धातु। प्रथमगण। आत्मनेपद।

१ त्र (त्राय्) (पालने)=रक्षण करना—त्रायते, त्रायसे, त्राये।
त्रास्यते, त्रास्यसे, त्रास्ये।

२ त्वर् (संभ्रमे)=जल्दी करना=त्वरते, त्वरसे, त्वरे।
त्वरिस्यते, त्वरिस्यसे, त्वरिस्ये।

३ द (दाने)=देना—ददते, ददसे, ददे। ददिस्यते, ददिस्यसे,
ददिस्ये।

४ दध (धारणे)=धारण करना—दधते, दधसे, दधे। दधिष्यते
दधिस्यसे, दधिस्ये।

५ दय् (दानगति रक्षणहिंसादानेषु)=दान, गति रक्षण,
हिंसा स्वीकार करना—दयते,
दयसे, दये। दयिष्यसे, दयिष्ये।

६ दीक्ष् ([illegible]व्रतादिषु)=नियम व्रत आदि पालना—दीक्षते,
दीक्षसे, दीक्षे। दीक्षिष्यते, दीक्षि-
ष्यसे, दीक्षिष्ये।

७ ईक्ष् ([illegible])=देखना—ईक्षते। ईक्षिष्यते।

आत्मनेपद भूतकाल के प्रत्यय

(अ)—त	(अ)—इताम्	(अ)—न्त
(अ)—थाः	(अ)—इथाम्	(अ)—ध्वम्
(अ)—इ	(अ)—वहि	(अ)—महि

पू—पवने (शुद्ध करना)

अ-पवत	अ-पवेताम्	अ-पवन्त
अ-पवथाः	अ-पवेथाम्	अ-पवध्वम्
अ-पवे	अ-पवावहि	अ-पवामहि

इसी प्रकार आत्मनेपद भूतकाल के रूप करने चाहिएँ।

१ प्याय् (वृद्धौ)=बढ़ना—प्यायते, प्यायिष्यते, अप्यायत।
२ प्रथ् (प्रख्याने)=प्रसिद्ध होना—प्रथते, प्रथिष्यते, अप्रथत।
३ प्रेष् (गतौ)=हिलना—प्रेषते, प्रेषिष्यते, अप्रेषत।
४ प्लु (गतौ)=जाना—प्लवते, प्लोष्यते, अप्लवत।
५ बाध् (लोडने)=बाधा डालना—बाधते, बाधिष्यते, अबाधत।
६ भण्ड् (परिभाषणे)=झगड़ना—भण्डते, भण्डिष्यते, अभण्डत।
७ भाष् (व्यक्तायां वाचि)=बोलना—भाषते, भाषिष्यते, अभाषत।
८ भास् (दीप्तौ)=प्रकाशना—भासते, भासिष्यते, अभासत।
९ भिक्ष् (भिक्षायाम्)=भीख मांगना—भिक्षते, भिक्षिष्यते, अभिक्षत।
१० भृजी (भर्जने)=भूनना—भर्जते, भर्जिष्यते, अभर्जत।
११ भ्रंसु (अवस्रंसने)=गिरना—भ्रंसते, भ्रंसिष्यते, अभ्रंसत्।
१२ भ्राज् (दीप्तौ)=चमकना—भ्राजते, भ्राजिष्यते, अभ्राजत।

८ द्युत् (द्योत्) (दीप्तौ)=प्रकाशना—द्युत् (द्योत्) द्योतते, द्योतिष्यते ।

९ ध्वंस् (अवस्रंसने)=नाश होना—ध्वंसते । ध्वंसिष्यते ।

१० नय् (गतौ)जाना—नयते, नयिष्यते ।

११ पञ्च् (व्यक्ती करणे)=स्पष्ट करना—पञ्चते । पञ्चिष्यते ।

पाठ छयालीसवां

प्रथम गण । आत्मनेपद

पण्—व्यवहारे (व्यवहार करना)

वर्त्तमान काल

पणते	पणेते	पणन्ते
पणसे	पणेथे	पणध्वे
पणे	पणावहे	पणामहे

भविष्यकाल

पणिष्यते	पणिष्येते	पणिष्यन्ते
पणिष्यसे	पणिष्येथे	पणिष्यध्वे
पणिष्ये	पणिष्यावहे	पणिष्यामहे

भूतकाल

अपणत	अपणेताम्	अपणन्त
अपणथाः	अपणेथाम्	अपणध्वम्
अपणे	अपणावहि	अपणामहि

भूतकाल में परस्मैपद के समान ही धातु के पूर्व 'अ' लगता और पश्चात् भूतकाल के प्रत्यय लगते हैं ।

आत्मनेपद भूतकाल के प्रत्यय

(अ)—त	(अ)—इताम्	(अ)—न्त
(अ)—थाः	(अ)—इथाम्	(अ)—ध्वम्
(अ)—इ	(अ)—वहि	(अ)—महि

पू—पवने (शुद्ध करना)

अ-पवत	अ-पवेताम्	अ-पवन्त
अ-पवथाः	अ-पवेथाम्	अ-पवध्वम्
अ-पवे	अ-पवावहि	अ-पवामहि

इसी प्रकार आत्मनेपद भूतकाल के रूप करने चाहिएँ।

१ प्याय् (वृद्धौ)=बढ़ना—प्यायते, प्यायिष्यते, अप्यायत।
२ प्रथ् (प्रख्याने)=प्रसिद्ध होना—प्रथते, प्रथिष्यते, अप्रथत।
३ प्रेप् (गतौ)=हिलना—प्रेपते, प्रेपिष्यते, अप्रेपत।
४ प्लु (गतौ)=जाना—प्लवते, प्लोष्यते, अप्लवत।
५ बाध् (लोडने)=बाधा डालना—बाधते, बाधिष्यते, अबाधत।
६ भण्ड् (परिभाषणे)=झगड़ना—भण्डते, भण्डिष्यते, अभण्डत।
७ भाष् (व्यक्तायां वाचि)=बोलना—भाषते, भाषिष्यते, अभाषत।
८ भास् (दीप्तौ)=प्रकाशना—भासते, भासिष्यते, अभासत।
९ भिक्ष् (भिक्षायाम्)=भीख माँगना—भिक्षते, भिक्षिष्यते,

१३ मुद् (मोद्) (हर्षे)=खुश होना—मोदते, मोदिष्यते, अमोदत ।

१४ यत् (प्रयत्ने)=प्रयत्न करना—यतते, यतिष्यते, अयतत,

१५ रभ् (राभस्ये)=प्रारम्भ करना—रभते, रप्स्यते, अरभत

१६ रम् (क्रीडायाम्)=रममाण होना–रमते, रंस्यते, अरमत

१७ राघ् (सामर्थ्ये)=समर्थ होना–राघते, राघिष्यते, अराघत ।

१८ लभ् (प्राप्तौ)=मिलना—लभते, लप्स्यते, अलभत ।

१९ लोक् (दर्शने)=देखना–लोकते, लोकिष्यते, अलोकत ।

वाक्य

१ तौ बाधेते ।	वे दोनों बाधा डालते हैं ।
२ ते सर्वे लोकंते ।	वे सब देखते हैं ।
३ ईदृशं युद्धं लभते ।	इस प्रकार का युद्ध प्राप्त होता है
४ रामः सीतया सह रमते ।	राम सीता के साथ रममाण होता है ।
५ तौ यतेते ।	वे दोनों प्रयत्न करते हैं ।
६ ते प्रा-रभन्ते ।	वे सब प्रारंभ करते हैं ।
७ सूर्य आकाशे भ्राजते ।	सूर्य आकाश में प्रकाशता है ।
८ तौ यती भिक्षेते ।	वे दो यती भीख मांगते हैं ।
९ स तत्र अभिक्षित ।	उसने वहाँ भीख मांगी ।
१० तौ अयतेताम् ।	उन दोनों ने यत्न किया ।
११ ते तत्र अभासन्त ।	वे वहाँ प्रकाशते थे

पाठकों को उचित है कि वे इस[illegible]

[illegible] वाक्य बनाने का यत्न [illegible]

धातु । प्रथमगण । आत्मनेपद

१ वन्द् (अभिवादने)=नमन करना—वन्दते । वन्दिष्यते । अवन्दत ।

२ वर्च् (दीप्तौ)=प्रकाशना—वर्चते । वर्चिष्यते । अवर्चत ।

३ वर्ष् (स्नेहने)=वर्षते । वर्षिष्यते, अवर्षत ।

४ वाहृ (प्रयत्ने)=प्रयत्न करना—वाहते । वाहिष्यते । अवाहत ।

५ वृत् (वर्तने)=होना—वर्तते । वर्तिष्यते, वर्त्स्यते । अवर्तत । (इस धातु के भविष्यकाल में दो रूप होंगे । एक 'इ' के साथ और दूसरा 'इ' के बिना)

६ वृध् (वृद्धौ)=बढ़ना—वर्धते । वर्धिष्यते, वर्त्स्यते । अवर्धत ।

७ वेष्ट् (वेष्टने)=लपेटना—वेष्टते । वेष्टिष्यते, अवेष्टत ।

८ व्यथ् (भयचलनयोः)=डरना, बेचैन होना—व्यथते । व्यथिष्यते । अव्यथत ।

९ शङ्क् (शङ्कायाम्)=संदेह करना—शङ्कते । शङ्किष्यते । अशङ्कत ।

१० आशंस् (इच्छायाम्)=इच्छा करना—आशीर्वाद देना—आशंसते । आशंसिष्यते । आशंसत ।

११ शिक्ष् (विद्योपादाने)=सीखना—शिक्षते । शिक्षिष्यते । अशिक्षत ।

१२ शुभ् (दीप्तौ)=शोभना—शोभते । शोभिष्यते । अशोभत ।

१३ श्लाघ् (कत्थने)=स्तुति करना—श्लाघते । श्लाघिष्यते । अश्लाघत ।

१४ [illegible]

१५ [illegible]

१३ मुद् (मोद्) (हर्षे)=खुश होना—मोदते, मोदिष्यते, अमोदत ।

१४ यत् (प्रयत्ने)=प्रयत्न करना—यतते, यतिष्यते, अयतत,

१५ रभ् (राभस्ये)=प्रारम्भ करना—रभते, रप्स्यते, अरभत ।

१६ रम् (क्रीडायाम्)=रममाण होना–रमते, रंस्यते, अरमत ।

१७ राध् (सामर्थ्ये)=समर्थ होना–राधते, राधिष्यते, अराधत ।

१८ लभ् (प्राप्तौ)=मिलना—लभते, लप्स्यते, अलभत ।

१९ लोक् (दर्शने)=देखना–लोकते, लोकिष्यते, अलोकत ।

वाक्य

१ तौ बाधेते ।	वे दोनों बाधा डालते हैं ।
२ ते सर्वे लोकंते ।	वे सब देखते हैं ।
३ ईदृशं युद्धं लभते ।	इस प्रकार का युद्ध प्राप्त होता है ।
४ रामः सीतया सह रमते ।	राम सीता के साथ रममाण होता है ।
५ तौ यतेते ।	वे दोनों प्रयत्न करते हैं ।
६ ते प्रा-रभन्ते ।	वे सब प्रारंभ करते हैं ।
७ सूर्य आकाशे भ्राजते ।	सूर्य आकाश में प्रकाशता है ।
८ तौ यती भिक्षेते ।	वे दो यती भीख मांगते हैं ।
९ सा तत्र अभिक्षित ।	उसने वहाँ भीख माँगी ।
१० तौ अयतेताम् ।	उन दोनों ने यत्न किया ।
११ ते तत्र अभासन्त ।	वे वहाँ प्रकाशते थे ।

पाठकों को उचित है कि वे इस [illegible]

बनाकर वाक्य बनाने का यत्न करें ।

७ बालकौ शिक्षेते ।	दो लड़के सीखते हैं ।
८ हंसानां मध्ये वको न शोभते	हंसों में बगुला नहीं शोभता ।
९ न व्यर्थं शंकते ।	वह व्यर्थ संदेह करता है ।

पाठ सैंतालीसवां

प्रथमगण । उभयपद

परस्मैपद और आत्मनेपद धातुओं के वर्तमान, भूत और भविष्य-[illegible] के रूप पाठकों को अब विदित हो चुके हैं। अब उभय-[illegible] धातुओं के रूपों के साथ पाठकों का परिचय कराना है। उन [illegible] को उभयपद कहते हैं कि जिनके परस्मैपद के भी रूप होते [illegible] और आत्मनेपद के भी रूप होते हैं। उभयपद का प्रत्येक धातु [illegible] प्रकार से रूप बनाता है।

जैसे :—

नी (प्रापणे)=ले जाना ।

वर्तमानकाल । परस्मैपद ।

नयति	नयतः	नयन्ति
नयसि	नयथः	नयथ
नयामि	नयावः	नयामः

वर्तमानकाल । आत्मनेपद ।

नयते	नयेते	नयन्ते
नयसे	नयेथे	नयध्वे
नये	नयावहे	नयामहे

भविष्यकाल । परस्मैपद ।

नेष्यति	नेष्यत:	नेष्यन्ति
नेष्यसि	नेष्यथ:	नेष्यथ
नेष्यामि	नेष्याव:	नेष्याम:

भविष्यकाल । आत्मनेपद ।

नेष्यते	नेष्येते	नेष्यन्ते
नेष्यसे	नेष्येथे	नेष्यध्वे
नेष्ये	नेष्यावहे	नेष्यामहे

भूतकाल । परस्मैपद ।

अनयत्	अनयेताम्	अनयन्
अनय:	अनयेतम्	अनयत
अनयम्	अनयाव	अनयाम्

भूतकाल । आत्मनेपद ।

अनयत	अनयेताम्	अनयन्त
अनयथ:	अनयेथाम्	अनयध्वम्
अनये	अनयावहि	अनयामहि

इस प्रकार प्रत्येक उभयपद धातु के दोनों प्रकार के रूप बनते हैं। पाठकों को उचित है कि निम्नलिखित सब धातुओं के रूप बनाकर लिखें।

यह 'नी' (प्रापणे) धातु परस्मैपद में दिया है। वास्तव में यह उभयपद का धातु है। उभयपद के धातुओं के रूप परस्मैपद के अनुसार भी होते हैं, इसलिये कई उभयपद के धातु परस्मैपद में [illegible] गए हैं।

११ धृ (धर्) (धारणे)=धारण करना—धरति, धरते। धरिष्यति, धरिष्यते। अधरत्, अधरत।

१२ पच् (पाके)=पकाना—पचति, पचते।

१३ बुध् (बोध्) (बोधने)=जानना—बोधति, बोधते। बोधिष्यति, बोधिष्यते। अबोधत्, अबोधत।

१४ भू (भव्) (प्राप्तौ)=मिलना–भवति, भवते। भविष्यति, भविष्यते। अभवत्, अभवत। (भू-सत्तायां। होना इस अर्थ का धातु केवल परस्मैपद में है। प्राप्ति अर्थ का भू धातु उभयपद है।

१५ भृ (भर्) (भरणे)=भरना—भरति, भरते। भरिष्यति, भरिष्यते। अभरत्, अभरत।

१६ मिध् (मेधायाम्)=बुद्धि-वर्धक कार्य करना—मेधति, मेधते। मेधिष्यति, मेधिष्यते। अमेधत्, अमेधत।

१७ मृष् (मर्ष्)–(तितिक्षायाम्)=सहना–मर्षति, मर्षते। मर्षिष्यति, मर्षिष्यते। अमर्षत्, अमर्षत।

१८ मेथ् (मेधायाम्)=जानना—मेथति, मेथते। मेथिष्यति, मेथिष्यते। अमेथत्, अमेथत।

(मिद्, मिध्, मेद्, मेध्, मिथ्, मेथ् इन धातुओं का 'मेधायां' अर्थ है और इनके रूप उक्त मिध्, मेथ् धातुओं के समान ही होते हैं। मेदति, मेधति, मेथति, इत्यादि।)

१९ यज् (देवपूजा-संगतिकरण-यजन दानेषु)=सत्कार, संगति, हवन और दान करना—यजति, यजते। यक्ष्यति, यक्ष्यते। अयजत्, अयजत।

१० देवदत्तोऽन्नं पचति । देवदत्त अन्न पकाता है।
११ ब्राह्मणो वसुधां याचते । ब्राह्मण भूमि मांगता है।
१२ स जलेन पात्रं भरति । वह जल से पात्र भरता है
१३ त्वं कुत्र यजसि । तू कहाँ हवन करता है।
१४ देवशर्म्मा द्रव्यं याचते । देवशर्मा पैसा मांगता है
१५ तौ त्वां बोधिष्येते । वे दोनों तुम को समझायें

पाठ अड़तालीसवां

प्रथमगण । उभयपद धातु

१ वप् (बीज सन्ताने)=बीज बोना—वपति, वपते । वप्स्य
वप्स्यते, । अवपत्, अवपत ।

२ वह (प्रापणे)=ले जाना—वहति, वहते । वक्ष्यति, वक्ष्यते ।
अवहत्, अवहत ।

३ वृ (वर्) (आवरणे)=ढाँपना—वरति, वरते । वरिष्य
वरिष्यते । अवरत्, अवरत ।

४ वे (वय्) (तन्तु सन्ताने)=कपड़ा बुनना—वयति, वय
वास्यति, वास्यते । अवयत्, अवय

५ वे (वादित्रे)—बांसुरी बजाना—वेणति, वेणते ।
वेणिष्यति, वेणिष्यते । अवेणत्, अवेण

६ वे (गतिज्ञानचिन्तायाम्)=जाना, जानना, सोचना—
वेनति, वेनते । वेनिष्यति, वेनिष्य
अवेनत् ।

७ शप् (आक्रोशे)=दोष देना—शपति, शपते । शप्स्यति शप्स्य
अशपत् अशपत ।

८ श्रि (श्रय्) (सेवायाम्)=सेवा करना—श्रयति, श्रयते। श्रयिष्यति, श्रयिष्यते। अश्रयत्, अश्रयत।

९ ह्वे (ह्वय्) (स्पर्धायां शब्दे च)=स्पर्धा करना, आह्वान करना, लाना—ह्वयति, ह्वयते। ह्वास्यति, ह्वास्यते। अह्वयत्, अह्वयत।

वाक्य

स त्वामाह्वयति। स किमर्थं शपति। कृषीवलो बीजं वपति। श्रीकृष्णो वेणुं वेणति। अश्वो रथं वहति। ऊर्णासूत्रेण कवयो वस्त्रं वयन्ति। न वेनते।

अब प्रथमगण के उभयपद के धातुओं के साथ पाठकों का परिचय हुआ है। यहाँ तक प्रथमगण के सब मुख्य और उपयोगी धातुओं के साथ पाठक परिचित हो चुके हैं। पाठकों को उचित है कि वे यहाँ तक के सब पाठों को दुबारा अच्छी प्रकार पढ़ें, क्योंकि यहाँ से दूसरा विषय प्रारम्भ होना है। जब तक पहला विषय पक्का होगा, तब तक उसको आगे चलना बड़ा कठिन होगा। इसलिये पूर्व के सब पाठ ठीक जानने के बिना पाठक आगे न बढ़ें।

[illegible]

[illegible]

*प्राभवत् । (प्र-भाव)

२ परा (भू)=नाश होना, पराभव करना—पराभवति । भविष्यति । पराभवत् । (परा

३ अप (भू)=उपस्थित न होना=अपभवति । अपभविष् अपाभवत् ।

४ सं (भू)=होना, एकत्र जमा—संभवति । संभविष्य समभवत् (उभयपद) संभवते, विष्यति । समभवत् (सं-भव)

५ अनु (भू)=अनुभव करना—अनुभवति । अनुभविष्य *अन्वभवत्, अन्वभवताम् भवन् । (अनुभव)

६ वि (भू)=विशेष उन्नत होना—विभवति । विभविष्यति व्यभवत् । (वि-भव)

७ आ (भू)=पास रहना, सहाय्य करना—आभवति । विष्यति । आभवत्

८ अभि (भू)=विजयी होना—अभिभवति । अभिभविष्य अभ्यभवत् ।

९ अति (भू)=सब से श्रेष्ठ होना—अतिभवति । अतिभविष् अत्यभवत् ।

१० उद् (भू)=उत्पन्न होना, उदय होना—उद्भवति । उद् ष्यति । उदभवत् । (उद्भव)

११ प्रति (भू)=समान होना—प्रतिभवति । प्रतिभविष्यति । प्रत्यभवत् ।

---

*भूतकाल का पहले लगने वाला 'अ' उपसर्ग के पश्चात् लग

१८ अभि—मुख्यता, कुटिलता ।

१९ प्रति—भाग, खण्डन ।

२० परि—परिणाम, शोक, पूजा, निन्दा, भूषण ।

२१ उप—समीपता, सादृश्य, संयोग, वृद्धि, आरम्भ ।

इन अर्थों के सिवाय और भी बहुत अर्थ हैं परन्तु यहां मुख्य दिये हैं। इनके इस प्रकार अर्थ होने से ही इनके पीछे रहने के कारण धातुओं के अर्थ बिल्कुल बदल जाते हैं। इनके कुछ उदाहरण नीचे देते हैं।

१ (वि) (चर्)=भ्रमण करना—विचरति । विचरिष्यति । व्यचरत् ।

२ सं (चर्)=घूमना । संचरति । संचरिष्यति । समचरत् ।

३ सं (चल्)=चलना । संचलति । संचलिष्यति । समचलत् ।

४ अनु (चर्)=पीछे जाना, नौकरी करना—अनुचरति । अनुचरिष्यति । अन्वचरत् ।

५ प्रचर्
६ प्रचल् } —अर्थ और रूप पूर्ववत् ।

७ उच्चर् =ऊपर जाना, बोलना—उच्चरति । उच्चरिष्यति । उदचरत् ।

८ उच्चल्=चलना—उच्चलति ।

९ परि (चर्)=चलना, नौकरी करना—परिचरति । परिचरिष्यति । पर्यचरत् ।

१० प्रतप्=तपना, गरम होना, प्रकाशना—प्रतपति । प्रतप्स्यति । प्रतपत् ।

११ संतप्=तपना, क्रोध करना—संतपति । संतप्स्यति । संतपत् ।

१२ अवबुध=जागृत होना--जानना, अवबोधति । अवाबुधत् ।

१३ प्रबुध=निद्रा से जागृत होना—प्रबोधति । प्राबुधत् ।

१४ प्रस्था (प्रतिष्ठ्)=प्रवास के लिये निकलना—प्रतिष्ठते ।
प्रस्थास्यते । प्रतिष्टते । (आत्मनेपद)

१५ संस्था (संतिष्ट्)=रहना—संतिष्ठते । संस्थास्यते । सम-
तिष्ठते (आत्मनेपद) ।

१६ विस्मृ=भूलना—विस्मरति । विस्मरिष्यति । व्यस्मरत् ।

इस प्रकार उपसर्ग के साथ धातुओं के रूप होते हैं । भूतकाल में उपसर्ग के पश्चात् अ, और अ के पश्चात् धातु और प्रत्यय लगते हैं ।

वि+अ+स्मर्+अ+त्=व्यस्मरत् ।

सं+अ+तिष्ठ्+अत=समतिष्ठत ।

अनु+अ+बोध्+अ+त्=अन्वबोधत् ।

इ और उ के पश्चात् विजातीय स्वर आने से क्रमशः य् और व् होते हैं । जैसा—नि+अ=न्य । अनु+अ=अन्व । प्रति+अ=प्रत्य । सु+अ=स्व ।

आशा है कि पाठक इन बातों को स्मरण रखकर इन धातुओं के प्रयोग अपने लेखों में उपयोग करेंगे ।

परस्मैपद । वर्तमानकाल

अर्चयति	अर्चयतः	अर्चयन्ति
अर्चयसि	अर्चयथः	अर्चयथ
अर्चयामि	अर्चयावः	अर्चयामः

आत्मनेपद । वर्तमानकाल

अर्चयते	अर्चयेते	अर्चयन्ते
अर्चयसे	अर्चयेथे	अर्चयध्वे
अर्चये	अर्चयावहे	अर्चयामहे

परस्मैपद । भविष्यकाल

अर्चयिष्यति	अर्चयिष्यतः	अर्चयिष्यन्ति
अर्चयिष्यसि	अर्चयिष्यथः	अर्चयिष्यथ
अर्चयिष्यामि	अर्चयिष्यावः	अर्चयिष्यामः

आत्मनेपद । भविष्यकाल

अर्चयिष्यते	अर्चयिष्येते	अर्चयिष्यन्ते
अर्चयिष्यसे	अर्चयिष्येथे	अर्चयिष्यध्वे
अर्चयिष्ये	अर्चयिष्यावहे	अर्चयिष्यामहे

यहाँ पाठक देखेंगे कि इस गण के रूप प्रथम गण के बराबर ही होते हैं, परन्तु बीच में दशम गण का चिह्न 'अय' लगता है, इतना ही केवल भेद होने से प्रथम गण के रूप जानने वाले विद्यार्थी के लिये दशम गण के रूप बनाना कोई कठिन नहीं। अर्च्+अय+ति=अर्चयति। अर्च्+अय्+इ+ष्य+ति=अर्चयिष्यति इत्यादि।

दशमगण । उभयपद

१ अर्ज् (प्रतियत्ने संपादने च)=प्राप्त करना—अर्जयति,

गोमयिष्यति, गोमयिष्यते ।

१४ ग्रंथ् (वंधने सन्दर्भे च)=बांधना, व्यवस्थित करना—ग्रन्थयति, ग्रन्थयते । ग्रन्थयिष्यति, ग्रन्थयिष्यते ।

१५ गुष् (घोष्) (विशब्दने)=घोषणा करना—घोषयति, घोषयते । घोषयिष्यति, घोषयिष्यते ।

१६ चर्च् (अध्ययने)=अभ्यास करना—चर्चयति, चर्चयते । चर्चयिष्यति, चर्चयिष्यते ।

१७ चर्व् (भक्षणे)=खाना, चबाना—चर्वयति, चर्वयते । चर्वयिष्यति, चर्वयिष्यते ।

१८ चित्र् (चित्रकरणे)=तसवीर खेंचना—चित्रयति, चित्रयते । चित्रयिष्यति, चित्रयिष्यते ।

१९ चिन्त् (स्मृत्याम्)=स्मरण करना—चिन्तयति, चिन्तयते । चिन्तयिष्यति, चिन्तयिष्यते ।

२० चुर् (स्तेये)=चोरना—चोरयति, चोरयते । चोरयिष्यति, चोरयिष्यते ।

२१ छद् (आच्छादने)=ढांपना=छादयति, छादयते । छादयिष्यति, छादयिष्यते ।

वाक्य

१ तौ चित्रयतः ।	वे दोनों तसवीर बनाते हैं ।
२ ते सर्वे चिन्तयन्ते ।	वे सब सोचते हैं ।
३ स द्रव्यं चोरयति ।	वह पैसा चुराता है ।
४ स वने अश्वं गवेषयते ।	वह जंगल में घोड़े को ढूंढता है ।
५ स कृष्णकथां कथयति ।	वह कृष्ण की कथा कहता है ।

पाठकों को उचित है कि वे उक्त धातुओं से इस प्रकार विविध वाक्य बनाकर धातुओं के रूपों का उपयोग करें। धातुओं के रूप बारम्बार बनाने से ही ठीक याद रह सकते हैं।

दशम गण । भूतकाल

चुर् (स्तेये) उभयपद

परस्मैपद । भूतकाल

अचोरयत्	अचोरयताम्	अचोरयन्
अचोरयः	अचोरयतम्	अचोरयत
अचोरयम्	अचोरयाव	अचोरयाम

आत्मनेपद । भूतकाल

अचोरयत	अचोरयेताम्	अचोरयन्त
अचोरयथाः	अचोरयेथाम्	अचोरयध्वम्
अचोरये	अचोरयावहि	अचोरयामहि

प्रथम गण के समान ही दशमगण भूतकाल के रूप समझ लीजिये, केवल बीच में 'अय' होता है।

प्रथमगण । भूतकाल	दशमगण । भूतकाल
प्र० पु० अपठत्	अचोरयत्
म० पु० अपठः	अचोरयः
उ० पु० अपठम्	अचोरयम्

[illegible]

[illegible]

यिष्यति, छिद्रयिष्यते। अछिद्रयत्, अछिद्रयत।

२ छेद् (द्वैधी करणे)=काटना—छेदयति, छेदयते। छेदयिष्यति, छेदयिष्यते। अछेदयत्, अछेदयत।

३ जृ (जार्) वयो हानौ=वृद्ध होना—जारयति, जारयते। जायर-यिष्यति, जारयिष्यते। अजारयत्।

४ ज्ञप् (ज्ञाने ज्ञापने च)=जानना और जताना—ज्ञपयते। ज्ञपयिष्यति, ज्ञपयिष्यते। अज्ञपयत।

५ तप् (संतापे)=तपाना—तापयति, तापयते। तापयिष्यति, तापयिष्यते। अतापयत्, अतापयत।

६ तर्क् (वितर्के)=तर्क करना—तर्कयति, तर्कयते। तर्कयि-ष्यति, तर्कयिष्यते। अतर्कयत्, अतर्कयत।

७ तिज् (निशाने)=तेज करना—तेजयति, तेजयते। तेजयिष्यति, तेजयिष्यते। अतेजयत्, अते-जयत।

८ तिल् (तेल्) (स्नेहे)=तेल निकालना—तेलयति, तेलयते। तेलयिष्यति, तेलयिष्यते। अतेलयत्, अतेलयत।

९ तीर् (पारंगतौ, कर्मसमाप्तौ च)=पार जाना और कर्म समाप्त करना—तीरयति, तीरयते। तीरयिष्यति, तीरयिष्यते। अतीरयत्, अतीरयत।

कई धातु दशम और प्रथम गणों में हैं, इसलिये उनको पूर्व

८ पीड् (अवगाहने)=कष्ट देना—पीडयति, पीडयते । पीडयिष्यति, पीडयिष्यते । अपीडयत्, अपीडयत ।

९ पुष् (पोष्) (धारणे)=धारण करना—पोषयति पोषयते । पोषयिष्यति, पोषयिष्यते । अपोषयत्, अपोषयत ।

१० पूज् (पूजायाम्)=पूजा करना—पूजयति, पूजयते । पूजयिष्यति, पूजयिष्यते । अपूजयत्, अपूजयत ।

११ पूर् (आप्याने)=भरना—पूरयति, पूरयते । पूरयिष्यति । पूरयिष्यते । अपूरयत्, अपूरयत ।

१२ पूर्ण् (संघाते)=इकट्ठा करना—पूर्णयति, पूर्णयते । (शेष रूप पाठक बना सकते हैं । पूर्ववत् करना ।)

१३ प्रथ् (प्रख्याने)=प्रसिद्ध होना—प्रथयति, प्रथयते ।

१४ भक्ष् (अदने)=खाना—भक्षयति, भक्षयते ।

१५ भर्त्स् (तर्जने)=निन्दा करना—भर्त्सयति, भर्त्सयते ।

१६ भूष् (अलंकारे)=भूषित करना—भूषयति, भूषयते ।

१७ मह् (पूजायाम्)=सत्कार करना—महयति, महयते ।

१८ मान् (पूजायाम्)=सम्मान करना—मानयति, मानयते ।

१९ मार्ग् (अन्वेषणे)=ढूंढना—मार्गयति, मार्गयते ।

२० मार्ज् (शुद्धौ)=स्वच्छ करना—मार्जयति, मार्जयते ।

२१ मुच् (मोच्) (प्रमोचने)=खुला करना—मोचयति, मोचयते ।

२२ मृष् (मर्ष्) (तितिक्षायाम्)=मर्षयति, मर्षयते ।
२३ लक्ष् (दर्शने)=देखना—लक्षयति, लक्षयते ।
२४ वच् (परिभाषणे)=पढ़ना, बोलना—वाचयति, वाचयते ।
२५ वर्ध् (पूर्णे)=बढ़ाना, पूर्ण करना—वर्धयति, वर्धयते ।
२६ वृज् (वर्ज्) (वर्जने)=अलग करना—वर्जयति, वर्जयते ।
२७ सान्त्व् (सामप्रयोगे)=शान्ति करना—सान्त्वयति, सान्त्वयते ।
२८ सुख् (सुख) (क्रियायाम्)=सुख देना—सुखयति, सुखयते ।
२९ स्निह् (स्नेह)=मित्रता करना—स्नेहयति, स्नेहयते ।

इन धातुओं के शेष रूप पाठक स्वयं बना सकते हैं । दशमगण के धातुओं के रूप बनाना बहुत सुगम है । यह बात पाठकों ने स्वयं अनुभव की होगी ।

वाक्य

पुत्रः पितरं सुखयति । पुत्रौ पितरं सुखयतः । पुत्राः पितरं सुखयन्ति । तव पुत्रः त्वां सुखयिष्यति । तव पुत्रौ त्वां सुखयिष्यतः । तव पुत्रास्त्वां सुखयिष्यन्ति । त्वं मां सान्त्वयसि किम् ? स त्वां सान्त्वयिष्यति । [illegible] किं वर्धते । [illegible] । [illegible] ।

([illegible])

[illegible]

षष्ठ गण के धातु

परस्मैपद । वर्तमानकाल

मृड् (सुखने)=आनन्द करना

मृडति	मृडतः	मृडन्ति
मृडसि	मृडथः	मृडथ
मृडामि	मृडावः	मृडामः

षष्ठ गण के धातुओं के लिए प्रत्ययों के पूर्व 'अ' लगता है। मृड्+अ+ति इसी प्रकार अन्य रूप बनते हैं। प्रथम गण के समान ही ये रूप हुआ करते हैं, ऐसा साधारणतः समझने में कोई विशेष हर्ज नहीं। भविष्यकाल भी प्रथम गण के समान ही होता है। प्रथम गण में और षष्ठ गण में जो विशेषता है, उसका बोध पाठकों को आगे जाकर हो जायगा।

परस्मैपद । भविष्यकाल

मृड् (सुखने)

मर्डिष्यति	मर्डिष्यतः	मर्डिष्यन्ति
मर्डिष्यसि	मर्डिष्यथः	मर्डिष्यथ
मर्डिष्यामि	मर्डिष्यावः	मर्डिष्यामः

परस्मैपद । भूतकाल

अमृडत्	अमृडताम्	अमृडन्
अमृडः	अमृडतम्	अमृडत
अमृडम्	अमृडाव	अमृडाम

११ धि (धिय्) (धारणे) धारण करना—धियति । धीष्यति । अधियत् ।

१२ धु (धुव्) (विधूवने)=हिलाना—धुवति । धुविष्यति । अधुवत् ।

१३ ध्रु व (गतिस्थैर्ययोः)=स्थिर होना, जाना—ध्रु वति । ध्रु विष्यति । अध्रु वत् ।

१४ प्रच्छ् (पृच्छ्) (ज्ञीप्सायाम्)=पूछना, जानना—पृच्छति । प्रक्ष्यति । अपृच्छत् ।

१५ ऋच् (स्तुतौ)=स्तुति करना—ऋचति । अर्चिष्यति । आर्चत् ।

१६ ऋष् (गतौ)=जाना—ऋषति । अर्षिष्यति, आर्षत् ।

वाक्य

तौ धुवतः । स पृच्छति । त्वं किं पृच्छसि । स देवानर्चिष्यति । कथं स तत् काष्ठं घूर्णाति । मनुष्यः सुखमिच्छति । तौ कृन्ततः ।

इस प्रकार वाक्य बनाकर सब धातुओं का उपयोग करना चाहिए । जिससे धातुओं के प्रयोग ध्यान में रहेंगे । वाक्य बनाकर लिखने का अभ्यास अधिक लाभदायक होगा ।

पाठ इक्यावनवां

प्रथम गण और षष्ठ गण का भेद देखने के लिए निम्न धातुओं के रूप देखिए :—

गुज् (कूजने) प्रथम गण, परस्मैपद ।

गुज् (शब्दे)=षष्ठ गण, परस्मैपद ।

प्रथम गण । वर्तमानकाल

गोजति	गोजतः	गोजन्ति
गोजसि	गोजथः	गोजथ
गोजामि	गोजावः	गोजामः

प्रथम गण । भविष्यकाल

गोजिष्यति	गोजिष्यतः	गोजिष्यन्ति
गोजिष्यसि	गोजिष्यथः	गोजिष्यथ
गोजिष्यामि	गोजिष्यावः	गोजिष्यामः

प्रथम गण । भूतकाल

अगोजत्	अगोजताम्	अगोजन्
अगोजः	अगोजतम्	अगोजत
अगोजम्	अगोजाव	अगोजाम

इन रूपों के साथ इसी धातु के षष्ठगण के रूप देखिये :—

गुजति	गुजतः	गुजन्ति
गुजसि	गुजथः	गुजथ
गुजामि	गुजावः	गुजामः

रूप हो गया है। षष्ठगण में गुण नहीं हुआ और 'गुजित' रूप हुआ है। इसी प्रकार भेद देखकर ध्यान में रखना चाहिए। षष्ठगण में भविष्यकाल के रूपों में किसी समय गुण हुआ करता है। इसका पता रूपों को देखने से लग जाएगा।

पिछले पाठों में प्रथम, दशम और षष्ठगण के धातु आये हैं। इनमें कई धातु एक ही हैं, उनके रूप जो साथ-साथ दिये हैं, एक-के साथ तुलना करके देखने से पाठकों को पता लग सकता है कि इन गणों में परस्पर भेद क्या है। इस भिन्नता को देख और अनुभव करके उनकी विशेषता को ध्यान में धरना चाहिए।

षष्ठगण। परस्मैपद के धातु

१ मिष् (स्पर्धायाम्)=स्पर्धा करना—मिषति। मेषिष्यति। अमिषत।

२ मृड् (सुखने)=सुख देना—मृडति। मर्डिष्यति। अमृडत्।

३ मृश् (आमर्शने प्रणिधाने च)=स्पर्श करना, विचार करना—मृशति। मर्क्ष्यति, म्रक्ष्यति। अमृशत्।

(इस धातु के भविष्य में दो रूप होते हैं।)

४ लिख् (अक्षर विन्यासे)=लिखना—लिखति। लिखिष्यति अलिखत्।

५ लुभ् (विमोहने)=मोह होना—लुभति। लोभिष्यति। अलुभत्।

६ विश् (प्रवेशने)=अन्दर जाना—विशति। वेक्ष्यति। अविशत्।

७ व्रश्च् (छेदने)=काटना—वृश्चति। व्रश्चिष्यति, व्रक्ष्यति।

८ शुभ्
९ शुम्भ् } (शोभायाम्)—सुशोभित होना—शुभति, शुम्भति। शोभिष्यति, शुम्भिष्यति। अशुभत्, अशुम्भत।

१० सद् (विशरण गत्यवसादनेषु)=तोड़ना, जाना, उदास होना—सीदति। सत्स्यति। असीदत्।

११ सु (प्रेरणे)=प्रेरणा करना—सुवति । सुविष्यति । असुवत् ।

१२ सृज् (विसर्गे)=छोड़ना, बनाना—सृजति । स्रक्ष्यति ।
असृजत् ।

१३ स्पृश् (संस्पर्शने)=स्पर्श करना—स्पृशति । स्प्रक्ष्यति, स्पर्क्ष्यति ।
अस्पृशत् ।

१४ स्फुट् (विकसने)=विकास होना—स्फुटति । स्फुटिष्यति ।
अस्फुटत् ।

१५ स्फुर् (स्फुरणे)=फुर्ती होना—स्फुरति । स्फुरिष्यति ।
अस्फुरत् ।

वाक्य

पुत्रः मातापितरौ मृडति । बालकौ लिखतः । सभासदा सभागृहं विशन्ति । तच्छुरिकया लेखनीं वृश्चति । ते तत्र सत्स्यन्ति । ईश्वरो विश्वं जगत्सृजति । त्वं मां किमर्थं स्पृशसि । मम नयनं स्फुरति ।

छुरिका—छुरी, चाकू ।
सभासद्—सभा का सदस्य ।

३ आदृ (आदरे)=आदर करना—आद्रियते। आदरिष्यते। आद्रियत।

४ धृ (अवस्थाने)=रहना—ध्रियते। धरिष्यते आध्रियत।

५ व्यापृ (व्यापारे)=व्यवहार करना—व्याप्रियते। व्यपरिष्यते। व्याप्रियत।

६ मृ (प्राणत्यागे)=मरना—म्रियते। मरिष्यति। अम्रियत। (यह धातु भविष्य काल में परस्मैपदि होता है।)

७ उद्विज् (भयचलनयोः)=डरना, कांपना—उद्विजते। उद्विजिष्यते। उद्‌विजत।

८ लज् (व्रीडने)=लज्जित होना—लजते। लजिष्यते। अलजत।

वाक्य

त्वं तं किं न आद्रियसे। स तान् आदरिष्यते। तौ तान् जुषेते। अहं न व्याप्रिये। तौ श्वः व्यापारिष्यते किम्। स रुग्णो नैव मरिष्यति। तौ अम्रियेताम्। स किमर्थमुद्विजंते। त्वं न लज्जसे।

षष्ठगण। उभयपद धातु

१ कृष् (विलेखने)=खेती करना, हल चलाना—कृषति, कृषते। कर्क्ष्यति, कर्क्ष्यते, क्रक्ष्यति, क्रक्ष्यते। अकृषत्, अकृषत। (भविष्य काल के चार-चार रूप होते हैं।)

२ क्षिप् (प्रेरणे)=फेंकना—क्षिपति, क्षिपते। क्षेप्स्यति, क्षेप्स्यते। अक्षिपत्, अक्षिपत।

इस प्रकार कोई चिह्न द्वितीयगण के लिये नहीं लगता। धातु के साथ प्रत्यय लगाकर एकदम रूप बनते हैं। देखिए :—

१ पा (रक्षणे)=रक्षण करना—पाति। पास्यति। अपात्।
२ रा (दाने)=देना—राति। रास्यति। अरात्।
३ ला (दाने आदाने च)=लेना, देना—लाति। लास्यति। अलात्।
४ मा (माने)=मिनना, मापना—माति। मास्यति। अमात्।
५ ख्या (प्रकथने)=कहना—ख्याति। ख्यास्यति। अख्यात्।
६ द्रा (कुत्सायाम्)=खराब करना—द्राति। द्रास्यति। अद्रात्।
७ निद्रा (स्वप्ने)=सोना—निद्राति। निद्रास्यति। न्यद्रात्।
८ भा (दीप्तौ)=प्रकाशना—भाति, भास्यति। अभात्।
९ वा (गति गंधनयोः)=चलना, हिंसा करना—वाति। वास्यति। अवात्।
१० या (प्रापणे)=जाना—याति। यास्यति। अयात्।
११ आय्=आना—आयाति। आयास्यति। आयात्।

द्वितीयगण के रूप। परस्मैपद

वर्तमानकाल

पाति	पातः	पान्ति
पासि	पाथः	पाथ
पामि	पावः	पामः

भविष्यकाल

पास्यति	पास्यतः	पास्यन्ति
पास्यसि	पास्यथः	पास्यथ
पास्यामि	पास्यावः	पास्यामः

अपात्	अपाताम्	अपान
अपाः	अपातम्	अपात
अपाम्	अपाव	अपाम

आशा है कि पाठक इस प्रकार उक्त धातुओं के रूप बनायेंगे।

वाक्य

ईश्वरः सर्वान् पाति। राजानौ स्वजनान् पातः। मनुष्याः स्वगुणान् पान्ति। स इदानीं निद्राति। अहं श्वः नैव निद्रास्यामि। वायुर्वाति। सूर्यो भाति। तारका भान्ति। रथाः यान्ति। अश्वः आयाति।

द्वितीयगण। परस्मैपद धातु

१ अद् (भक्षणे)=खाना—अत्ति। आत्स्यति। आदत्।

२ हन् (हिंसागत्योः)=हिंसा करना, जाना—हन्ति। हनिष्यति। अहन्।

३ विद् (ज्ञाने)=जानना—वेत्ति, वेदिष्यति। अवेत्।

४ अस् (भुवि)=होना—अस्ति। भविष्यति। आसीत्।

५ मृज् (शुद्धौ)=शुद्ध करना—मार्ष्टि। मार्जिष्यति, मार्क्ष्यति। अमार्ट्।

६ रुद् (अश्रुविमोचने)=रोना—रोदिति। रोदिष्यति। अरोदत्, अरोदीत्।

[illegible] इन धातुओं के रूप विस्तारपूर्वक होने के कारण नीचे [illegible] हैं—

अद् (भक्षणे) । वर्तमानकाल

अद्मि	अद्वः	अद्मः

भूतकाल

आदत्	आत्ताम्	आदन्
आदः	आत्तम्	आत्त
आदम्	आद्व:	आद्म

इसके भविष्यकाल के रूप सुगम हैं। अत्स्यति, अत्स्यतः अत्स्यन्ति। इत्यादि।

हन् (हिंसा गत्योः)। वर्तमानकाल

हन्ति	हतः	घ्नन्ति
हंसि	हथः	हथ
हन्मि	हन्वः	हन्मः

भूतकाल

अहन्	अहताम्	अघ्नन्
अहनः	अहतम्	अहत
अहनम्	अहन्व	अहन्म

इसके भविष्यकाल के रूप आसान हैं। हनिष्यति, हनिष्यतः, हनिष्यन्ति। इत्यादि।

विद् (ज्ञान)। वर्तमानकाल

वेत्ति (वेद)	वित्तः (विदतुः)	विदन्ति (विदुः)
वेत्सि (वेत्थ)	वित्थः (विदथुः)	वित्थ (विद)
वेद्मि (वेद)	विद्वः (विद्व)	विद्मः (विद्म)

इस धातु के प्रत्येक वचन के दो-दो रूप होते हैं। वे स्मरण करने चाहियें।

भूतकाल

अवेत्	अवित्ताम्	अविदुः

अवेः (अवेत्)	अवित्तम्	अवित्त
अवेदम्	अविद्व	अविद्म

इस धातु के भविष्यकाल के रूप सुलभ हैं। वेदिष्यति, वेदिष्यतः, वेदिष्यन्ति। इत्यादि।

अस् (भुवि)। वर्तमानकाल

अस्ति	स्तः	सन्ति
असि	स्थः	स्थ
अस्मि	स्वः	स्मः

भविष्यकाल

इस धातु के भविष्यकाल में भू धातु के समान ही रूप होते हैं। भविष्यति, भविष्यतः भविष्यन्ति। भविष्यसि, भविष्यथः, भविष्यथ। भविष्यामि। इत्यादि।

भूतकाल

आसीत्	आस्ताम्	आसन्
आसीः	आस्तम्	आस्त
आसम्	आस्व	आस्म

मृज् (शुद्धौ)। वर्तमानकाल

मार्ष्टि	मृष्टः	मृजन्ति, मार्जन्ति
मार्क्षि	मृष्ठः	मृष्ठ
मार्ज्मि	मृज्वः	मृज्मः

भूतकाल

अमार्ट्, (अमार्ड्)	अमृष्टाम्	अमृजन्, (अमार्जन्)
अमार्ट्, (अमार्ड्)	अमृष्टम्	अमृष्ट
अमार्जम्	अमृज्व	अमृज्म

इस धातु का भविष्यकाल सुगम है। मार्जिष्यति, मार्जिष्यत मार्जिष्यन्ति। इत्यादि।

रुद् (अश्रुविमोचने)। वर्तमानकाल

रोदिति	रुदितः	रुदन्ति
रोदिषि	रुदिथः	रुदिथ
रोदिमि	रुदिवः	रुदिमः

भूतकाल

अरोदत्, अरोदीत्	अरुदिताम्	अरुदन्
अरोदः, अरोदीः	अरुदितम्	अरुदित
अरोदम्	अरुदिव	अरुदिम

भविष्यकाल के रूप—रोदिष्यति, रोदिष्यतः रोदिष्यन्ति आशा है कि पाठक इन रूपों को ध्यान में रखेंगे। इनका वारम्बा वाक्यों में उपयोग करने से इनका स्मरण रह सकता है।

वाक्य

१. रामो रावणं हनिष्यति।	राम रावण को मारेगा।
२. भृत्यः पात्रान् मार्ष्टि।	नौकर वर्तनों को साफ करता है
३ त्वं किमर्थं रोदिषि।	तू क्यों रोता है।
४ असीद् राजा रामचन्द्रो नाम।	रामचन्द्र नाम का राजा था।
५ एतन्न विद्मः।	हम सब इसको नहीं जानते।
६ ह्यः त्वं न अरोदः किम्।	क्या तू कल नहीं रोया ?
७ सर्वे वयं अन्नं अद्मः।	हम सब अन्न खाते हैं।

इस धातु का भविष्यकाल सुगम है। मार्जिष्यति, मार्जिष्य
मार्जिष्यन्ति। इत्यादि।

रुद् (अश्रुविमोचने)। वर्तमानकाल

रोदिति	रुदितः	रुदन्ति
रोदिषि	रुदिथः	रुदिथ
रोदिमि	रुदिवः	रुदिमः

भूतकाल

अरोदत्, अरोदीत्	अरुदिताम्	अरुदन्
अरोदः, अरोदीः	अरुदितम्	अरुदित
अरोदम्	अरुदिव	अरुदिम

भविष्यकाल के रूप—रोदिष्यति, रोदिष्यतः रोदिष्य
आशा है कि पाठक इन रूपों को ध्यान में रखेंगे। इनका वा
वाक्यों में उपयोग करने से इनका स्मरण रह सकता है

वाक्य

१. रामो रावणं हनिष्यति।	राम रावण को मारेगा।
२. भृत्यः पात्रान् मार्ष्टि।	नौकर बर्तनों को साफ करत
३ त्वं किमर्थं रोदिषि।	तू क्यों रोता है।
४ असीद् राजा रामचन्द्रो नाम।	रामचन्द्र नाम का राजा था
५ एतन्न विद्मः।	हम सब इसको नहीं जानते
६ ह्यः त्वं न अरोदः किम्।	क्या तू कल नहीं रोया ?
७ सर्वे वय अन्नं अद्मः।	हम सब अन्न खाते हैं।

पाठ त्रेपनवां

आस् (उपवेशने)=बैठना

आस्ते	आसाते	आसते
आस्से	आसाथे	आध्वे
आसे	आस्वहे	आस्महे

भविष्यकाल

आसिष्यते	आसिष्येते	आसिष्यन्ते
आसिष्यसे	आसिष्येथे	आसिष्यध्वे
आसिष्ये	आसिष्यावहे	आसिष्यामहे

भूतकाल

आस्त	आसाताम्	आसत
आस्थाः	आसाथाम	आध्वम्
आसि	आस्वहि	आस्महि

अधि+इ (अधी) (अध्ययने)=अध्ययन करना।

वर्तमानकाल

अधीते	अधीयाते	अधीयते
अधीषे	अधीयाथे	अधीध्वे
अधीये	अधीवये	अधीमहे

भविष्यकाल

अध्येष्यते	अध्येष्येते	अध्येष्यन्ते
अध्येष्यसे	अध्येष्येथे	अध्येष्यध्वे
अध्येष्ये	अध्येष्यावहे	अध्येष्यामहे

भूतकाल

अध्यैत	अध्यैयाताम्	अध्यैयत

अध्यैथाः	अध्यैयाथाम	अध्यैध्वम्
अध्यैयि	अध्यैवहि	अध्यैमहि

यही धातु परस्मैपद में भी है जिसका अर्थ 'अधि+इ (स्मरणे)=स्मरण करना है। इसके रूप :—

परस्मैपद। वर्तमानकाल

अध्येति	अधीतः	अधीयन्ति
अध्येषि	अधीथः	अधीथ
अध्येमि	अधीवः	अधीमः

परस्मैपद। भविष्यकाल

अध्येष्यति	अध्येष्यतः	अध्येष्यन्ति
अध्येषि	अधीथः	अधीथ
अध्येष्यामि	अध्येष्यावः	अध्येष्यामः

परस्मै०। भूतकाल

अध्यैत्	अध्यैताम्	अध्यायन्
अध्यैः	अध्यैतम्	अध्यैत्
अध्यायम्	अध्यैव	अध्यैम

इनके उभयपद के ये सब रूप विशेष उपयोगी होने से ठीक स्मरण रखने चाहिए।

ईश् (ऐश्वर्ये)=प्रभुत्व करना

आत्मनेपद। वर्तमान

ईष्टे	ईशाते	ईशते
ईशिषे	ईशाथे	ईशिध्वे
ईशे	ईश्वहे	ईश्महे

आत्मने०। भविष्यकाल

ईशिष्यसे	ईशिष्येथे	ईशिष्यध्वे
ईशिष्ये	ईशिष्यावहे	ईशिष्यामहे

आत्मने० । भूतकाल

ऐष्ट	ऐशाताम्	ऐशत
ऐष्टाः	ऐशाथाम्	ऐड्ढ्वम्
ऐशि	ऐश्वहि	ऐश्महि

चक्ष् (व्यक्तायां वाचि)=बोलना

आत्मने० । वर्तमानकाल

चष्टे	चक्षाते	चक्षते
चक्षे	चक्षाथे	चड्ढ्वे
चक्षे	चक्ष्वहे	चक्ष्महे

आत्मने० । भविष्यकाल

चक्ष् धातु के लिए 'ख्या' आदेश होता है । स्मरण रखना चाहिए ।

ख्यास्यते	ख्यास्येते	ख्यास्यन्ते
ख्यास्यसे	ख्यास्येथे	ख्यास्यध्वे
ख्यास्ये	ख्यास्यावहे	ख्यास्यामहे

आत्म० । भूतकाल

अचष्ट	अचक्षाताम्	अचक्षत
अचष्टा	अचक्षाथाम्	अचड्ढ्वम्
अचक्षि	अचक्ष्वहि	अचक्ष्महि

जागृ (निद्राक्षये)=जागना

परस्मैपद। वर्तमानकाल

जागर्ति	जागृतः	जाग्रन्ति
जागर्षि	जागृथः	जागृथ

जागर्मि	जागृवः	जागृमः

परस्मैपद । भविष्यकाल

जागरिष्यति	जागरिष्यतः	जागरिष्यन्ति
जागरिष्यसि	जागरिष्यथः	जागरिष्यथ
जागरिष्यामि	जागरिष्यावः	जागरिष्यामः

परस्मैपद । भूतकाल

अजागः	अजागृताम्	अजागरुः
अजागः	अजागृतम्	अजागृत
अजागरम्	अजागृव	अजागृम

द्विष् (अप्रीतौ)=द्वेष करना—उभयपद

परस्मैपद । वर्तमानकाल

द्वेष्टि	द्विष्टः	द्विषन्ति
द्वेक्षि	द्विष्ठः	द्विष्ठ
द्वेष्मि	द्विष्वः	द्विष्मः

आत्मनेपद । वर्तमानकाल

द्विष्टे	द्विषाते	द्विषते
द्विक्षे	द्विषाथे	द्विड्ढ्वे
द्विषे	द्विष्वहे	द्विष्महे

परस्मैपद । भूतकाल

अद्वेट्	अद्विष्टाम्	अद्विषन्, अद्विषुः
,,	अद्विष्टम्	अद्विष्ट
अद्वेषम्	अद्विष्व	अद्विष्म

आत्मनेपद । भूतकाल

[illegible]	अद्विषाताम्	अद्विषत

अद्विष्टाः	अद्विषाथाम्	अद्विड्ढ्वम्
अद्विषि	अद्विष्वहि	अद्विष्महि

द्विष् धातु का भविष्यकाल 'द्वेक्ष्यति, द्वेक्ष्यते' ऐसा होता है। उसके रूप सुगम हैं।

वाक्य

अहं तं अद्विषि	मैं उसको द्वेष करता था।
ते सर्वेऽपि तं अद्विषन्।	वे सब भी उसको द्वेष करते थे।
त्वं किमर्थं द्वेक्षि ?	तू क्यों द्वेष करता है ?
युवां न द्विष्ठः।	तुम दोनों द्वेष नहीं करते।
आवाँ ह्यः अजागृवः।	हम दोनों कल जागते रहे।
त्वं श्वः जागरिष्यसि किम्।	क्या तू कल जागेगा ?
सर्वे वयं अद्य जागृमः।	सब हम आज जागते हैं।
ईश्वरो द्विपदश्चतुष्पदः ईष्टे।	परमेश्वर द्विपाद और चतुष्पादों पर प्रभुत्व करता है।
अहं व्याकरणं नाध्यैयि।	मैंने व्याकरण पढ़ा नहीं।
किमध्येषि।	तू क्या पढ़ता है ?
स ज्यौतिषमध्येष्यति।	वह ज्योतिष पढ़ेगा।
तौ गणितं अधीयाते।	वे दोनों गणित पढ़ते हैं।
आस्ते स तत्र	बैठा है वह वहां।
वयं सर्वे अत्रैवास्महे।	हम सब यहाँ ही बैठते हैं।
युवां तत्र आसिष्येथे।	तुम दोनों वहां बैठोगे।
अहं नैव तत्रासिष्ये।	मैं वहां नहीं बैठूंगा।
कस्तत्रासिष्यते।	कौन वहां बैठेगा।

पाठ चौरानवां

तृतीयगण । उभयपद

दा (दाने)=देना

परस्मैपद । वर्तमानकाल

ददाति	दत्तः	ददति
ददासि	दत्थः	दत्थ
ददामि	दद्वः	दद्मः

तृतीयगण के धातुओं की विशेषता यह है कि इस गण के वर्तमान और भूतकाल के रूप होने के समय धातु के पहिले अक्षर का द्वित्व होता है।

'दा' धातु का द्वित्व होकर 'दादा' बनता है, और प्रत्यय लगने के समय पहिले अक्षर का दीर्घस्वर ह्रस्व होकर 'ददा+ति='ददाति' ऐसा रूप बनता है। द्विवचन और बहुवचन के प्रत्यय लगने से पूर्व अन्त्य आकार का लोप होता है। जैसा—दा; दादा, ददा+मः= दद्+मः=दद्म।

परस्मैपद । भूतकाल

अददात	अदत्ताम्	अददुः
अददाः	अदत्तम्	अदत्त
अददाम्	अददाव	अददाम

इसके भविष्यकाल के रूप सुगम हैं। दास्यति। दास्यते। इसके आत्मनेपद के रूप निम्न प्रकार होते हैं:—

आत्मनेपद । वर्तमानकाल

दत्ते	ददाते	ददते

दत्से	ददाथे	दद्ध्वे
ददे	दद्वहे	दद्महे

आत्मनेपद । भूतकाल

अदत्त	अददाताम्	अददत
अदत्थाः	अददाथाम्	अदद्ध्वम्
अददि	अदद्वहि	अदद्महि

धा (धारण पोषणयोः)=धारण पोषण करना

परस्मैपद

वर्तमान—दधाति, धत्तः, दधति । दधासि, धत्थः, धत्थ । दधामि, दध्वः दध्मः ।

भविष्य—धास्यति । धास्यसि । धास्यामि ।

भूत—अदधात, अधत्ताम्, अदधुः । अदधाः, अधत्तम्, अधत्त । अदधाम्, अदध्व, अदध्म ।

आत्मनेपद

वर्तमान–धत्ते, दधाते, दधते । दत्से, दधाथे, दध्वे । दधे, दध्वहे, दध्महे ।

भविष्य—धास्यते । धास्यसे । धास्ये ।

भूत—अधत्ता, अदधाताम्, अदधत । अधत्थाः, अदधाथाम्, अधद्ध्वम् । अदधि, अदध्वहि, अदध्महि ।

भृ (धारण पोषणयोः)=धारण और पोषण करना ।

परस्मैपद

वर्तमान—विभर्ति, विभृतः, विभ्रति । बिभर्षि, विभृथः, बिभृथ । विभर्मि, विभृवः, विभृमः ।

भविष्य—भरिष्यति । भरिष्यसि । भरिष्यामि ।

भूत—अविभः, अविभृताम्, अविभरुः । अविभः, अविभृतम्, अविभृत । अविभरम्, अविभृव, अविभृम

भी (भये)=डरना

वर्तमान—बिभेति, बिभीतः, बिभ्यति । बिभेषि, बिभीथः, बिभी
विभेमि, बिभीवः, बिभीमः ।

(इसके द्विवचन में दीर्घ 'भी' के स्थान पर ह्रस्व 'भि' हो
भी रूप बनते हैं । जैसा—विभथः बिभितः इ० ।

भविष्य—भेष्यति, भेष्यसि, भेष्यामि ।

भूत—अबिभेत्, अबिभीताम्, अबिभयुः । अबिभेः, अबिभी
अबिभीत । अबिभयम्, अबिभ
अबिभीम ।

(यहाँ दीर्घ 'भी' के स्थान पर ह्रस्व होकर दूसरे रूप ह
हैं । जैसे :—अबिभित, अबिभिम इ० ।

मा (माने)=मिनना, मापना

आत्मनेपद

वर्तमान—मिमीते, मिमाते, मिमते । मिमीषे, मिमाथे, मिमीध्वे
मिमे, मिमीवहे, मिमीमहे ।

भविष्य—मास्यते मात्स्यसे । मात्स्ये ।

भूत—अमिमीत, अमिमाताम्, अमिमत । अमिमीथाः, अमिमाथा
अमिमीध्वम् । अमिमि, अमिमीव
अमिमीमहि ।

विष् (व्याप्तौ)=व्यापाना ।

परस्मैपद

वर्तमान—वेवेष्टि, वेविष्टः, वेविषति । वेवेक्षि, वेविष्टः, वेविष्ट
वेवेष्मि, वेविष्वः, वेविष्मः ।

अवेविषुः । अवेवेट्, अवेविष्टम्, अवेविष्ट ।
अवेविषम्, अवेविष्व, अवेविष्म ।

(पद के अन्तिम ट्कार का ड्कार होता है । जैसा :—
अवेवेट्, अवेवेड् ।)

हा (त्यागे)=त्यागना

परस्मैपद

वर्तमान—जहाति, जहीतः, जहति । जहासि, जहीथः, जहीथ ।
जहामि, जहीवः, जहीमः ।

भविष्य—हास्यति । हास्यसि । हास्यामि ।

भूत—अजहात्, अजहीताम्, अजहुः । अजहाः, अजहीतम्, अजहीत ।
अजहाम्, अजहीव, अजहीम ।

(इस धातु के दीर्घ 'ही' के स्थान पर ह्रस्व होकर और रूप
बनते हैं । जैसे—जहीतः, जहिवः ।
अजहिव, अजहिम । इ० ।)

हु (दानादानयोः) देन, लेन, खाना

परस्मैपद

वर्तमान—जुहोति, जुहुतः, जुह्वति । जुहोषि, जुहुथः, जुहुथ ।
जुहोमि, जुहुवः, जुहुमः ।

भविष्य—होष्यति । होष्यसि । होष्यामि ।

भूत—अजुहोत्, अजुहुताम्, अजुहवुः । अजुहो, अजुहुतम्, अजुहुत ।
अजुहवम्, अजुहुव, अजुहुम ।

इस प्रकार तृतीय गण के धातुओं के रूप होते हैं । द्वितीय और तृतीय गण में धातु बहुत थोड़े हैं, परन्तु जो हैं उनके सब रूप विलक्षण होते हैं, और विशेष लक्ष्यपूर्वक ध्यान में धरने पड़ते हैं, इसलिये इस संस्कृत स्वयं-शिक्षक के इस भाग में उनमें से

ही धातु दिये हैं और जो दिये हैं, उनके रूप भी साथ-साथ दिये हैं, जिससे पाठक आसानी के साथ उन धातुओं का अभ्यास कर सकते हैं। पाठकों को उचित है कि वे इन दोनों गणों के रूपों को अच्छी प्रकार स्मरण करें।

वाक्य

१ अहं अद्य जुहोमि ।	मैं आज हवन करता हूँ ।
२ स कदा होष्यति ।	वह कब हवन करेगा ।
३ तौ ह्य एव अजुहुताम् ।	उन दोनों ने कल ही हवन किया।
४ वेवेष्टि इति विष्णुः ।	व्यापता है इसलिये विष्णु कहते हैं ।
५ आवां धान्यं मिमीवहे ।	हम दोनों धान मापते हैं ।
६ युवां ह्यः अविभेतम् ।	तुम दोनों कल डर गये ।
७ अहं न विभेमि ।	मैं नहीं डरता ।
८ विभर्ति इति भरतः ।	पोषन करता है इसलिये भरत कहते हैं ।
९ पात्रं उदकेन भरिष्यसि किम् ।	क्या तू जल से बर्तन करेगा ?
१० पुष्करस्रजं अधत्त।	कमलमाला धारण की ।
११ दाता द्रव्यं ददाति ।	दाता धन देता है ।
१२ अहं अददाम् ।	मैंने दिया ।
१३ सर्वे वयं दद्मः ।	सब हम देते हैं ।
१४ स नैव दास्यति ।	वह नहीं देगा ।
१५ वयं व्याघ्रं विभीमः ।	हम शेर से डरते हैं ।
१६ धान्यं कुडवेन*मिमीते ।	धान कुडवे से मापता है ।

*चार सेर का एक कुडव होता है ।

पाठ पचपनवां

चतुर्थ गण के धातु

चतुर्थ गण के धातुओं के वर्तमान और भूतकालों के रूपों में 'य' लगता है।

शुच (पूतीभावे)=शुद्ध करना—उभयपद

वर्तमान—शुच्यति, शुच्यतः, शुच्यन्ति। शुच्यसि, शुच्यथः, शुच्यथ। शुच्यामि, शुच्यावः, शुच्यामः।

भूत—अशुच्यत्, अशुच्यताम्, अशुच्यन्। अशुच्यः, अशुच्यतम्, अशुच्यत। अशुच्यम्, अशुच्याव, अशुच्याम्।

भविष्य—शोचिष्यति। शोचिष्यासि। शोचिष्यामि।

आत्मनेपद के रूप

वर्तमान—शुच्यते, शुच्येते, शुच्यन्ते। शुच्यसे, शुच्येथे, शुच्यध्वे। शुच्ये, शुच्यावहे, शुच्यामहे।

भूत—अशुच्यत, अशुच्यताम्, अशुच्यन्त। अशुच्यथाः, अशुच्येथाम्, अशुच्यध्वम्। अशुच्ये, अशुच्यावहि, अशुच्यामहि।

भविष्य—शोचिष्यते। शोचिष्यसे। शोचिष्ये।

धातु

१ ऋध् (वृद्धौ) (परस्मै०)=बढ़ना—ऋध्यति। अर्धिष्यति। अर्ध्यत्।

२ कुट् (कुट्टने) (पर०)=कूटना—कुट्यति। कोटिष्यति। अकुट्यत्।

३ कुप् (क्रोधे) (पर०)=क्रोध करना—कुप्यति। कोपिष्यति। अकुप्यत्।

कृश् (तनू करणे)=कृश होना—कृश्यति । कर्शिष्यति । अकृश्यत् ।

क्रुध् (क्रोधे)=क्रोध करना—क्रुध्यति, क्रोत्स्यति । अक्रुध्यत् ।

क्लम् (ग्लानौ)=थकना—क्लाम्यति । क्लमिष्यति । अक्लाम्यत् ।

क्लिद् (आर्द्रीभावे)=गीला होना—क्लिद्यति । क्लेदिष्यति । क्लेत्स्यति । अक्लिद्यत् ।

क्लिश् (उपतापे) (आत्मने०)=क्लेश भोगना—क्लिश्यते । क्लेशिष्यते । अक्लिश्यत । (कइयों की सम्मति में यह धातु परस्मै० में भी है ।) —क्लिश्यति । इ० ।

क्षम् (सहने) (परस्मै०)=सहना—क्षाम्यति । क्षमीष्यति, अक्षाम्यत् ।

क्षिप् (प्रेरणे)=फेंकना—क्षिप्यति । क्षेप्स्यति । अक्षिप्यत ।

क्षुध् (बुभुक्षायाम्)=भूख लगना—क्षुध्यति । क्षोत्स्यति । अक्षुध्यत् ।

क्षुभ् (संचलने)=हलचल मचनी—क्षुभ्यति । क्षोभिष्यति । अक्षुभ्यत् ।

खिद् (दैन्ये) (आत्म०)=खेद करना—खिद्यते । खेत्स्यते । अखिद्यत ।

गृध् (अभिकांक्षायाम्) (पर०)=लोभ करना—गृध्यति । गर्धिष्यति । अगृध्यत् ।

जन् (प्रादुर्भावे) (आत्म०)=उत्पन्न होना—जायते । जनिष्यते । अजायत ।

१६ जॄ (वयोहानौ) (पर०)=जीर्ण होना—जीर्यति। जरीष्यति, जरिष्यति। अजीर्यत्।

१७ डी (विहायसागतौ) (आत्म०)=उड़ना—डीयते। डयिष्यते। अडीयत।

१८ तुष् (तुष्टौ) (पर०)=सन्तुष्ट होना—तुष्यति। तोक्ष्यति। अतुष्यत्।

१९ तृप् (तृप्तौ) तृप्त होना—तृप्यति। तर्पिष्यति। अतृप्यत्।

२० तृष् (पिपासायाम्)=प्यास लगना—तृष्यति। तर्षिष्यति। अतृष्यत्।

२१ त्रस् (उद्वेगे)=कष्ट होना—त्रस्यति। त्रसिष्यति। अत्रस्यत्।

२२ दम् (उपरमे)=दमन करना—दाम्यति। दमिष्यति। अदाम्यत्।

२३ दिव् (क्रीडायाम्)=खेलना—दीव्यति। देविष्यति। अदीव्यत्।

२४ दीप् (दीप्तौ) (आत्म०)=प्रकाशना—दीप्यते। दीपिष्यते। अदीप्यत।

२५ दुष् (वैक्लव्ये) (पर०)=दोषयुक्त होना—दुष्यति। दोक्ष्यति। अदुष्यत्।

२६ द्रुह् (जिघांसायाम्)=घात करना—द्रुह्यति। द्रोहिष्यति। द्रोक्ष्यति। अद्रुह्यत्।

२७ नश् (अदर्शने)=नाश होना—नश्यति। नशिष्यति, नेक्ष्यति। अनश्यत्।

२८ पुष् (पुष्टौ)= पुष्ट होना—पुष्यति। पोक्ष्यति। अपुष्यत्।

२९ पूर् (आप्यायने) (आत्म०)=भरना—पूर्यते। पूरिष्यते। अपूर्यत।

३० भ्रंश (अधः पतने)=(पर०) गिरना—भ्रंश्यति। भ्रंशिष्यति। अपभ्रंश्यत्।

३१ मद् (हर्षे)=आनन्द होना—माद्यति। मदिष्यति। अमाद्यत्।

३२ मन् (ज्ञाने)=(आत्म०) विचार करना—मन्यते। मंस्यते। अमन्यत्।

३३ मुह् (वैचित्ये)=मोहित होना—मुह्यति। मोहिष्यति, मोक्ष्यति। अमुह्यत्।

३४ मृग् (अन्वेषणे)=ढूंढ़ना—मृग्यति। मर्गिष्यति। अमृग्यत्।

३५ युज् (समाधौ)=चित्त स्थिर करना—युज्यते। योक्ष्यते। अयुज्यत।

३६ युध् (संप्रहारे)=युद्ध करना—युध्यते। योत्स्यते। अयुध्यत।

३७ लुभ् (गार्ध्ये)=(पर०) लोभ करना—लुभ्यति। लोभिष्यति। अलुभ्यत्।

३८ (विद् सत्तायाम्)=(आत्म०) होना, रहना—विद्यते। वेत्स्यते। अविद्यत।

३९ शक् (मर्पणे)=(उभयपद) सहना—शक्यति, शक्यते। शकिष्यति, शकिष्यते। शक्ष्यति, शक्ष्यते। अशक्यत्, अशक्यत।

४० शम् (उपशमे)=(पर०) शान्त होना—शम्यति। शमिष्यति। अशाम्यत्।

४१ शुध् (शौचे)=शुद्ध करना—शुध्यति शोत्स्यति। अशुध्यत्।

४२ सिध् (सिद्धौ)=सिद्ध करना—सिध्यति सेत्स्यति। असिध्यत्।

४३ सीव् (तन्तुवाये)=सीना—सीव्यति। सेविष्यति। असीव्यत्।

४४ हृष् (तुष्टौ)=सन्तुष्ट होना—हृष्यति । हर्षिष्यति । अहृष्यत् ।

वाक्य

स अहृष्यत् ।	वह सन्तुष्ट हुआ ।
तौ अशाम्यताम् ।	वे दोनों शान्त हुए ।
स उपदेशं न मन्यते ।	वह उपदेश नहीं मानता ।
बालकाः पुष्यन्ति ।	लड़के पुष्ट होते हैं ।

पश्य स कथं सूच्या वस्त्रं सीव्यति । तौ सीव्यतः । ते सर्वेऽपि इदानीं न सीव्यन्ति । स इदानीं स्वगृहे एव विद्यते । राजा राष्ट्राद् भ्रश्यति । आत्मा नैव नश्यति परं शरीरं नश्यति । स जलेन तृप्यति । अरे, त्वं कदा तोक्ष्यसि । तौ वने मृगान् मृग्यतः । रावणः रामेण सह युध्यते । मुह्यति मे मनः । शरीरं जीर्यति परन्तु धनाशा जीर्यतोऽपि न जीर्यति । पक्षिणः आकाशे डीयन्ते । त्वं किमर्थं खिद्यसे । तस्य मनः क्षुभ्यति ।

पाठ छप्पनवां

पञ्चम गण के धातु

पंचम गण के धातुओं के लिये धातु और प्रत्यय के बीच में [व]र्तमान और भूतकालों में 'नु' चिह्न लगता है ।

सु—(स्नपन-पीडन-स्नानेषु)=**स्नान करना, रस निकालना इ०**

उभयपद

परस्मैपद

[व]र्तमान—सुनोति, सुनुतः, सुन्वन्ति । सुनोषि, सुनुथः, सुनुथ । सुनोमि, सुनुवः—सुन्वः, सुनुमः—सुन्मः ।

[भू]त—असुनोत्, असुनुताम्, असुन्वन् । असुनोः, असुनुतम्, असुनुत । असुनवम्, असुनुव—असुन्व, असुनुम—असुन्म ।

भविष्य—सोष्यति । सोष्यसि । सोष्यामि ।

आत्मनेपद

वर्तमान—सुनुते, सुन्वाते, सुन्वते । सुनुषे, सुन्वाथे, सुनुध्वे । सुन्
सुनुवहे—सुन्वहे, सुनुमहे—सुन्महे ।

भूत—असुनुत, असुन्वाताम्, असुन्वत । असुनुथाः, असुन्वाथा
असुनुध्वम् । असुन्वि, असुनुवहि—असुन्वहि,
असुनुमहि—असुन्महि ।

भविष्य—सोष्यते । सोष्यसे । सोष्ये ।

साध् (संसिद्धौ = सिद्ध होना—परस्मै०

वर्तमान—साध्नोति, साध्नुतः, साध्नुवन्ति । साध्नोषि, साध्नुथ
साध्नुथ । साध्नोमि, साध्नुवः, साध्नुमः ।

भूत—असाध्नोत्, असाध्नुताम्, असाध्नुवन् । असाध्नोः, असाध्नुत
असाध्नुत । असाध्नुवम्, असाध्नुव, असाध्नुम् ।

भविष्य—सात्स्यति । सात्स्यसि । सात्स्यामि ।

अश् (व्याप्तौ)=व्यापन—आत्मने०

वर्तमान—अश्नुते, अश्नुवाते, अश्नुवते । अश्नुषे, अश्नुवा
अश्नुध्वे । अश्नुवे, अश्नुवहे, अश्नुमहे ।

भूत—आश्नुत, आश्नुवाताम्, आश्नुवत । आश्नुथाः, आश्नुवाथा
आश्नुध्वम् । आश्नुवि, आश्नुवहि, आश्नुमहि ।

भविष्य—अशिष्यते, अक्ष्यते । अशिष्यसे, अक्ष्यसे । अशिष्ये, अक्ष्ये ।

आप् (व्याप्तौ)=व्यापना, पाना—परस्मै०

वर्तमान—आप्नोति, आप्नुतः, आप्नुवन्ति । आप्नोषि, आप्नुथ
आप्नुथ । आप्नोमि, आप्नुव, आप्नुमः ।

भूत—आप्नोत्, आप्नुताम्, आप्नुवन् । आप्नोः, आप्नुतम्, आप्नुत
आप्नुत । आप्नुवम्, आप्नुव, आप्नुम ।

भविष्य—आप्स्यति । आप्स्यसि । आप्स्यामि ।

शक् (शक्तौ)=सकना—परस्मै०

वर्तमान—शक्नोति । शक्नोषि । शक्नोमि, शक्नुवः, शक्नुमः ।

भूत—अशक्नोत । अशक्नोः । अशक्नवम्, अशक्नुव, अशक्नुम ।

भविष्य—शक्ष्यति । शक्ष्यसि । शक्ष्यामि ।

स्तृ (आच्छादने)=ढांपना—परस्मै०

वर्तमान—स्तृणोति, स्तृणुतः, स्तृण्वन्ति । स्तृणोषि । स्तृणोमि
स्तृणुवः—स्तृण्वः, स्तृणुमः—स्तृण्मः ।

भूत—अस्तृणोत । अस्तृणुताम् । अस्तृणोः । अस्तृणवम् ।

भविष्य—स्तरिष्यति ।

स्त (आच्छादने)—आत्मने

वर्तमान—स्तणुत, स्तण्वाते, स्तण्वत । स्तणुषे । स्तण्वे ।

भूत—अस्तणुत । अस्तणुथाः । अस्तण्वि ।

भविष्य—स्तरिष्यत

चि (चयने)=चुनना, इकट्ठा करना—उभयपद

परस्मैपद

वर्तमान—चिनोति, चिनुतः । चिनोसि, चिनुथः । चिनोमि ।

भूत—अचिनोत, अचिनुताम् । अचिनोः । अचिनवम् ।

भविष्य—चेष्यति ।

आत्मनेपद

वर्तमान—चिनुते, चिन्वाते । चिनुषे । चिनुवे ।

भूत—अचिनुत । अचिनुथाः । अचिन्वि ।

(इस धातु के वकारादि और मकारादि प्रत्यय होने पर दो रूप होते हैं:—चिनुवे:—चिन्वे:,—चिनुमहे,—चिन्महे) ।

धातु

१ मि (क्षेपणे)=(फेंकना)—उभय पद—मिनोति, मिनुत। मास्यति, मास्यत। अमिनोत, अमिनुत।

२ कृ (हिंसायाम्) = (हिंसा करना)—उ० प० कृणोति, कृणुत। करिष्यति, करिष्यत, अकृणोत, अकृणुत।

३ वृ (वरणे)=(पसन्द करना)—उ० प०। वृणोति, वृणुत। वरिष्यति, वरिष्यत। अवृणोत, अवृणुत।

४ धु (कम्पने)=(हिलना) उ० प०—धुनोति, धुनुत। धोष्यति, धोष्यत। अधुनोत, अधुनुत।

वाक्य

१ सीता रामचन्द्रं अवृणोत।	सीता ने रामचन्द्र को पसन्द किया
२ अहं त्वां वरिष्यामि।	मैं तुझे पसन्द करूँगा।
३ ते तत्र गन्तुं न शक्नुवन्ति।	वे वहाँ नहीं जा सकते।
४ अहं नाशक्नुवम् तत्कर्म कर्तुम्।	मैं समर्थ नहीं था वह कर्म करने के लिये।
५ मनुष्यः स्वकर्मणः फलं अश्नुत।	मनुष्य अपने कर्म का फल भोगता है।
६ स सोमं सुनोति।	वह सोम का रस निकालता है।
७ स सुखं आप्नोति।	वह सुख प्राप्त करता है।
८ वयं सर्वे सुखं आप्नुमः।	हम सब सुख प्राप्त करते हैं।
९ स तदा वक्तुं नाशक्नोत।	वह तब बोल न सका।
१० यज्ञार्थं सोमं स न सुनुते।	यज्ञ के लिये सोम का रस वह नहीं निकालता।

१२ वस्त्रैः स पुस्तकानि स्तृणोति । कपड़ों से वह पुस्तक ढांपता है ।
१३ समुद्रस्य पारं गन्तुं स नाशक्नत । समुद्र के पार जाने के लिये वह समर्थ न हुआ ।
१४ धर्माचरणेन मनुष्यः सुखं आप्स्यति । धर्माचरण से मनुष्य सुख प्राप्त करेगा ।

पाठ सत्तावनवां

सप्तमगण के धातु

सप्तमगण का चिह्न 'न' है और वह धातु के अन्तिम स्वर के पश्चात् और अन्तिम व्यञ्जन के पूर्व लगता है ।

पिष् (संचूर्णने)=पीसना—परस्मै० ।

पिष्=(प–इ–ष्)+न=(प–इ–नष्)=पिनष्+ति= पिनष्टि । इस प्रकार रूप बनते हैं । द्विवचन बहुवचन के प्रत्ययों से पूर्व नकार के अकार का लोप होता है । जैसाः—पिनष्+ तः=पिनष—तः=पिंष्टः । षकार के पास आये हुए तकार का टकार बनता है । और नकार का अनुस्वार बन जाता है ।

वर्तमानकाल

पिनष्टि	पिंष्टः	पिंशन्ति
पिनक्षि	पिंष्टः	पिंष्ठ
पिनष्मि	पिंष्वः	पिंष्मः

भूतकाल

अपिनट्	अपिंष्टाम्	अपिंषन्
अपिनट्	अपिंष्टम्	अपिंष्ट
अपिंषम्	अपिंष्व	अपिंष्म

भविष्य—पेक्ष्यति । पेक्ष्यसि । पेक्ष्यामि ।

युज् (योगे)=उ० प०—योग करना ।

परस्मैपद

वर्तमान—युनक्ति, युंक्तः, युंजन्ति । युनक्षि, युंक्थः, । ज्युंक्थयुनज्मि, युंज्वः, युंज्मः ।

भूत—अयुनक्, अयुंक्ताम्, अयुंजन् । अयुनक्, अयुंक्तम्, अयुंक्त । अयुनजम्, अयुंज्व, अयुंज्म ।

भविष्य—योक्ष्यति ।

आत्मनेपद

वर्तमान—युंक्ते, युंजाते । युक्षे, युजाथे, युग्ध्वे । युजे, युंज्वहे, युंज्महे ।

भूत—अयुंक्त, अयुंजाताम्, अयुंजत । अयुंक्थाः अयुंजाथाम्, अयुंग्ध्वम् । अयुंजि, अयुंज्वहि, अयुंज्महि ।

(आत्मनेपद के वर्तमान भूत के सब प्रत्ययों के पूर्व नकार के अकार का लोप होता है ।)

भविष्य—योक्ष्यते ।

रुध् (आवरणे)=उ० प० आवरण करना ।

परस्मैपद

वर्तमान—रुणद्धि, रुन्द्धः, रुन्धन्ति । रुणत्सि, रुन्द्धः रुन्द्ध । रुणध्मि रुन्ध्वः, रुन्ध्मः ।

भूत—अरुणत्, अरुन्द्धमः, अरुन्धन् । अरुणत—अरुणः, अरुन्द्धम अरुन्द्ध । अरुणधम्, अरुन्ध्व, अरुन्ध्म ।

भविष्य—रोत्स्यति ।

आत्मनेपद

वर्तमान—रुन्द्धे, रुन्धाते, रुन्धते। रुन्त्से, रुन्धाथे, रुन्द्ध्वे। रुन्धे, रुन्ध्वहे, रुन्ध्महे।

भूत—अरुन्द्ध, अरुन्धाताम्, अरुन्धत। अरुन्द्धाः, अरुन्धाथाम्, अरुन्द्ध्वम्। अरुन्धि, अरुन्ध्वहि, अरुन्ध्महि।

भविष्य—रोत्स्यते।

इन्ध् (दीप्तौ)—आत्म०

वर्तमान—इन्द्धे, इन्धाते, इन्धते। इन्त्से, इन्धाथे, इन्द्ध्वे। इन्धे, इन्ध्वहे, इन्ध्महे।

भूत—ऐन्द्ध, ऐन्धाताम्, ऐन्धत। ऐन्द्धाः, ऐन्धाथाम्, ऐन्द्ध्वम्। ऐन्धि, ऐन्ध्वहि, ऐन्ध्महि।

भविष्य—इन्धिष्यते।

धातु

१ भिद् (विदारणे)=(परस्मैपद)—भेदना, भरना। भिनत्ति। अभिनत्। भेत्स्यति। (आत्म०) भिन्ते अभिन्त, भेत्स्यते।

२ भुज् (पालने)=(पालन करना, खाना) परस्मै०—भुनक्ति। अभुनक्। भोक्ष्यति। (आत्म०) भुंक्ते। अभुंक्त। भोक्ष्यते।

३ हिंस् (हिंसायाम्)=(हिंसा करना) पर०—हिनस्ति, हिंस्तः, हिंसन्ति। अहिनत्। हिंसिष्यति।

४ छिद् (द्वैधीभावे)=(काटना) परस्मै०—छिनत्ति। अछिनत्। छेत्स्यति। (आत्म०) छिन्ते, अच्छिन्त। छेत्स्यते।

वाक्य

स तव मार्गं रुणद्धि । स परशुना काष्ठं अभिनत् । महीपालः भोगान् भुनक्ति । त्वं काष्ठं छिनत्सि । कृषीवलो बलीवर्दं न हिनस्ति । स मनो युनक्ति ।

पाठ अट्ठावनवां

अष्टम गण के धातु

अष्टम गण के धातुओं के लिये 'उ' चिह्न लगता है ।

तन् (विस्तारे)=फैलाना—उभयपद

परस्मैपद

वर्तमानकाल

तनोति	तनुतः	तन्वन्ति
तनोषि	तनुथः	तनुथ
तनोमि	तनुवः	तनुमः
	तन्वः	तन्मः

भूतकाल

अतनोत्	अतनुताम्	अतन्वन्
अतनोः	अतनुतम्	अतनुत
अतनवम्	अतनुव	अतनुम
	अतन्व	अतन्म

भविष्य—तनिष्यति ।

आत्मनेपद

वर्तमान—तनुते, तन्वाते, तन्वते । तनुषे, तन्वाथे, तनुध्वे । तन्वे तनुवहे, तन्वहे, तनुमहे, तन्महे ।

भूत—अतनुत, अतन्वाताम्, अतन्वत । अतनुथाः, अतन्वाथाम्, अत-
नुध्वम् । अतन्वि, अतनुवहि—अत-
न्वहि, अतनुमहि-अतन्महि ।

भविष्य—तनिष्यते ।

कृ (करणे)=करना

परस्मैपद

वर्तमान—करोति, कुरुतः, कुर्वन्ति । करोषि, कुरुथः, कुरुथ । करोमि,
कुर्वः, कुर्मः ।

भूत—अकरोत्, अकुरुताम्, अकुर्वन् । अकरोः, अकुरुतम्, अकुरुत ।
अकरवम्, अकुर्व, अकुर्म ।

भविष्य—करिष्यति ।

आत्मनेपद

वर्तमानकाल—कुरुते, कुर्वाते, कुर्वते । कुरुषे, कुर्वाथे, कुरुध्वे । कुर्वे,
कुर्वहे, कुर्महे ।

भूत—अकुरुत, अकुर्वाताम्, अकुर्वत । अकुरुथाः, अकुर्वाथाम्, अकु-
रुध्वम् । अकुर्वि, अकुर्वहि,
अकुर्महि ।

भविष्य—करिष्यते ।

धातु

१ मन् (अवबोधने)=मानना—(आत्म०) मनुते । अमनुत ।
मनिष्यते ।

२ वन् (याचने)=मांगना—(आत्म०) वनुते । अवनुत ।
वनिष्यते ।

३ घृण (दीप्तौ)=प्रकाशना—(पर०) घृणोति । अघृणोत् ।
घृणिष्यति ।

वाक्य

त्वं किं करोषि ?	तू क्या करता है ?
स तत्र गमनं नाकरोत	उसने वहां गमन नहीं किया
ज्ञानी ज्ञानं तनुते ।	ज्ञानी ज्ञान फैलाता है ।
स न मनुते किम् ?	क्या वह नहीं मानता ?
असंशयं स तत्कर्म करिष्यति ।	निःसन्देह वह कर्म करेगा ।
स इदानीं विवादं न करिष्यति ।	वह अब विवाद नहीं करेगा
आगच्छ भोजनं कुर्वहे ।	आओ (हम दोनों) भोजन करेंगे ।
त्वं कदा स्नानं करिष्यसि ।	तू कब स्नान करेगा ।

ते इदानीं अध्ययनं कुर्वन्ति । स विज्ञानं तनुते । स न मनु‑ यूयं कि कुरुथ । वयं हवनं कुर्मः । स न भिक्षां वनुते । स तव अ‑ न मनिष्यते ।

पाठ उनसठवां

नवमगण के धातु

नवमगण के धातुओं के लिये 'ना' चिह्न लगता है ।

क्री (द्रव्यविनिमये)=खरीदना—उभयपद

परस्मैपद । वर्तमानकाल

क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति
क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ
क्रीणामि	क्रीणीवः	क्रीणीमः

भूतकाल

अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्

अक्रीणाम्	अक्रीणीव	अक्रीणीम

भविष्य—क्रेष्यति । क्रेष्यसि । क्रेष्यामि ।

आत्मनेपद । वर्तमानकाल

क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते
क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे
क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे

भूतकाल

अक्रीणीत	अक्रीणाताम्	अक्रीणत
अक्रीणीथाः	अक्रीणीथाम्	अक्रीणीध्वम्
अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि

भविष्य—क्रेष्यते । क्रेष्यसे । क्रेष्ये ।

धातु

१ पू (पवने) =शुद्ध करना—(परस्मैपद) पुनाति । अपुनात् । पविष्यति । (आत्म०) पुनीते, अपुनीत, पविष्यते ।

२ वन्ध् (बंधने)=बांधना—(परस्मै०) वध्नाति । अबध्नात् । भन्त्स्यति ।

३ ज्ञा (अववोधने)=जानना—(परस्मै०) जानाति । अजानात्, ज्ञास्यति । (आत्म०) जानीते । अजानीत । ज्ञास्यते ।

४ अश् (भोजने)=खाना—(परस्मै०) अश्नाति । अश्नात् । अशिष्यति ।

५ ग्रह् (उपादाने)=ग्रहण करना—परस्मै० । गृह्णाति । अगृह्णत् । ग्रहीष्यति । (आत्म०) गृह्णीते । अगृह्णीते । ग्रहीष्यते ।

६ प्री (तर्पणे)=तृप्त होना—(परस्मै०) प्रीणाति। अप्रीणीत्। प्रेष्यति। (आत्म०) प्रीणीते, अप्रीणीत। प्रेष्यते।

७ लू (छेदने)=काटना—(परस्मै०) लुनाति। अलुनात्। लविष्यति। (आत्म०) लुनीते। अलुनीत। लविष्यते।

८ वृ (वरणे)=पसन्द करना—(परस्मै०) वृणाति। अवृणीत्। वरीष्यति, वरिष्यति। (आत्म०) वृणीते। अवृणीत। वरिष्यते, वरीष्यते।

९ मन्थ् (विलोडने)=मन्थन करना—(परस्मै०) मथ्नाति। अमथ्नात्। मन्थिष्यति।

वाक्य

१ स वृक्षं लुनाति।	वह वृक्ष काटता है।
२ यत् त्वं ददासि तदहं गृह्णामि।	जो तू देता है वह मैं लेता हूँ।
३ स न अजानात्।	उसने नहीं जाना।
४ वायुः पुनाति सविता पुनाति।	हवा स्वच्छ करती है, सूर्य शुद्ध करता है।
५ स जलं स्तभ्नाति।	वह जल का निरोध करता है।
६ तौ पात्रं क्रीणीतः।	वे दो बरतन खरीदते हैं।
७ त्वं किमश्नासि।	तू क्या भोजन करता है।
८ स दधि मथ्नाति।	वह दही मन्थन करता है।
९ तौ किं क्रीणीतः।	वे दो क्या खरीदते हैं।